उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

हल्द्वानी

बी.ए. ज्योतिष (पंचम सेमेस्टर)

BAJY(N)-301

(CORE COURSE)

अरिष्ट-अरिष्टभंग एवं आयु विचार

मानविकी विद्याशाखा

वैदिक ज्योतिष विभाग

तीनपानी बाईपास रोड , ट्रॉन्सपोर्ट नगर के पीछे
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल - 263139
फोन नं .05946- 261122 , 261123
टॉल फ्री न0 18001804025
Fax No.- 05946-264232, E-mail- info@uou.ac.in
http://uou.ac.in

विशेषज्ञ समिति एवं अध्ययन समिति

प्रोफेसर ओमप्रकाश सिंह नेगी – अध्यक्ष
कुलपति, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

प्रोफेसर रेनू प्रकाश – निदेशक
मानविकी विद्याशाखा
उ0मु0वि0वि0, हल्द्वानी

डॉ. नन्दन कुमार तिवारी – समन्वयक
असिस्टेन्ट प्रोफेसर एवं समन्वयक, ज्योतिष विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

डॉ. प्रमोद जोशी, असिस्टेन्ट प्रोफेसर (एसी),
ज्योतिष विभाग, उ0मु0वि0वि0, हल्द्वानी

प्रोफेसर विनय कुमार पाण्डेय
अध्यक्षचर, ज्योतिष विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

प्रोफेसर श्याम देव मिश्र
अध्यक्ष, ज्योतिष विभाग, केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, लखनऊ परिसर, लखनऊ

प्रोफेसर प्रेम कुमार शर्मा
अध्यक्षचर, ज्योतिष विभाग, श्रीलालबहादुरशास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

डॉ. रत्न लाल शर्मा
अध्यक्ष, ज्योतिष विभाग, उत्तराखण्ड संस्कृत विश्वविद्यालय, हरिद्वार

डॉ. प्रभाकर पुरोहित, असिस्टेन्ट प्रोफेसर (एसी)
ज्योतिष विभाग, उ0मु0वि0वि0, हल्द्वानी

पाठ्यक्रम संयोजन एवं सम्पादन

डॉ. नन्दन कुमार तिवारी
असिस्टेन्ट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, वैदिक ज्योतिष-भारतीय कर्मकाण्ड विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय , हल्द्वानी

इकाई लेखक	खण्ड	इकाई संख्या
डॉ. रंजीत दूबे असिस्टेन्ट प्रोफेसर (एसी), वैदिक ज्योतिष विभाग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय , हल्द्वानी	**1**	1,2,3,4
डॉ. विजय रतूड़ी असिस्टेन्ट प्रोफेसर (एसी), वैदिक ज्योतिष विभाग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय , हल्द्वानी	2	1,2,3,4
डॉ. प्रमोद जोशी असिस्टेन्ट प्रोफेसर (एसी), वैदिक ज्योतिष विभाग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय , हल्द्वानी	3	1,2,3,4,5

कापीराइट @ उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

प्रथम संस्करण : 2025 **ISBN No. -**

प्रकाशक : उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी **मुद्रक :**

नोट: - इस पुस्तक के समस्त इकाईयों के लेखन तथा कॉपीराइट संबंधी किसी भी मामले के लिये संबंधित इकाई लेखक जिम्मेदार होगा। किसी भी विवाद का निस्तारण नैनीताल स्थित उच्च न्यायालय अथवा हल्द्वानी स्थित सत्रीय न्यायालय में किया जायेगा।

अरिष्ट एवं अरिष्टभंग एवं आयु विचार CORE COURSE BAJY(N)-301

बी.ए. - पंचम सेमेस्टर – (ज्योतिष)

क्रम व इकाइयों के नाम		पृष्ठ संख्या
खण्ड 1	**अरिष्ट परिचय**	**2**
इकाई 1	अरिष्ट परिचय	3-18
इकाई 2	सद्योरिष्ट योग	19-32
इकाई 3	बालारिष्ट योग	33-46
इकाई 4	योगारिष्ट योग	47-58
खण्ड 2	**मातृपितृ अरिष्ट एवं अन्य योग विचार**	**59**
इकाई 1	मातृ अरिष्ट	60-71
इकाई 2	पितृ अरिष्ट	72-83
इकाई 3	अरिष्टभंग योग	84-99
इकाई 4	चन्द्र-गुरु कृत अरिष्टभंग योग	100-113
खण्ड 3	**विविध आयु योग**	**114**
इकाई 1	अल्पायु योग	115-131
इकाई 2	मध्यमायु योग	132-150
इकाई 3	दीर्घायु योग	151-169
इकाई 4	पूर्णायु योग	170-182
इकाई 5	अमितायु योग	183-195

बी.ए. (पंचम सेमेस्टर) ज्योतिष

CORE COURSE

अरिष्ट-अरिष्टभंग एवं आयु विचार

BAJY(N)-301

खण्ड - 1
अरिष्ट परिचय

इकाई -1 अरिष्ट परिचय

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 अरिष्ट परिचय
1.4 अरिष्ट योग
बोध प्रश्न
1.5 सारांश
1.6 बोधप्रश्नों के उत्तर
1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना -

प्रस्तुत इकाई BAJY(N) – 301, खण्ड 1 के इकाई प्रथम के ज्योतिष शास्त्र केवल ग्रह-नक्षत्रों की गति और उनके प्रभाव का विज्ञान नहीं है, बल्कि यह मानव जीवन के उत्थानपतन-, सुख-दुःख, आयु और मृत्यु जैसे गहनतम रहस्यों का भी विवेचन करता है। प्राचीन आचार्यों ने इसे कहा है ''कालविद्या'', क्योंकि यह समय के रहस्यों का उद्घाटन करने में समर्थ है। इसी ज्योतिष में एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण और सूक्ष्म विचारधारा है – **अरिष्ट**। योगों के शब्द का प्रयोग उन ''अरिष्ट'' लिए किया जाता है जो जातक के जीवन में बाधाएँ, रोग, मृत्यु अथवा अशुभ परिणाम उत्पन्न करने वाले माने जाते हैं।

वस्तुतः जीवन एक संघर्ष है और संघर्ष करते हुए मनुष्य के जीवन में कई उतार-चढ़ाव आते हैं । जीवन को प्रायः पांच भागों में विभक्त किया गया है। बाल्यावस्था, कुमारावस्था, युवावस्था, वृद्धावस्था और मृत् अवस्था । इसी प्रकार से प्रकृति में पैदा होने वाले प्रत्येक जड़ या चेतन जीव का जीवन चक्र भी चलता है। जिसमें हमारे ज्योतिष शास्त्र के प्रवर्तक अष्टादश आचार्यों ने ग्रहों की स्थिति को भी बाल कुमार, युवा, वृद्ध तथा मृत् अवस्थाओं में विभक्त किया है। ज्योतिष शास्त्र ग्रहों की गति - स्थिति एवं अवस्था के अनुसार जातक की आयु का निर्धारण करता है । वास्तविक रूप से ज्योतिष शास्त्र जातक के जीवन में घटित होने वाली समस्त प्रिय - अप्रिय घटनाओं का पूर्व में जान लेने का साधन है। जातक अल्पायु है मध्यमायु है, या दीर्घायु है इसका निर्धारण ज्योतिष शास्त्र अरिष्टकाल व्यतीत होने के उपरान्त करता है । अरिष्ट आयु का वह छोटा भाग जिसमें जातक संसार को छोड़कर मृत्यु को 12 वर्ष के मध्य प्राप्त हो जाता है। अतः आप इस इकाई के माध्यम से उन समस्त घटनाओं का, ग्रहों के संयोग से होने वाले योगों का नकारात्मक प्रभाव का नाम ही अरिष्ट है ।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान लेंगे कि

- ❖ अरिष्ट योग क्या है ।
- ❖ अरिष्ट योग का विचार कैसे किया जाता है ।
- ❖ फलित ज्योतिष में अरिष्ट योग की क्या भूमिका है।
- ❖ अरिष्ट योग का निदान कैसे किया जाता है।

1.3 अरिष्ट परिचय

इस मृत्युलोक में मानव अपने कर्मानुबन्ध के अनुसार जन्म प्राप्त करता है तथा अपने जन्म-जन्मान्तर में किये गये शुभाशुभ कर्मवशात् अल्पायु, मध्यमायु या दीर्घायु को प्राप्त करता है ज्योतिष शास्त्र प्रमुख रूप से आयु का निर्धारण प्रमुखतया तीन भागों में करता है। अल्पायु, मध्यमायु और दीर्घायु। किसी जातक को मध्यमायु प्राप्त है तो उसके स्वयं के कर्मों का आधार है क्योंकि इस संसार में दृश्य एवं अदृश्य रूप से सब कर्माधीन है।" जातक अपने कर्मों के अनुरूप इस जन्म में सुख-दुःख, लाभ-हानि, व्यय - अपव्यय, राजयोग एवं दरिद्रयोग स्वयं के कर्मों से प्राप्त करता है। ठीक इसी प्रकार से व्यक्ति का दीर्घायु होना या अल्पायु होना भी जातक के जन्म-जन्मान्तरों में किये गये शुभाशुभ कर्मों का ही प्रतिफल है। वास्तव में अरिष्ट भी कुछ इसी प्रकार का ग्रहयोग है। अरिष्ट के विषय में भिन्न-भिन्न ग्रन्थों में भिन्न-भिन्न मत हैं। प्रायः बाल अरिष्ट योगों के विषय में माता-पिता द्वारा कृत कर्मानुसार मिलने वाला प्रतिफल है। वस्तुतः शोध एवं अनुसंधान के उपरान्त हमारे ज्योतिष शास्त्र के अष्टादश आचार्यों के कथनानुसार यदि जातक की मृत्यु प्रथम चार वर्ष (जन्म से प्रारम्भ कर के मध्य) में होती है तो उसमें जीव का कोई दोष नहीं है उसको दण्ड उसकी माता के कर्मों का प्राप्त होता है। क्योंकि जन्म से लेकर प्रथम चार वर्ष तक अथवा गर्भ में मृत्यु को प्राप्त होना इन सभी कारणों में माता के कर्मों की अहम् भूमिका रहती है। क्योंकि ऐसे काल में जातक माता के द्वारा खाये अन्न-जल को ग्रहण करके अपने शरीर का पोषण करता है। अतः प्रथम चार वर्ष के मध्य बालक के अरिष्ट का विचार माता के जन्मांग चक्र से करना चाहिए। क्योंकि बालक का भरण-पोषण माता के द्वारा खाये गये अन्न-जल - दूध के द्वारा होता है इसलिए प्रथम चार वर्ष तक बाल अरिष्ट हेतु माता के जन्मांग चक्र से विचार करना चाहिए।

इसी प्रकार मनुष्य की आयु भी शुभ-अशुभ कर्मों से निर्धारित होती है। यदि किसी को अल्पायु प्राप्त होती है, तो यह उसके पापकर्मों का परिणाम है और यदि कोई जातक दीर्घायु पाता है, तो यह उसके पुण्यकर्मों का प्रतिफल है। इस संदर्भ में बृहत्पाराशर होरा शास्त्र में कहा गया है—

"आयुर्भवति कर्माणां जन्मान्तरकृतस्य च।
शुभाशुभफलोपेतं कर्माणां प्रतिपत्तये॥"

अर्थात् मनुष्य की आयु उसके जन्म-जन्मान्तरों में किए गए कर्मों से निर्धारित होती है और वही कर्म शुभाशुभ फल प्रदान करते हैं।

यही स्थिति अरिष्ट योगों की भी होती है। ज्योतिष ग्रंथों में अरिष्ट को ऐसे योगों के रूप में वर्णित किया गया है जो जीवन में विघ्न, बाधा या अकाल मृत्यु का कारण बनते हैं। इनमें विशेषकर बालारिष्ट योग अत्यधिक महत्व रखता है। बालारिष्ट योग को शास्त्रों ने मुख्यतः माता-पिता के कर्मों का प्रतिफल माना है। गहन अनुसंधान और आचार्यों के कथन के अनुसार यदि किसी शिशु की मृत्यु जन्म के बाद चार वर्षों के भीतर ही हो जाती है, तो उसमें उस बालक की आत्मा का कोई दोष नहीं माना जाता। वह मृत्यु वास्तव में माता के कर्मों का फल मानी जाती है।

मातरि पापसम्भूते शिशोरल्पायुतां वदेत्।
पितरि पुण्यसम्भूते दीर्घायुः स्यात् न संशयः॥ जातक पारिजात

अर्थात् यदि माता के कर्म पापकर्मयुक्त हों तो बालक की आयु अल्प होती है, और यदि पिता के कर्म पुण्यमय हों तो बालक को दीर्घायु प्राप्त होती है।

इसका कारण यह है कि जन्म से लेकर प्रारम्भिक चार वर्षों तक शिशु पूर्णतः अपनी माता पर आश्रित रहता है। गर्भावस्था में भी वह माता द्वारा ग्रहण किए गए अन्न-जल से ही पोषण प्राप्त करता है, और जन्म के बाद भी उसका जीवन माता के दूध और आहार पर आधारित होता है। इसलिए इस अवधि में बालक के स्वास्थ्य और जीवन का संबंध सीधे-सीधे माता के कर्मों और भाग्य से जुड़ा माना गया है। यही कारण है कि ज्योतिषाचार्य यह मत प्रकट करते हैं कि जन्म के प्रथम चार वर्षों तक बालक के जीवन में यदि अरिष्ट योग उत्पन्न होता है, तो उसका विचार बालक की कुंडली के साथ-साथ माता की जन्मकुंडली से भी अवश्य करना चाहिए।

1.4 अरिष्ट योग

सन्ध्यायां हिमदीधितिहोरा पापैर्भान्तगतैर्निधनाय ।
प्रत्येकं शशिपापसमेतैः केन्द्रैर्वा स विनाशमुपैति ।।

सन्ध्या कालीन लग्न में चन्द्रमा की होरा हो और पापग्रह राशियों के अन्तिम भागस्थित होते हैं तो ऐसे समय का जातक का जन्म मृत्युप्रद होता है । अथवा केन्द्र चतुष्टय में पापग्रह, तथा किसी केन्द्रस्थ पापग्रह के साथ चन्द्रमा हो तो भी मरण होता है ।।

चक्रस्य पूर्वापरभागगेषु क्रूरेषु सौम्येषु च कीटलग्ने ।

क्षिप्रं विनाशं समुपैति जातः पापैर्विलग्नास्तमयाभिश्च ।।

जन्म कुण्डली के पूर्वार्ध में (दशम से चतुर्थ तक) अर्थात् पूर्वकपाल में विद्यमान पाप ग्रहों से तथा लग्न कुण्डली के परार्ध = पश्चिमकपाल (चतुर्थ भाव से दशम तक) में शुभग्रहों की स्थिति से भी जातक की शीघ्र मृत्यु होती है।

तथा लग्न और सप्तम से द्वितीय द्वादश स्थान स्थित पापग्रहों से भी जातक का शीघ्र मरण होता है ।।।

पापावुदयास्तगतौ क्रूरेण युतश्च शशी।
दृष्टश्च शुभैर्न यदा मृत्युश्च भवेदचिरात् ।।

लग्न सप्तमस्थ पाप ग्रहों से तथा पापयुक्त चन्द्रमा पर शुभ ग्रह की दृष्टि नहीं होने से भी जातक की शीघ्र मृत्यु होती है ।।

क्षीणे हिमगौ व्यय पापैरुदयाष्टमगैः।
केन्द्रेषु शुभाश्च न चेत्क्षिप्रं निधनं प्रवदेत् ।।

१२वें स्थान स्थित क्षीण चन्द्रमा, लग्नाष्टम स्थान स्थित पापग्रहों से, यदि शुभग्रह रहित केन्द्र स्थानों की स्थिति में भी बालक का मरण योग होता है ।।

क्रूरेण संयुतः शशी स्मरान्त्यमृत्युलग्नगः।
कण्टकाद्द्वहिः शुभैरवीक्षितश्च मृत्युदः ।।

पाप ग्रह से युक्त चन्द्रमा की सप्तम, द्वादश, अष्टम और लग्नगत की स्थिति होने से तथा केन्द्र रहित अन्य स्थान स्थित शुभ ग्रहों की दृष्टि न होने से मृत्यु योग होता है ।।

शशिन्यरिविनाशो निधनमाशु पापेक्षिते
शुभैरथ समाष्टकं दलमतश्च मिश्र : स्थितिः।
असद्भिरवलोकिते बलिभिरत्र मासं शुभे
कलत्रसहिते च पापविजिते विलग्नाधिपे ।।

लग्न से षष्ठगत या अष्टमगत चन्द्रमा पर पाप ग्रहों में किसी एक की दृष्टि और शुभ ग्रह की दृष्टि अभाव से जातक का शीघ्र मरण होता है। तथा जातक लग्न से षष्ठाष्टम चन्द्रमा पर शुभग्रहों की दृष्टि के साथ पाप ग्रहों की दृष्टि के अभाव की ग्रह स्थिति में उत्पन्न जातक की आयु प्रमाण ८ वर्ष हो

सकता है। चन्द्रमा की उक्त स्थिति पर शुभ और पाप दोनों की दृष्टि से जातक की आयु ४ वर्ष तक कही जाती है।

यदि षष्ठभाव गत शुभ ग्रहों पर पाप ग्रहों की दृष्टि होती है तो जातक का जीवन-मात्र एक मास तक का होता है।

पाप ग्रह से पराजित लग्ननाथ ग्रह यदि सप्तम भावगत होता है तब भी जातक का जीवन एक मास का होता है॥

लग्ने क्षीणे शशिनि निधनं रन्ध्रकेन्द्रेषु पापैः
पापान्तःस्थे निधनहिबुकद्यूनयुक्ते च चन्द्रे।
एवं लग्ने भवति मदनच्छिद्रसंस्थैश्च पापैर्मात्रा
सार्धं यदि च न शुभैर्वीक्षितः शक्तिभृद्भिः॥

अष्टम तथा केन्द्र स्थानगत पाप ग्रहों की स्थिति के साथ लग्न गत क्षीण चन्द्रमा से भी जातक का मरण योग होता है। पाप ग्रहों के मध्यगत होकर यदि चन्द्रमा, अष्टम-सप्तम-चतुर्थ स्थानस्थ हो तो भी जातक का मरण योग होता है। इस प्रकार की ग्रहस्थिति में लग्न की भी स्थिति हो अर्थात् पाप ग्रहों के मध्यगत लग्न सप्तमाष्टमगत पाप ग्रह होते हैं तो जातक के साथ उसको जनयित्री माता की भी मृत्यु होती है। कसी भी ग्रह स्थिति में चन्द्रमा पर बलवान् ग्रह की दृष्टि होने से जातक की मृत्यु होती है माता की मृत्यु नहीं होगी॥

राश्यन्तगे सद्भिरवीक्ष्यमाणे चन्द्रे त्रिकोणोपगतैश्च पापैः।
प्राणैः प्रयात्याशु शिशुर्वियोगमस्ते च पापैस्तुहिनांशुलग्ने॥

राशि के अन्तिम नवांशान्त्यगत चन्द्रमा पर शुभ ग्रहों की दृष्टि नहीं होने से तथा लग्न से नवम पञ्चम पर पापग्रह की स्थिति से भी जातक का मरण होता है।

तथा सप्तमस्थ पापग्रह और लग्नगत चन्द्रमा से भी जातक की मृत्यु होती है॥

असितरविशशाङ्कभूमिजैर्व्ययनवमोदयनैधनाश्रितैः।
भवति मरणमाशु देहिनां यदि बलिना गुरुणा न वीक्षिताः॥

क्रमशः शनि-सूर्य-चन्द्र और मंगल ग्रह १, २, ९, १, और ८ स्थानों में होने से जातक की शीघ्र मृत्यु हो जाती है। उक्त ग्रह स्थिति पर सबल गुरु की दृष्टि से मरण नहीं होता, बाल्य जीवन में मात्र अरिष्ट (कष्ट) कहा जा सकता है॥

सुतमदननवान्त्यलग्नरन्ध्रेष्वशुभयुतो मरणाय शीतरश्मिः।
भृगुसुतशशिपुत्रदेवपूज्यैर्यदि बलिभिर्न युतोऽवलोकितो वा॥

पापग्रहों या पापग्रह से युक्त चन्द्रमा की स्थिति ५, ७, ९, १ २ और ८ में होने से भी जातक के लिए मृत्यु कारक योग तभी संभव है जब उक्त योग के साथ शुक्र या बुध या गुरु का दृष्टि अथवा योग सम्बन्ध नहीं होगा। बुध गुरु शुक्र से युक्त या दृष्टि सम्बन्ध से जातक की मृत्यु नहीं होगी॥

योगे स्थानं गतवति बलिनश्चन्द्रे स्वं वा तनुगृहमथवा।
पापैर्दृष्टे बलवति मरणं वर्षस्यान्तः किल मुनिगदितम्॥

उक्त जिन अरिष्ट योगों में जातक का मृत्यु समय निर्देश नहीं किया गया है उस समय के ज्ञान के लिए मृत्यु या अरिष्ट योग कारक ग्रह - ग्रहों में बलवान् ग्रह के स्थित राशि में, स्वगति वशात् चन्द्र सञ्चार का जो समय होगा उस वर्ष के उसी समय में मृत्यु आदि कहनी चाहिए। अथवा जन्म राशिगत चन्द्रमा जब-जब जिस-जिस मास में आयेगा उस महीने के जन्मराशिगत की चन्द्रसञ्चार की मासिक राशि गत चन्द्रमा की स्थिति में मृत्यु हो सकती है। अथवा एक वर्ष के भीतर चन्द्रस्थित राशि पर बलवान् पापग्रह दृष्टि योग की स्थिति के समय मृत्यु हो सकती है॥

दो वर्ष पर्यन्त आयु योग

वक्री तिष्ठति भास्करिः कुजगृहे केन्द्रारिरन्ध्रे कुजे
नो दृष्टे शुभदेन वा क्षतमृतिस्थानेशयोः कण्टके।
वक्री मन्दगतिर्महीजभवने वीर्यान्वितेनेक्षिते
माहेयेन भवोऽर्भको यमगृहं वर्षद्वयेन व्रजेत्॥

मंगल की राशि में वत्री शनि हो; केन्द्र, षष्ठ या अष्टम स्थान में मंगल हो और वह शुभ ग्रहों से दृष्ट हो।

षष्ठेश तथा अष्टमेश केन्द्र में हो तथा मंगल की राशि में वक्री शनि हो तथा उसे बलवान मंगल देखता हो।

इन योगों में उत्पन्न बालक दो वर्षों के अन्दर यमलोक चला जाता है।

मंगल एवं शनि परस्पर विस्फोटक, युद्धकारक शत्रु ग्रह हैं। यदि वक्री शनि मंगल की राशि में हो तथा मंगल ६, ८ स्थानों या केन्द्र स्थानों में हो तथा मंगल शुभ दृष्ट हो तो मृत्युद योग बनेगा। ऐसी स्थिति में भी हमारे विचार से यदि बृहस्पति बली हो तो जीवन बचने की सम्भावनाएं होंगी ही तथा बृहस्पति यदि लग्न या चन्द्रमा को देखता भी हो तो अवश्य ही अरिष्ट भंग होगा। अरिष्ट भंग के विषय में आगे विस्तार से चर्चा करेंगे।

तीन वर्ष पर्यन्त आयु योग

सोग्राङ्गेशे धैर्य्यधर्म्मद्विषद्दे देवेन्द्रेज्ये द्वादशे कण्टके वा।
कर्काङ्ग ग्लौमङ्गलौ केन्द्रकालैः खेटोनैर्वा ऽत्यन्त कृष्णोडुनाथे॥
कायाधीशात्कालगे सर्वपापैर्दृष्टे नो सत्खेचरेर्वारराशौ।
वाचामीशे याम्यगे वीक्ष्यमाणेऽब्जा किनारै रास्फुजिद्दृग्विमुवते॥

तीसरे, छठे या नवें स्थान में पापग्रह से युक्त लग्नेश हो और केन्द्र अथवा व्यय स्थान में बृहस्पति हो।

कर्क लग्न में चन्द्र व मंगल हो तथा केन्द्र व अष्टम स्थानों में कोई ग्रह न हो।

लग्नेश जिस स्थान में हो, उस स्थान से आठवें स्थान में यदि बहुत क्षीण चन्द्रमा हो तथा उस पर सब पापग्रहों की दृष्टि हो, शुभग्रह की दृष्टि न हो। अष्टम में भौमराशिगत गुरु, चन्द्र, सूर्य, शनि, मंगल से दृष्ट तथा शुक्र से अदृष्ट हो तो इन योगों में जातक की आयु तीन वर्ष तक होती है।

किं वा खले लग्नगते विलग्ने बलेन होने परिवेषकाले।
दिवाकरे दुग्रहणे जनिश्चेद्वर्षत्रयेणैति शिशुः कृतान्तम्॥

लग्न में पाप ग्रह विद्यमान हो, लग्न निर्बल हो तथा परिवेष काल या सूर्य चन्द्र के ग्रहण के समय जन्म हो तो भी जातक तीन वर्ष में यमलोक जला जाता है।

धिषणेऽ कगते शरीरपाले सखले कण्टककण्ठभाग्यभीषु।
किमघांश भगावचारुदृष्टावनुजे चन्द्ररवी मृतिस्त्रिवर्षैः॥

बृहस्पति द्वादश स्थान में हो तथा लग्नेश केन्द्र, तृतीय, षष्ठ या नवम स्थान में हो।

तीसरे स्थान में पापग्रह के नवांश में या पापग्रह की राशि में सूर्य व चन्द्रमा हों, उन पर पापग्रहों की दृष्टि हो।

इन योगों में उत्पन्न बालक की मृत्यु तीन वर्षों में हो जाती है।

वपुविभो वधङ्गते कृशेन्दुकल्मषेक्षिते।
न निर्मलेक्षिते शिशोर्मा तिर्भवेत्त्रिवत्सरैः॥

लग्नेश अष्टम स्थान में स्थित होकर, क्षीण चन्द्रमा व अन्य पापग्रहों से दृष्ट हो और शुभ ग्रहों की उस पर दृष्टि न हो तो इस योग में उत्पन्न बालक की आयु तीन वर्ष होती है।

चार वर्ष की आयु के योग

शाशासिज्ञे शशिनेक्षिते स-शशाङ्भे शात्रवसम्प्रहारे।
समस्तसारेण युतोऽपि जातो व्रजेद्विनाशं श्रतितुल्यवर्षेः॥

छठे या आठवें स्थान में कर्क राशि में बुध हो तथा उस पर चन्द्रमा की दृष्टि हो तो बालक समस्त प्रयत्नों के बावजूद भी चार वर्षों में मृत्यु को प्रप्त हो जाता है।

इस योग को कल्याण वर्मा ने भी कहा है-

'कर्कटधामनि सौम्यः षष्ठाष्टम संस्थितो विलग्नर्क्षात्।
चन्द्रेण दृष्टमूर्तिवर्ष चतुष्केण मारयति॥ सारावली

कर्कराशि का बुध षष्ठ या अष्टम स्थान में स्थित हो तथा चन्द्रमा से दृष्ट हो तो चार वर्षों में बालक मर जाता है।

केन्द्राश्रिते नष्टकाले कलेशेऽस्मायंन्वयेक्षावति कि रणेऽरौ।
पौरे ज्ञ उप्रैः परिपीडिते सारिभे शिशोख्त उदन्यदब्दैः॥

क्षीण चन्द्रमा यदि केन्द्र स्थानों में हो तथा उस पर मंगल व शनि की दृष्टि हो या इनसे युक्त हो।

लग्न, षष्ठ या अष्टम स्थान में शत्रुराशि गत बुध हो और पाप ग्रहों से आक्रान्त हो।

इन योगों में जातक की आयु चार वर्ष होती है।

निशाविमौ भये क्षये निरीक्षिते शुभाशुभैः।

यमस्य मन्दिरं व्रजेच्छिशुः समुद्रहायनैः ॥

षष्ठ या अष्टम स्थान में चन्द्रमा हो तथा उस पर शुभ व अशुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो बालक चार वर्षों में यमगृह में चला जाता है।

सारावली में इस योग के तीन भेद बताए गए हैं-षष्ठाष्टम में चन्द्रमा यदि पाप ग्रहों से दृष्ट हो तो एक वर्ष में निधन हो जाता है। यदि शुभग्रहों से दृष्ट हो तो अष्टम वर्ष में मृत्यु होती है तथा शुभाशुभ ग्रहों से दृष्ट होने पर चौथे वर्ष में मरण होता है-

वर्षान्मारयति शशी षष्ठाष्टम राशिसंस्थितो विलग्नात् ।
सद्यः क्रूरैः दृष्टः सौम्यैरब्दाष्टकाच्चैव ॥
अशुभैः शुभैः च दृष्टो वर्षचतुष्केण निर्दिशेदन्तम् ।
अनुपातः कर्त्तव्यः प्रोक्ता दूर्ग्रहैः दृष्टे ॥ (सारावली,)

इसके अतिरिक्त भी एक विशेष बात बताई गई है कि दृष्टि के भेद से अर्थात् कम या अधिक ग्रहों की दृष्टि होने पर आयु वर्षों का साधन अनुपात द्वारा कर लेना चाहिए।

सारावली व जातकाभरण दोनों ही ग्रन्थों में शुभाशुभ ग्रहों से दृष्ट होने पर मृत्यु का समय जानने के लिए ग्रहों की न्यूनाधिक दृष्टि से अनुपात द्वारा मरण समय का निश्चय करने का निर्देश है।

छह वर्ष की आयु के योग

सिंहे कर्कणि वासिते गतमलैः सर्वैः प्रदृष्टे ततो
मन्दे नेमिनवांशके शशभृता संवीक्षितेऽङ्गेय्यपि ।
दृष्टे शीतगुनाऽथ शत्रुभवनेऽर्केऽर्थत्रिकरथेऽथवा
देहेऽर्थे दिवि बान्धवे सदहने षड्वत्सरैः पञ्चता ॥

कर्क या सिंह राशि में शुक्र हो तथा उसे सारे शुभ ग्रह देखते हों।

चन्द्रमा के नवांश में शनि हो तथा उस पर चन्द्रमा की दृष्टि हो और लग्नेश भी चन्द्रमा से दृष्ट हो।

दूसरे स्थान या त्रिक स्थान में शत्रु की राशि में सूर्य हो, लग्न, द्वितीय, सप्तम और दशम इन चारों स्थानों में पापग्रह हों।

इन योगों में उत्पन्न बालक की आयु छह वर्ष होती है।

कर्क या सिंह राशिगत शुक्र यदि षष्ठाष्टम द्वादशस्थानों में हो तभी मारक माना जाना चाहिए, ऐसा मत कल्याणवर्मा व जातकाभरण का है। ग्रन्थकार ने शुक्र की स्थिति उक्त राशियों में सामान्यतः सवत्र ही मृत्युप्रद मानी है।

भानौ भानवभे मृदौ मिहिरभे तद्वज्जनूरशिपो
जायस्थोऽघसमागमं शशभृतं पश्येदहिः किं कृशम्।
वर्षैः षड्भिरिभैर्मृतिः समुदितास्तेऽब्जे कृशे कायगाः
कृष्णादित्यकुजाः शिशोर्मू तिकृतः षष्ठे किमन्दे नगे॥

शनि की राशि में सूर्य हो तथा सूर्य की राशि में शनि हो।

जन्मराशीश का स्वामी सातवें स्थान में हो तथा पापयुक्त या क्षीण चन्द्रमा को राहु देखता हो।

सातवें में क्षीण चन्द्रमा हो और लग्न में शनि, सूर्य तथा मंगल हो।

इन समस्त योगों में उत्पन्न बालक की आयु छह या सात वर्ष होती है।

लग्नेऽङ्ग पाले सखलेऽसितेक्षिते युपध्वजे नाष्टमगे विलग्नभे।
सन्धौ सतीहाङ्गमिते गजोन्मिते वर्षे शिशोरन्त उतार्कसम्मिते॥

लग्न में पापग्रहों से युक्त लग्नेश हो तथा उस पर शनि की दृष्टि हो, गुरु आठवें स्थान में न हो, कदाचित् लग्न की किसी सन्धि में स्थित हो तो छठे, आठवें या बारहवें वर्ष में बालक का मरण होता है।

सात वर्ष पर्यन्त आयु योग

क्षीणोऽजो मदने घने तपनभूभारैर्न गौरक्षितैः
कि सोमः सितभे क्षयी न गुरुणा दृष्टोऽत्रमित्रेनजैः।
देहस्थैरथ पामरे स्मरपुरेऽजेऽङ्गेऽघदृष्टान्विते-
ऽङ्गेशेऽथायुषि पावके पुरपतौ नो पुण्ययुक्तेक्षिते॥

सातवें स्थान में क्षीण चन्द्रमा हो, लग्न में शनि हो तथा शुक्र मंगल' भी इनके साथ हों, बृहस्पति की दृष्टि न हो।

वृष या तुला राशि में क्षीण चन्द्रमा हो, गुरु की उस पर दृष्टि न हो तथा लग्न में शनि, मंगल व सूर्य हों।

लग्न या सप्तम में पापग्रह हो, लग्न में चन्द्रमा हो और लग्नेश पापग्रहों से युक्त या दृष्ट हो।

आठवें स्थान में पाप ग्रह हो और केन्द्र में पापयुक्त लग्नेश हो तथा उस पर शुभ ग्रहों की दृष्टि या युति न हो तो बालक की आयु सात वर्ष समझनी चाहिए।

साधे केन्द्रगतेऽय कल्मषदृशा युक्ते वृषाग्यस्थिर-
प्राग लग्ने सतमेऽथ पाशनिगडब्याल द्विजत्यंशकाः।
लग्ने नेशनिरीक्षिताः सदुरिता मृत्युर्नगाब्दैर्गुरुः
क्रूरक्षेऽस्तमितेऽङ्ग-पेऽयमुदितोऽकर्माऽगवर्षे तिः॥

सिंह, वृश्चिक या कुम्भ लग्न में जन्म हो, लग्न में राहु हो और उस पर पापग्रहों की दृष्टि हो।

लग्न में पाश, निगड, सर्प तथा पक्षी द्रेष्काण हो और द्वेष्काणेश की वहां दृष्टि न हो तथा पाप ग्रहों से युक्त हो।

क्रूर राशि में बृहस्पति हो और लग्नेश अस्तंगत हो तो बालक अकर्मा होकर सातवें वर्ष में शरीर त्याग देता है।

सारावली में भी द्रेष्काण सम्बन्धी इस योग को इसी प्रकार से बताया गया है—

लग्ने यद्वेक्काणा निगडा हिविहंगपाशधरसंज्ञाः।
मरणाय सप्तवर्षैः क्रूरयुता न स्वपतिदृष्टाः॥

यदि लग्न में निगड, सर्प, पक्षी, पाशधर संज्ञक द्रेष्काण हो तथा ये अपने स्वामी से अदृष्ट और क्रूर ग्रहों से युक्त हों तो सातवें वर्ष में मृत्यु हो जाती है।

आठ वर्ष पर्यन्त आयु योग

कामेऽर्के हरिजे कुजे किमुडुपेऽथो किल्विषे कालगे
वीर्य्यने हिमगावथो पथि मतौ सोग्रे न सल्लोकिते।
रन्धेरौ सशुभे खलग्रहदशा युवतेऽथ लग्ने कृशे
चन्द्रेऽधैमृति गैरुतामृतगतैर्वर्षेऽष्टमे स्याल्लयः॥

सातवें स्थान में सूर्य, लग्न में मंगल या चन्द्रमा हो।

आठवें स्थान में पापग्रह तथा चन्द्रमा निर्बल हों।

त्रिकोण (५, ६) स्थानों में पापग्रह हों तथा उन पर शुभग्रहों की दृष्टि न हो तथा छठे व आठवें स्थान में शुभग्रह हों तथा उन पर पापग्रहों की दृष्टि हो।

लग्न में क्षीण चन्द्रमा हो और चौथे, आठवें स्थान में पापग्रह हों।

इन योगों में उत्पन्न होने पर बालक आठवें वर्ष में मृत्यु को प्राप्त करता है।

तनोरष्टमगो राहुर्मन्दो वा भानुनेक्षितः।
सौम्येन चाष्टमे वर्षे मृतिकृद् द्वादशेऽथवा॥

आठवें स्थान में राहु या शनि हो तथा उस पर सूर्य तथा अन्य शुभग्रहों की दृष्टि हो तो आठवें या बारहवें वर्ष में मरण हो जाता है।

चन्द्र-अरिष्ट की विशेष व्यवस्था

त्रिभिः खलैरेकशुभेन दृष्टे रन्धारिंगे राजनि वर्षमेकम्।
जीवेच्छिशुस्तत्र विधौ प्रदृष्टे द्वाभ्यां शुभाभ्यां त्रिभिरुग्रखेदैः॥

जन्म के समय षष्ठ व अष्टम में चन्द्रमा हो तथा उसे तीन पाप ग्रह देखें तथा एक शुभग्रह भी दृष्टि कर रहा हो तो बालक की आयु एक वर्ष समझनी चाहिए।

यदि षष्ठ व अष्टम गत चन्द्रमा को तीन पापग्रह व दो शुभग्रह देखते हों तो बालक की आयु दो वर्ष समझनी चाहिए।

वर्षद्वयं जीवति तत्र चन्द्रे दृष्टे समानोत्तमपापखेटैः।
जीवेच्छिशुर्वर्षचतुष्कमिन्दी तत्र विसौम्यैर्दुरितद्वयेन॥१०४॥
निरीक्ष्यमाणे यदि वर्षपञ्चकं जीवेद्विधौ तत्र निरीक्षिते त्रिभिः।
शुभैस्तथैकेन खलेन जीवति नगोन्मितेऽब्दे पृथुकोऽत्र सम्भवः॥

यदि षष्ठ व अष्टम गत चन्द्रमा को जितने पापग्रह देख रहे हों, उतने ही शुभग्रह भी देखें तो बालक का जीवन चार वर्षों का होता है।

यदि इन्हीं स्थानों में चन्द्रमा तीन शुभग्रहों व दो पापग्रहों से दृष्ट हो तो पांच वर्ष की आयु होती है।

यदि इसी स्थिति में चन्द्रमा तीन शुभग्रहों से दृष्ट होकर एक पापग्रह से भी दृष्ट हो तो सात वर्ष आयु होती है।

तत्र शीतद्य तावे कसौम्येनावेक्षिते यदि।
नावलोकित उग्रेण जीवेद्वर्षाष्टकं शिशुः॥

यदि षष्ठ व अष्टम स्थानगत चन्द्रमा को कोई भी पाप ग्रह न देख रहा हो तथा एक शुभग्रह की उस पर दृष्टि हो तो बालक की आयु आठ वर्ष होती है।

बोध प्रश्न

1. ज्योतिष शास्त्र में "अरिष्ट" का सामान्य अर्थ क्या है?
   (क) शुभ फल (ख) अशुभ योग या विपत्ति (ग) विवाह संबंधी योग
   (घ) शिक्षा प्राप्ति
2. "अरिष्ट" शब्द का शाब्दिक अर्थ है—
   (क) पूर्ण आयु (ख) पराक्रम (ग) धनलाभ (घ) मृत्यु, रोग या अनिष्ट
3. अरिष्ट योगों में विशेष रूप से किस ग्रह की निर्बलता जीवन के लिए अधिक हानिकारक मानी जाती है?
   (क) शुक्र (ख) (ग) बुध (घ) चन्द्रमा
4. निम्नलिखित में से कौन-सा अरिष्ट का प्रकार नहीं है?
   (क) बलारिष्ट (ख) योगारिष्ट (ग) राजयोग (घ) सद्यरिष्ट

1.6 संराश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जान लिया है कि ज्योतिष शास्त्र में "अरिष्ट" शब्द अशुभ और अनिष्ट सूचक योगों के लिए प्रयुक्त होता है। जब जन्मकुंडली में ग्रह और भाव इतने निर्बल या पापयुक्त हों कि जातक का जीवन अशांति, रोग, अकाल मृत्यु अथवा गंभीर बाधाओं से घिर जाए, तब ऐसे योग को अरिष्ट कहा जाता है। अरिष्ट की चर्चा केवल ज्योतिष में ही नहीं, बल्कि आयु-निर्णय संबंधी संपूर्ण ज्योतिषीय परंपरा में विशेष स्थान रखती है। आयु विचार का प्रारंभ सदैव

अरिष्ट योगों की खोज से किया जाता है, क्योंकि यदि जन्मकाल में ही अरिष्ट उपस्थित हो तो जातक दीर्घजीवन प्राप्त नहीं कर सकता।

अरिष्ट योग मुख्यतः तीन प्रकार के माने गए हैं- बलारिष्ट, योगारिष्ट और सद्यरिष्ट । बलारिष्ट वह है जो बाल्यकाल में मृत्यु अथवा गंभीर रोग की संभावना बताता है। योगारिष्ट वह है जो जीवन के किसी भी चरण में असामयिक मृत्यु की ओर संकेत करता है। वहीं सद्यरिष्ट सबसे तीव्र योग है, जिसमें जातक जन्म लेते ही अथवा शीघ्र ही मृत्यु को प्राप्त होता है। इन तीनों में बलारिष्ट का उल्लेख सर्वाधिक किया गया है, क्योंकि शैशव और बाल्यकाल जीवन का सर्वाधिक असुरक्षित समय होता है ।

बलारिष्ट की समय-सीमा को लेकर आचार्यों के मत अलग-अलग हैं। बृहत्पाराशर होरा शास्त्र में कहा गया है कि यदि लग्नेश पापग्रह से पीड़ित हो, चन्द्रमा अष्टमभाव में स्थित हो और उस पर शुभ दृष्टि न हो तो जातक शीघ्र मृत्यु को प्राप्त होता है। यहाँ "शीघ्र मृत्यु" का आशय जन्म से लेकर बारह वर्ष की अवस्था तक माना गया है। जातकपारिजात में इसे आठ वर्ष तक सीमित किया गया है। फलदीपिका के रचयिता मन्त्रेस्वर ने पाँच से बारह वर्ष तक का समय विशेष रूप से असुरक्षित माना है। वहीं सारावली के आचार्य कल्याणवर्मा का कथन है कि जब तक बालक की जीवनशक्ति स्थिर न हो, बलारिष्ट की आशंका रहती है, और यह स्थिरता सामान्यतः बारहवें वर्ष तक प्राप्त होती है।

इन मतों से यह स्पष्ट है कि विद्वानों ने बलारिष्ट की सीमा भिन्न-भिन्न बताई है – किसी ने पाँच, किसी ने आठ और किसी ने बारह वर्ष तक। लेकिन सबका मूल निष्कर्ष यही है कि जन्म के बाद का प्रारंभिक काल जातक के लिए सबसे अस्थिर और संवेदनशील समय है। यही कारण है कि शास्त्र में इस काल को "अरिष्टकाल" कहा गया है।

शास्त्रों ने अरिष्ट के कारणों को भी स्पष्ट किया है। सूर्य और चन्द्र जीवन और प्राणशक्ति के मुख्य कारक माने गए हैं। यदि ये निर्बल हों, पापग्रहों से पीड़ित हों या शुभग्रहों का संरक्षण न हो, तो अरिष्ट उत्पन्न होता है। इसी प्रकार आयुष्कारक शनि और अष्टमेश का दोष भी अरिष्ट योग का कारण बनता है। लग्नेश और चन्द्रमा यदि दोनों ही पापयुक्त हों तो जीवन की स्थिरता नष्ट हो जाती है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि ज्योतिष शास्त्र में अरिष्ट का अध्ययन केवल आयु की गणना का साधन नहीं, बल्कि जीवन के अस्थिर और संवेदनशील पक्ष को समझने का माध्यम भी है। अरिष्ट का यह विवेचन हमें यह भी सिखाता है कि जीवन की रक्षा और उसका पोषण केवल शारीरिक नहीं, बल्कि कर्म और संस्कारों से भी गहराई से जुड़ा हुआ है। यही कारण है कि शास्त्रों ने

बलारिष्ट को विशेष महत्त्व दिया और विभिन्न आचार्यों ने इसकी अवधि अलग-अलग होते हुए भी उसे बाल्यकाल तक सीमित बताया।

1.6 बोधप्रश्नों के उत्तर

1.(ख)

2. (घ)

3. (घ)

4. (ग)

1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

वृहज्जातकम् - चौखम्भा प्रकाशन

वृहत्पराशरहोराशास्त्र - चौखम्भा प्रकाशन

ज्योतिष सर्वस्व – चौखम्भा प्रकाशन

सरावली- चौखम्भा प्रकाशन

आयुर्निर्णय – डा. सुरेशचन्द्र मिश्र

1.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. अरिष्ट योग में लग्न व चन्द्रमा की क्या भूमिका होती है? उदाहरण देकर स्पष्ट कीजिए।
2. जन्मकुंडली में अरिष्ट योग की पहचान किन लक्षणों से की जाती है?
3. अरिष्ट योग की परिभाषा लिखिए और इसका ज्योतिषीय योग को स्पष्ट कीजिए।

इकाई -2 सद्योरिष्ट योग

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना

2. 2 उद्देश्य

2.3 सद्योरिष्ट परिचय

2.4 सद्योरिष्ट योग

बोध प्रश्न

2.5 सारांश

2.6 बोधप्रश्नों के उत्तर

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

2.8 निबन्धात्मक प्रश्न

2. 1 प्रस्तावना -

प्रस्तुत इकाई BAJY(N) – 301, खण्ड 1 के इकाई 2 के ' सद्योरिष्ट योग' से सम्बन्धित है। आप यह जानने कि कोशिस करेंगे कि भारतीय ज्योतिष शास्त्र केवल भविष्यवाणी की विद्या नहीं है, बल्कि यह जीवन और मृत्यु के गहन रहस्यों का उद्घाटन करने वाली एक दार्शनिक विज्ञान परंपरा भी है। वेदों से लेकर पुराणों और होरा शास्त्रों तक, मानव जीवन की अनिश्चितताओं को समझने के लिए ज्योतिष को अत्यंत महत्वपूर्ण साधन माना गया है। जन्मकुंडली में ग्रहों की स्थिति केवल सुख-दुःख, धनवैभव या पारिवारिक जीवन का ही संकेत नहीं देती-, बल्कि यह भी दर्शाती है कि किसी जातक का जीवन कितना लंबा, स्वस्थ और सुरक्षित रहेगा।

ज्योतिष में जब हम "अरिष्ट" शब्द का प्रयोग करते हैं, तो उसका अर्थ होता है—ऐसे योग या संयोजन जो जीवन को खतरे में डालते हैं, आयु को बाधित करते हैं अथवा अल्पायु का संकेत करते हैं। इन्हीं अरिष्ट योगों में से एक अत्यंत गंभीर और भयावह योग है सद्योरिष्ट। "सद्य" का अर्थ होता है—तुरंत, तत्काल या शीघ्र; और अरिष्ट का तात्पर्य है—जीवन विनाशकारी दोष। इस प्रकार सद्योरिष्ट योग का शाब्दिक अर्थ है—ऐसा अरिष्ट योग जिसके प्रभाव से जातक का जीवन जन्म के तुरंत बाद अथवा अत्यंत अल्प समय में समाप्त हो सकता है।

भारतीय ज्योतिष में इसे सबसे गंभीर अरिष्ट योगों में गिना गया है। शास्त्रों में कहा गया है कि यदि जन्मकुंडली में सद्योरिष्ट योग स्पष्ट रूप से विद्यमान हो, तो जातक के दीर्घजीवन की संभावना अत्यंत कम होती है। यही कारण है कि पाराशर, वराहमिहिर, केतकर, माणित्थ, वत्स्यायन आदि महान ज्योतिषाचार्यों ने इस विषय पर विशेष चर्चा की है।

2.2 उद्देश्य

- ❖ सद्योरिष्ट योग क्या है।
- ❖ सद्योरिष्ट योग का विचार कैसे किया जाता है।
- ❖ फलित ज्योतिष में सद्योरिष्ट योग की क्या भूमिका है।

2.3 सद्योरिष्ट परिचय

ज्योतिष शास्त्र में मानव जीवन की आयु का निर्धारण एक अत्यंत महत्वपूर्ण विषय माना गया है। शास्त्रकारों ने जन्म कुंडली में ग्रह-नक्षत्रों की स्थिति के आधार पर यह विचार किया है कि जातक दीर्घायु होगा, मध्यमायु होगा या अल्पायु। किंतु जब किसी कुंडली में ऐसे योग बनते हैं, जो

जन्म के आरंभिक काल में ही मृत्यु या गंभीर संकट का संकेत देते हैं, तब उन योगों को सद्यरिष्ट कहा जाता है। "सद्य" का अर्थ है – तत्क्षण या शीघ्र, और "अरिष्ट" का अर्थ है – अनिष्ट या विपत्ति। इस प्रकार सद्यरिष्ट योग वे योग हैं जिनमें जातक के जीवन का अंत जन्म के तुरन्त बाद अथवा प्रारंभिक वर्षों में हो सकता है।

शास्त्रकारों ने यह भी माना है कि बाल्यावस्था में मृत्यु या कष्ट केवल जातक के कर्मों से ही नहीं, बल्कि उसकी माता-पिता के कर्मों से भी जुड़ा होता है। जन्म के पहले चार वर्षों तक बालक पूर्ण रूप से माता पर आश्रित रहता है – उसका आहार, उसका पोषण और उसका पालन-पोषण सब मातृस्रोत से ही प्राप्त होता है। इसीलिए यदि उस काल में मृत्यु होती है तो वह माता के पूर्वकर्मों के फलस्वरूप मानी जाती है। बृहत्पाराशर

2.4 सद्योरिष्ट योग

चक्रस्य पूर्वार्द्धक उग्रखेटाः पुण्याः पराद्धेऽलिकुलोरलग्ने ।
मृत्युः शिशोर्लघ्वथ पंकखेटेर्लयार्थगैः प्रान्त्यविपक्षगैश्च ॥
तथाऽङ्गनाभेऽङ्ग-निकेतने च खलान्तरालेऽथ मदोदयस्थाः ।
पंकाः सपंके हिमगौ न पुष्यैरालोकिते द्राङ्मृतिमेति बालः ॥

(१) जन्मकुण्डली के पूर्वार्ध में पाप ग्रह हों तथा परार्ध में शुभ ग्रह हों तथा लग्न में वृश्चिक या कर्क राशि हो तो बालक की शीघ्र मृत्यु होती है।

(२) द्वितीय, षष्ठ, अष्टम व द्वादश स्थानों में पाप ग्रह हों तो भी उक्त योग बनता है ।

(३) लग्न व सप्तम दोनों ही पाप ग्रहों के अन्तराल में हों ।

(४) अथवा इन स्थानों में पाप ग्रह हों और चन्द्रमा पाप युक्त होकर किसी भी शुभ ग्रह द्वारा दृष्ट न हो तो बालक का शीघ्र ही मरण होता है।

वधोदयस्थैर्मलिनैः शुभा नो के द्रेषु चन्द्रे चरमे कृशे किम् ।
कामान्त्यकालोदयगः कलावाञ्छुभैरदृष्टः सहितः खलेन ॥
कल्याणहीनेषु चतुष्टयेषु किं चेतनाचार्य्यगतै रसौम्यः ।
भनायके भान्तगते न भव्यैङ्गुष्टे किमगोपगतो भनाथः ॥

क्रूरैः स्मरेऽथारयमेन्दुभास्करै दिष्टान्तरिः फो दय दानगैः क्रमात् ।
नालोकितै वय्यं वतेन्द्र मंत्रिणाऽविलम्बितं याम्यपदं शिशुर्व्रजेत् ॥

(१) मृत्यु स्थान व लग्न में पापग्रह हों, केन्द्र स्थानों में शुभ ग्रह न हों तथा व्यय स्थान में क्षीण चन्द्रमा हो।

(२) सातवें, बारहवें, आठवें व लग्न में पापग्रहों से युक्त चन्द्रमा हो, केन्द्र में शुभ ग्रह न हों तथा चन्द्रमा पर शुभ ग्रहों की दृष्टि न हो।

(३) पांचवें व नवें त्रिकोण स्थानों में पापग्रह हों तथा चन्द्रमा अपनी राशि के तीसवें अंश में हो तथा शुभ ग्रहों की उस पर दृष्टि न हो।

(४) लग्न में चन्द्रमा तथा सातवें भाव में क्रूर ग्रह हों।

(५) आठवें स्थान में मंगल, बारहवें स्थान में शनि, लग्न में चन्द्रमा तथा नवम स्थान में सूर्य हो तथा इनमें से किसी पर भी बलवान वृहस्पति की दृष्टि न हो।

इनमें किसी एक या अधिक योगों के होने पर बालक शीघ्र मृत्यु को प्राप्त होता है।

उपर्युक्त योग के विषय में सारावली में कहा गया है कि लग्न में यदि बलवान चन्द्रमा कर्क, वृष या मेष राशि में हो तो यह योग भंग हो जाता है।

क्षीणशरीरश्चन्द्रो लग्नस्थः क्रूरवीक्षितः कुरुते ।
स्वर्गगमनं हि पुंसां, कुलीरगोऽजान्परित्यज्य ।। (सारावली)

यदि क्रूरग्रह से दृष्ट क्षीण चन्द्रमा मेष, वृष तथा कर्क राशि को छोडकर लग्न में स्थित हो, तो शीघ्र ही जातक की मृत्यु करता है।

उपर्युक्त सभी योगों में तथा समान प्रकृति के अन्य योगों में भी चन्द्रमा की स्थिति निर्णायक होती है, क्योंकि आचार्यों ने चन्द्रमा को प्राणरूप माना है। सामान्यतः चन्द्रमा, लग्नेश तथा राशीश की पीड़ित, दुर्बल अवस्था, उन पर क्रूर ग्रहों की दृष्टि, इनकी दुष्ट स्थानों में स्थिति तथा इन पर शुभ ग्रहों की दृष्टि न होना, ये सब स्थितियां निष्कर्ष रूप में अरिष्टकारक समझनी चाहिए। विशेषतया चन्द्रमा षष्ठ या अष्टम भाव में हो तथा उस पर पाप ग्रहों की दृष्टि हो तथा चतुर्थ स्थान में राहु हो तो मृत्युकारक योग बनता है। इन सबकी पुष्टि जातकाभरण, वृहज्जातक व सारावली आदि ग्रन्थों में की गई है।

पापा त्रिकोण केन्द्रे सौम्याः षष्ठाष्टमव्ययगताश्च।
सूर्योदये प्रसूतः सद्यः प्राणांस्त्यजति जन्तुः॥ (सारावली)

यदि जन्मलग्न से केन्द्र तथा त्रिकोण में पापग्रह और 6।8।12 स्थान में शुभग्रह हों तथा सूर्योदयकाल में जन्म हो तो वह बालक शीघ्र ही मृत्यु को प्राप्त होता है।

त्रिके हितेऽहावुडुने वत्रे वगे तथा चुरे गुह्यगदे कला निधी।
चतुष्टयेऽथेज्यनवांशमाश्रिते यमेऽहिदृष्टे न शुभेक्षतेऽङ्गपे॥
तथाऽहिलीनभुवः समस्ता दृष्टा मृतीशेन विमूढयुक्ताः।
क्रूरांशगावा सचिवे युधीने दानेऽम्बुनीन्दौ व्ययगे तथार्के॥

(१) त्रिक स्थानों (६, ८, १२) या चतुर्थ स्थान में राहु हो, षष्ठ या अष्टम स्थानों में चन्द्रमा हो।

(२) केन्द्रगत चन्द्रमा हो तथा षष्ठ या अष्टम में केतु हो।(५) आठवें स्थान में गुरू, नवें या चौथे स्थान में सूर्य तथा बारहवें स्थान में चन्द्रमा हो।

इन सब योगों में जातक के शीघ्र मरण का योग होता है।

बहूप्रदृष्टे सकुजैनिराशौ खगे झटित्यन्तमुपैति पोतः।
मृत्यावुतारौ युगपच्छनीनारादृष्टयुक्ता न शुभैस्तथा स्यात्॥

दसवें स्थान में मेष, वृश्चिक, मकर या कुम्भ में सूर्य हो तथा उस पर बहुत से पाप ग्रहों की दृष्टि हो तो बालक का शीघ्र अन्त हो जाता है।

षष्ठ या अष्टम स्थानों में एक साथ सूर्य, मंगल व शनि हो तथा उन पर शुभ ग्रहों की दृष्टि न हो तो भी उक्त फल समझना चाहिए।

दुःस्थाः सन्तः कलुषखचरैः कण्टकाचार्य्यं चिद्रैः
सूतिर्यस्य प्रभवति दिनेशोदयेऽह्नाय मृत्युम्।
बालो गच्छेद्बहुलकलुषाः क्रूरषष्ट्यंशगाश्चे-
निर्याणस्था रुधिरभलवोपाश्रितास्तद्वदेव॥

जिसका जन्म सूर्योदय के समय हो, लग्न से षष्ठ, अष्टम व द्वादश स्थानों में शुभ ग्रह हों, तथा केन्द्र व त्रिकोण स्थानों में क्रूर ग्रह हों।

आठवें स्थान में क्रूर षष्ठ्यंश में बहुत से पाप ग्रह हों, अष्टम स्थान में भौम की राशि या नवांश हो तो बालक की शीघ्र ही मृत्यु हो जाया करती है।

ग्लौहोरायां जन्म जन्ये जडांशुरन्यः कश्चित्कालगो वा खरांशुः।
होरायातो नो गुरुः कण्टकस्थः कश्चित्खेटः कालधर्म्मेऽथ केन्द्र॥
काये वेन्दुः कण्टके नामरेज्यः काले कश्चित्खे चरोऽथावसाने।
कृष्णा हिज्ञा वाक्पतिः पौरमत्योर्तश्येद्योगेष्वर्भको जातमात्रः॥

(१) चन्द्रमा की होरा में जन्म हो तथा आठवें स्थान में चन्द्रमा किसी भी ग्रह के साथ स्थित हो।

(२) लग्न में सूर्य हो, बृहस्पति केन्द्र में न हो तथा अष्टम स्थान में कोई ग्रह (सू० बृ० को छोड़ कर) हो।

(३) लग्न या केन्द्र में चन्द्रमा हो, गुरू केन्द्र में न हो तथा आठवें स्थान में कोई अन्य ग्रह हो।

(४) शनि, राहु तथा बुध बारहवें स्थान में हो, लग्न या पंचम में बृहस्पति हो।

इन सब योगों में बालक का शीघ्र ही मरण होता है।

मार्त्तण्डाही मंगलैनी च मंत्री मंत्रागारे मूत्तिभावे च तद्वत्
अत्तुर्नाथे क्रूरयुक्तेऽवसाने साधे छिद्रेऽप्युप्रमुक्ते तथैव॥

सूर्य व राहु या मंगल व शनि पांचवें स्थान में बृहस्पति के साथ हो तो बालक की पैदा होते ही मृत्यु हो जाती है। अष्टमेश पाप ग्रहों से युक्त होकर (कहीं भी) स्थित हो, अष्टम भाव में भी पाप ग्रह हों तथा बारहवें स्थान में भी पाप ग्रह हों तो जातमात्र (जन्मते ही) बालक की मृत्यु हो जाती है।

एक सप्ताह में बालक का मरण योग

कलावतोऽस्ते कुटिले सहेलौ वोग्रैर्व्ययास्तोदयकोशयातैः।
पयस्यहौ वा नयनेऽवसाने चित्तोत्थतन्वोर्दहनहितेऽहौ॥
उता कृष्णे सगुरौ सितेऽस्ते तमीपतौ पातपपीजदृष्टे।
नो बालको जीवति सप्तरात्रं ग्लौमंगलास्ते सकुजा कपातः॥
निहन्ति पोतं किल सप्तमेह्नि किं सप्तमे मासि ततोऽरिभस्थः।
मृदुत्रिके वाद्रविणेऽष्टमेऽह्नि मासेऽष्टमे वा पृथुकं निहन्ति॥

(१) चन्द्रमा से सप्तम स्थान में सूर्य के साथ मंगल हो।

(२) पहले, दूसरे, सातवें व बारहवें स्थान में पापग्रह तथा चौथे स्थान में राहु हो।

(३) अथवा केवल दूसरे बारहवें या पहले सातवें स्थानों में ही पाप ग्रह हों तथा चतुर्थ स्थान में राहु हो।

(४) कृष्ण पक्ष में दिन का जन्म हो, सातवें स्थान में गुरू व शुक्र हों तथा चन्द्रमा पर शनि या राहु की दृष्टि हो।

इन योगों में बालक की मृत्यु सप्ताह भर में हो जाया करती है।

(५) सातवें या नवें स्थान में मंगल, शनि, राहु से युक्त चन्द्रमा हो तो सातवें दिन या सातवें मास में मृत्यु देता है।

(६) त्रिक स्थानों (६, ८, १२) या द्वितीय स्थान में शनि शत्रु राशि में हो तो आठवें दिन या आठवें मास में बालक का देहान्त हो हो जाता है।

एक मास पर्यत आयु योग :

मंगले मंगले वित्तेवानुजे मित्रमन्दयो।
एकरा शिगयोर्मृत्युः पाकस्य प्राग्दशाहतः॥

द्वितीय, ततीय या नवम स्थान में मंगल हो तथा सूर्य व शनि एक ही राशि में हों तो दस दिन से पहले ही बालक की मृत्यु हो जाती है।

तमोऽत्ययेऽङ्गे शशिना प्रदृश्यते ध्रुवं दशाहे पृथुकस्य पञ्चता।
समन्दभेऽच्यं मृतिगेऽ हसेक्षित एकादशाहेरययमेति शावकः॥

लग्न या आठवें स्थान में राहु हो तथा उस पर चन्द्रमा की दृष्टि हो तो बालक की मृत्य दसवें दिन हो जाती है।

अष्टम स्थान में मकर या कुम्भ राशि का बृहस्पति हो तथा पाप ग्रहों से दृष्ट हो तो ग्यारहवें दिन बालक की मृत्यु हो जाती है।

भोगीश्वरेऽम्भोभवने भनायके ऽत्तरिक्षते वाऽमृतरश्मितो रवौ।

पुत्रे पथि व्याधिभयाद्दितोऽर्भ कस्तदा नखाहेऽन्तकर्मान्दिरं व्रजेत् ॥

चतुर्थ स्थान में राहु तथा षष्ठ वा अष्टम में चन्द्रमा हो।

चन्द्रमा से त्रिकोण स्थानों (५, ६) में सूर्य हो।

इन योगों में उत्पन्न बालक बीसवें दिन यमपुरी चला जाता है।

असत्समागतं सोमं कृशं पश्येत्फणीश्वरः ।
चेन्निर्व्याजं कतिपय मरियत्यर्भकं दिनैः ॥

पाप ग्रहों से युक्त क्षीण चन्द्रमा को राहु देखता हो तो वालक को कुछ ही दिनों में अचानक बिना दृष्ट कारण के ही मार देता है। अर्थात् बालक की शीघ्र ही किसी अज्ञात कारण से मृत्यु हो जाती है।

दृष्टोऽघखचराहिम्यां कृशविधुः
घस्त्रः कतिपयैः शावस्य मरणम् ॥

क्षीण चन्द्रमा को पाप ग्रहया राहु देखता हो तो बालक कुछ ही दिनों में नष्ट हो जाया करता है।

नारीनिकेते रमणे नलिन्या नक्षत्र नैधननाभिभरथे।
मासेन जातः पृथुकः सजीवेन्निहन्ति वित्तं जननीं च तातम् ॥

सातवें स्थान में सूर्य तथा छठे या आठवें स्थान में चन्द्रमा हो तो बालक माता, पिता व धन का नाश करने के साथ-साथ स्वयं भी एक मास में मृत्यु को प्राप्त होता है।

मृत्युंगत मंगलभित्त्रमन्दगैः सैलेयभैः सासुरपूज्यभैः किमु।
मासेन जातो म्रियते स शावकोऽवश्यं परेताधिपरक्षितोऽपि चेत् ॥

आठवें स्थान में मंगल की राशि (१, ८) में अथवा शुक्र की राशि (२, ७) में मंगल, सूर्य व शनि हों तो स्वयं यमराज द्वारा रक्षित होता हुआ भी एक मास में मृत्यु को प्राप्त हो जाता है।

सारावलीकार ने इसी प्रसंग में एक विशेष बात कही है कि शुक्र की राशि में अष्टमस्थ एक भी पाप ग्रह यदि अन्य पाप ग्रहों से दृष्ट हो तो 'अमृत पी लेने पर भी बालक वर्ष भर में मृत्यु का ग्रास बन जाता है-

एकः पापोऽष्टमगः शुक्रगृहे पापवीक्षितो वर्षात्।

मारयति नरं जातं, सुधारसो येन पीतोऽपि ॥

(सारावली)

जन्तोर्यस्य जनौ जन्यं समीयुर्बहवो ग्रहाः ।
आयुस्तस्य शिशोर्ज्ञेयं मासं वा सप्तरात्रकम् ॥

जिस प्राणी के जन्म लग्न से अष्टम स्थान में बहुत से पाप ग्रह स्थित हों तो उसकी आयु सात दिन या (अधिकाधिक) एक मास समझनी चाहिए।

सारावलीकार इससे अक्षरशः सहमत हैं।

ग्रहाः समेयुर्बहवो निधने यस्य जन्मनि ।
मासं वा सप्तरात्त्रं वा तस्यायुः समुदाहृतम् ॥ (सारावली)

'अर्थात् जन्मकाल में अष्टम में अनेक ग्रह हों तो मास भर या सात दिन ही उसकी आयु होती है।'

तीन मास की आयु के योग :

यस्मिन्नुडावभ्युदितः शिखावान् प्रसूयते तत्र मनूद्भवो यः ।
मासद्वयेनैति परेतराजमापोविलमस्था निखिला बलोनाः ॥
द्विमासमायुः किमु तर्कमासं घनेऽमलेऽरावुडुपे प्रसुभे ।
मैत्रेऽथ मार्गे मिहिरे भृगुवराये यमेऽस्तेऽन्त इह विमासात् ॥

जिस नक्षत्र में 'केतु' का उदय हो, उसी नक्षत्र में यदि शिशु उत्पन्न हुआ हो तो दो मास में मृत्यु को प्राप्त हो जाता है।

आपोक्लिम (३, ६, ६, १२) स्थानों में सभी ग्रह निर्बल हों (अथवा सभी निर्बल ग्रह इन स्थानों में हों) तो बालक की आयु दो मास या छह मास होती है।

लग्न में शुभ ग्रह, षष्ठ स्थान में चन्द्रमा और चतुर्थ स्थान में शनि हो।

नवम में सूर्य, ग्यारहवें स्थान में शुक्र व गुरू तथा सप्तम स्थान में शनि हो तो बालक की आयु तीन मास तक होती है।

केतु का जिस नक्षत्र में उदय हो उसी में जात बालक की आयु के विषय में सारावली व जातकाभरण की एकवाक्यता है :

केतुर्यस्मिन्नृक्षेऽभ्युदितस्तस्मिन् प्रसूयते यो हि।
मासद्वयेन मरणं विनिर्दिशेत्तस्य जातस्य ॥ (सारावली १०/१२)

अर्थात् केतु के उदित नक्षत्र में यदि जन्म हो तो २ मास में बालक की मृत्यु हो जाती है।

पुष्पवद्ग्रहणे जन्म लग्नेऽघे लग्नपेऽबले।
मासद्वयं त्रिमासं वा जातो जीवति शावकः ॥

जिसका जन्म सूर्यग्रहण या चन्द्रग्रहण में हो और लग्न में पाप ग्रह हों और लग्नेश बलहीन होकर कहीं भी स्थित हो तो बालक की आयु दो-तीन मास होती है|

मन्मथे महिभुवी दुलवस्थे नेक्षिते गतमलैरुत चिद्वैः।
सौरिसूर्यरुधिरैर्मनुजातः सप्तसप्ततिभ एति कृतान्तम् ॥

सातवें स्थान में चन्द्रमा के नवांश में मंगल हो तथा उस पर शुभ ग्रह की दृष्टि न हो।

पांचवें स्थान में सूर्य, मंगल तथा शनि हों।

इन योगों में उत्पन्न बालक अपने जन्म नक्षत्र से ७७ वें नक्षत्र में मृत्यु को प्राप्त हो जाता है।

क्षीणशरीरश्चन्द्रो लग्नस्थः क्रूरवीक्षितः कुरुते।
स्वर्गगमनं हि पुंसां कुलीरगोऽजान्परित्यज्य ॥
वर्षान्मारयति शशी षष्ठाष्टमराशिसंस्थितो लग्नात्।
सद्यः क्रूरैर्दृष्टः सौम्यैरब्दाष्टकाच्चैव ॥
अशुर्भशुभैः सन्दृष्टे वर्षचतुष्केण निर्दिशेदन्तम्।
अनुपातः कर्तव्यः प्रोक्तार्द्धनैर्ग्रहैर्दृष्टे ॥ सारावली

यदि क्रूरग्रह से दृष्ट क्षीण चन्द्रमा मेष, वृष तथा कर्क राशि को छोड़कर लग्न में स्थित हो, तो शीघ्र ही जातक की मृत्यु करता है।

लग्न से यदि चन्द्रमा ६ या ८वें स्थान में हो, तो १ वर्ष के लगभग में मृत्यु करता है। यदि क्रूर ग्रहों से दृष्ट हो तो शीघ्र ही तथा शुभग्रहों से दृष्ट हो, तो ८ वर्ष में एवं यदि शुभाशुभ ग्रहों से दृष्ट हो, तो अनुपात से आगत वर्ष में मृत्यु को करता है॥

सौम्याः षष्ठाष्टमगाः पापैर्वक्रोपसङ्गतैर्दृष्टाः।
मासेन मृत्युदास्ते यदि शुभैस्तत्र सन्दृष्टाः॥

लग्नाद्द्वादशधनगैः क्रूरैम्रियते च रन्ध्ररिपुयुक्तैः ।
शुभसम्पर्कमयातैर्मासे षष्ठेऽष्टमे वाऽपि ॥

शुभग्रह यदि लग्न से ६।८ भाव में वर्तमान होकर वक्री पापी ग्रहों से दृष्ट तथा शुभग्रहों से अदृष्ट हों, तो १ मास ही में मृत्यु होती है।

लग्न से दूसरे तथा बारहवें पापग्रह हों तथा षष्ठाष्टम भाव में गत पापग्रह शुभग्रह के सम्बन्ध से रहित हों, तो छठवें या आठवें मास में अवश्य मृत्यु होती है॥

ग्रहणोपगते चन्द्रे सक्रूरे लग्नगे कुजेऽष्टमगे ।
मात्रा सार्धं म्रियते चन्द्रवदर्के च शस्त्रेण ॥
क्षीणे शशिनि विलग्ने कण्टकनिधनाश्रितैस्तथा पापैः ।
सौम्यादृष्टे मृत्युः सद्यः सत्यस्य निर्देशः ॥

यदि ग्रस्तचन्द्रमा पापग्रह से युक्त होकर लग्न में और मंगल अष्टम में हो, तो माता के सहित बालक की मृत्यु होती है। एवं यदि ग्रस्त रवि पाप ग्रह से युक्त होकर लग्न में और मंगल अष्टम में हो, तो मात्रा के साथ बालक की मृत्यु शस्त्र द्वारा होती है।

यदि क्षीणचन्द्रमा लग्न में तथा पापग्रह केन्द्र और अष्टम में हों तथा शुभग्रहों की दृष्टि न हो, तो इस योग में उत्पन्न बालक की मृत्यु शीघ्र ही होती है॥

द्यूनगतेऽर्के लग्ने यमे कुजे वा विपर्यये वाऽपि ।
अन्यतरयुते वेन्दावशुभैर्दृष्टेऽचिरान्मृत्युः ॥
होरानिधनास्तगतैः पापैः क्षीणे व्ययस्थिते चन्द्रे ।
जातस्य भवेन्मरणं सद्यः केन्द्रेषु चेदंशुभाः ॥

यदि लग्न में मंगल या शनि तथा सप्तम में रवि हो अथवा सप्तम में मंगल या शनि तथा लग्न में रवि अथवा चन्द्रमा इनमें से किसी से युक्त होकर पापग्रहों से दृष्ट हो, तो शीघ्र ही मृत्यु होती है।

लग्न, सप्तम व अष्टम में पापग्रह और व्यय में चन्द्रमा तथा यदि केन्द्र में कोई भी शुभग्रह न हो, तो जातक की शीघ्र ही मृत्यु होती है॥

लग्नान्त्यनवमनैधनसंयुक्ताश्चन्द्रसूर्यसौराराः
जातस्य वधकृतः स्युः सद्यो गुरुणा न चेद्दृष्टाः ॥

लग्ने चन्द्रेऽर्के वा पापा बलिनस्त्रिकोणनिधनेषु ।

सौम्यैरदृष्टयुक्ताः सद्यो मरणाय कीर्तिता यवनैः ॥

यदि लग्न, द्वादश, नवम, अष्टम इन स्थानों में क्रम से चन्द्रमा, सूर्य, शनि और मंगल हों तथा बृहस्पति से दृष्ट न हो, तो जातक की शीघ्र ही मृत्यु होती है ।

लग्न में चन्द्रमा अथवा रवि हो तथा बली पापग्रह ९।५ या ८ में हों और शुभग्रहों की दृष्टि तथा योग से रहित हों, तो यवनाचार्यों के मत से शीघ्र मृत्युकारक होते हैं॥

बोध प्रश्न

1. ज्योतिष शास्त्र में "सद्यरिष्ट" का शाब्दिक अर्थ क्या है?

(क) जन्म से पूर्व होने वाला अरिष्ट

(ख) जन्म के तुरन्त बाद होने वाला अरिष्ट

(ग) संपूर्ण जीवन में होने वाला अरिष्ट

(घ) युवावस्था में होने वाला अरिष्ट

2. सद्यरिष्ट योग बनने की मुख्य स्थिति कौनसी है-?

(क) शुभग्रहों की प्रबल स्थिति

(ख) नवम भाव का बलवान होना

(ग) लग्नेश पापग्रह से युक्त होना और चन्द्रमा निर्बल होना

(घ) पंचम भाव में गुरु की स्थिति होना

3. यदि जन्म के समय चन्द्रमा अशुभ ग्रहों से ग्रसित हो और लग्न निर्बल हो तो यह किस प्रकार का योग माना जाएगा?

(क) राजयोग

(ख) धनयोग

(ग) बलारिष्ट योग

(घ) दीर्घायु योग

4. सद्यरिष्ट योग का प्रभाव मुख्यतः किस आयु तक माना जाता है?

(क) 16 वर्ष तक

(ख) 12 वर्ष तक

(ग) 8 वर्ष तक

(घ) 4 वर्ष तक

2.5 संराश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि ज्योतिष शास्त्र में अरिष्ट शब्द का प्रयोग अशुभ फल और मृत्यु के सूचक योगों के लिए किया गया है। जब ऐसे योग जन्म के क्षण से ही जातक की कुंडली में प्रकट होते हैं और शीघ्र मृत्यु का संकेत देते हैं, तो उन्हें सद्योरिष्ट कहा जाता है। इसका मूल कारण जीव के पूर्वजन्म में किए गए पापकर्म और माता-पिता के कर्मों का भी प्रभाव माना गया है। जन्म के बाद जीवन के प्रारंभिक वर्षों में बालक माता के आहार और संस्कारों पर ही आश्रित रहता है, इसलिए शास्त्रकारों ने कहा है कि बालक की मृत्यु अथवा जीवन में आरंभिक संकट उसके माता के कर्मानुसार भी प्राप्त होते हैं। बृहत्पाराशर होरा शास्त्र में स्पष्ट कहा गया है—"लग्नेशे पापसंयुक्ते चन्द्रेऽप्यष्टमसंस्थिते, शुभदृष्टिविहीने तु जातकः क्षिप्रमृच्छति" अर्थात् यदि लग्नेश पापग्रह से संयुक्त हो, चन्द्रमा अष्टम भाव में हो और शुभग्रहों की दृष्टि न हो तो जातक शीघ्र मृत्यु को प्राप्त होता है। इसी प्रकार जातक पारिजात में उल्लेख है कि यदि चन्द्रमा बाल्यकाल में पापग्रहों से ग्रसित हो और चतुर्थ, अष्टम तथा द्वादश भाव निर्बल हों, तो जातक की आयु नहीं रहती और वह तुरंत मृत्यु को प्राप्त करता है। यही योग सद्यरिष्ट कहलाता है। फलदीपिका के मंतरेश्वर ने भी इसी तथ्य की पुष्टि करते हुए कहा है कि जब लग्नेश, सूर्य और चन्द्र तीनों ही पापग्रहों से ग्रस्त हों और उन पर किसी शुभग्रह की दृष्टि न हो, तब जातक का जीवन स्थिर नहीं रहता।

वास्तव में सद्योरिष्ट योग जन्म से पूर्वजन्म के शुभाशुभ कर्मों का प्रतिफल है। जातक के स्वयं के संस्कार और माता-पिता के कर्म उसमें सहायक होते हैं। किन्तु शास्त्र यह भी कहते हैं कि यदि इन योगों पर किसी प्रकार का शुभ प्रभाव, जैसे कि बृहस्पति या शुभग्रह की दृष्टि या युति आ जाए, तो मृत्यु का योग नष्ट होकर केवल कष्ट या रोग का अनुभव कराता है। अतः ज्योतिषीय दृष्टि से सद्योरिष्ट केवल मृत्यु का ही नहीं, बल्कि गहन संकट या रोग का भी सूचक है।

संक्षेप में कहा जाए तो सद्यरिष्ट योग ज्योतिष शास्त्र का वह गूढ़ विषय है जो जन्म से ही मृत्यु अथवा असाधारण संकट का संकेत करता है। यह योग न केवल ज्योतिषीय दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि दार्शनिक और आध्यात्मिक दृष्टिकोण से भी यह जीव के पूर्वकर्म और माता-पिता के कर्मानुबन्ध का प्रतीक है। यदि अशुभ योगों पर शुभग्रहों की कृपा हो तो जातक मृत्यु से बचकर केवल कष्ट या बीमारी का ही अनुभव करता है, अन्यथा जन्म के तुरंत बाद ही उसे मृत्युलोक से विदा लेना पड़ता है।

2.6 बोधप्रश्नों के उत्तर

1.(ख)

2. (ग)

3. (ग)

4. (घ)

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

वृहज्जातकम् - चौखम्भा प्रकाशन

वृहत्पराशरहोराशास्त्र - चौखम्भा प्रकाशन

ज्योतिष सर्वस्व – चौखम्भा प्रकाशन

चमत्कार चिंतामणि- चौखम्भा प्रकाशन

सरावली- चौखम्भा प्रकाशन

आयुर्निर्णय – डा. सुरेशचन्द्र मिश्र

2.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. शैशवावस्था में मृत्यु अथवा गंभीर रोगों के कारण के रूप में सद्यरिष्ट योग का विवेचन कीजिए।

2. सद्योरिष्ट योग की परिभाषा और योग उदाहरण सहित लिखिए।

3. सद्योरिष्ट योग में लग्नेश और चन्द्रमा की भूमिका समझाइए।

इकाई -3 बालारिष्ट योग

इकाई की संरचना

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 बालारिष्ट परिचय

3.3.1 बालारिष्ट का काल निर्धारण

3.3.2 बालारिष्ट की ऐतिहासिक परम्परा

3.4 बालारिष्ट योग

बोध प्रश्न

3.5 सारांश

3.6 बोधप्रश्नों के उत्तर

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थे सूची

3.8 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना -

प्रस्तुत इकाई BAJY(N) – 301, खण्ड 1 के इकाई 3 के '**बालारिष्ट योग'** से सम्बन्धित है। आप यह जानने कि कोशिस करेंगे कि भारतीय ज्योतिष शास्त्र केवल ग्रहनक्षत्रों की गति और - गणना का विज्ञान नहीं है, बल्कि यह मानव जीवन की विविध अवस्थाओं, उसकी सुखदुःख की - शब्द "अरिष्ट"के रहस्यों का भी सूक्ष्म विश्लेषण करता है। ज्योतिष में संभावनाओं और उसकी आयु का विशेष महत्व है। अरिष्ट का अर्थ है अशुभ योग, जो जीवन में कष्ट, रोग, अशांति अथवा मृत्यु जैसी घटनाओं का सूचक हो। इन्हीं में से एक महत्त्वपूर्ण प्रकार है – बलारिष्ट। बलारिष्ट विशेषतः जन्म के बाद बाल्यावस्था में मृत्यु या गंभीर अशुभ परिस्थितियों का सूचक माना गया है।

भारतीय समाज में शिशु मृत्यु की समस्या प्राचीन काल से ही विद्यमान रही है। आयुर्वेद में बाल रोगों का वर्णन है तो धर्मशास्त्रों में बाल मृत्यु से संबंधित संस्कार और प्रायश्चित्त का उल्लेख मिलता है। ज्योतिष शास्त्र ने भी इस संदर्भ में अपनी भूमिका निभाई और बताया कि किस प्रकार जन्म समय के ग्रह योग यह संकेत करते हैं कि जातक दीर्घायु होगा या शैशवावस्था में ही कालग्रस्त। यही कारण है कि "बलारिष्ट" शब्द को विशेष महत्व प्राप्त हुआ।

बलारिष्ट का अध्ययन केवल ज्योतिषीय दृष्टि से ही नहीं, बल्कि सामाजिक और दार्शनिक दृष्टि से भी गहन है। यह हमें यह समझने का अवसर देता है कि मानव जीवन कितना नाजुक है और कैसे सूक्ष्म से सूक्ष्म ग्रह स्थिति भी उसके अस्तित्व पर प्रभाव डालती है।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान लेंगें कि-

- ❖ बालारिष्ट योग को आप समझ सकेंगें।
- ❖ बालारिष्ट योग के बालारिष्ट का काल निर्धारण को आप समझ सकेंगे।
- ❖ बालारिष्ट की ऐतिहासिक परम्परा आप जान सकेंगे।
- ❖ विभिन्न ग्रन्थों के अनुसार बालारिष्ट योग को आप समझ सकेंगे।

3.3 बालारिष्ट परिचय

वस्तुतः प्रत्येक प्राणी के जीवन में मृत्यु अनिवार्य होती है। मृत्यु किसी रोग या आकस्मिक दुर्घटना के बहाने आती है और प्राणों को साथ ले जाती है। मृत्यु का मुख्य कारण ग्रह का जन्म

कुण्डली में विभिन्न स्थितियों में होना बनता है। बालक की मृत्यु में मुख्य रूप से चन्द्रमा का पीड़ित होना बताया गया है। बचपन में अकाल मृत्यु के सूचक योग बालारिष्ट योग कहलाते हैं। ये बच्चों में बीमारियों के सूचक होते हैं।

यदि अरिष्ट योग भंग होता हो, तो उस योग से बच्चों को बीमारियों होती है। लेकिन उनका जीवन सुरक्षित रहता है। रोग चिकित्सा द्वारा ठीक हो जाते है और यदि अरिष्ट योग का भंग न हो, तो इन बीमारियों से बचपन में ही मृत्यु हो जाती है। मृत्यु एक महारोग है। अतः बालारिष्ट कारक ग्रह रोगकारक होता है। जिन बच्चों का जन्म अरिष्ट योगों में होता है, वे बच्चे इन योगों के प्रभाव वश 12 वर्ष की आयु के भीतर मर जाते हैं।

कुछ आचार्यों का यह भी मत है कि बालारिष्ट योग बच्चे के माता-पिता के उन पापों के द्योतक हैं, जिनके प्रभाव से उसकी मृत्यु होती है। इन योगों को बालारिष्ट योग कहते हैं। यदि हमें रोग की पूर्व सूचना मिल जाए और सावधानीपूर्वक उसका उपचार कर दिया जाए तो रोगजन्य कष्टानुभूति से मानवीय सभ्यता को राहत मिल सकती है, साथ ही आयुष्य की दीर्घता भी बढ़ सकती है।

आज का आधुनिकतम विज्ञान व्यक्ति के बीमार होने के बाद ही उसकी बीमारी का पता लगा पाता है, व्यक्ति की मृत्यु होने के बाद वह मृत्यु के कारणों का पता लगाने की व्यर्थ कोशिश करता है। स्वस्थ व्यक्ति में छिपी हुई बीमारी कब प्रकट होगी ? कौन-सी बीमारी होगी? क्यों होगी ? किन परिस्थितियों में किन कारणों से व्यक्ति की मृत्यु होगी? इसके पूर्वानुमान का परिमापन न तो आयुर्वेद के पास है न आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के पास है। संसार के किसी भी चिकित्सा विज्ञान के पास इसका कोई उत्तर नहीं है। इसका एकमात्र उत्तर यदि कहीं है तो केवल ज्योतिष शास्त्र में है।

ज्योतिष शास्त्र के आचार्यों का मानना है कि बाल रोगों का निर्णय करते समय सर्वप्रथम बालक की आयु का निर्णय करना चाहिए।' यदि रोगारम्भ के समय बालक की आयु समाप्त न होती हो तो बालक का रोग साध्य होता है और वह चिकित्सा द्वारा ठीक हो जाता है। रोगारम्भ के आस-पास ही यदि बालक की आयु समाप्त हो जाए तो उस समय उत्पन्न होने वाला रोग असाध्य होता है और उससे बालक की मृत्यु हो जाती है। इसलिए बालरोग एवं बालारिष्ट का निर्णय करने के लिए आयु का विचार करना आवश्यक होता है।

3.3.1 बालारिष्ट का काल निर्धारण

बालारिष्ट विचारार्थ यह निर्णय किया जाना चाहिए कि बालारिष्ट योग आयु के किस वर्ष तक प्रभावी होते हैं, एवं कितने वर्षों तक कौन से योग प्रभावी होते हैं। क्योंकि किसी भी अध्ययन अथवा विचार हेतु सीमा को निर्धारण करना अत्यावश्यक होता है, तथा सीमा निर्धारण के बिना समुचित अध्ययन नहीं हो पाता है। अतः बालारिष्ट पर अध्ययन करने से पूर्व पूर्ववर्ती आचार्यों के मतमतान्तरों का विश्लेषण व उनके द्वारा बालारिष्ट हेतु निर्धारित आयु सीमा का अध्ययन नितान्त आवश्यक है।

जिस प्रकार अनेक विषयों में विभिन्न आचार्यों के मतों में भिन्नता होती है, ठीक उसी प्रकार बालारिष्ट की आयु सीमा निर्धारण के सन्दर्भ में आचार्यों के मतों में पृथकता है। जिनको प्रस्तुत करते हुए बालारिष्ट विचार हेतु काल निर्धारण किया जा रहा है।

देवर्षि नारद ने यद्यपि काल निर्धारण के सन्दर्भ में कुछ विशेष नहीं कहा। उन्होंने कई योगों में बिना समय बताये मात्र यह कह दिया कि अरिष्ट होता है। किन्तु कुछ योग दिये हैं जिनमें आठ वर्ष की आयु में मरण (अरिष्ट) लिखा है।

समाष्टके मिश्रखेटैः दृष्टे तुर्ये मृतिः शिशोः ।
क्षीणेऽब्जेऽङ्गे रन्ध्रकेन्द्रे पापे पापान्तरस्थिते ।। श्री नारदीय जातकम्

अतः देवर्षि के द्वारा प्रस्तुत बालारिष्ट विषयक ग्रहयोगों का अध्ययन करने पर यह माना जा सकता है कि सम्भवतः उन्होंने बालारिष्ट को आठ वर्षों तक ही ग्रहण किया हो ।

महर्षि पराशर के द्वारा बालारिष्ट के काल निर्धारण हेतु दो मत प्रस्तुत किये गये। हैं। अरिष्ट का विचार करते हुए प्रथमदृष्ट्या चौबीस वर्ष तक बालारिष्ट को प्रभावी बताते हुए लिखा कि जन्म से लेकर चौबीस वर्ष तक जातक के जीवन में अरिष्ट होता है अतः चौबीस वर्ष तक आयु की गणना नहीं करनी चाहिए

चतुर्विंशतिवर्षाणि यावद्गच्छन्ति जन्मतः।
जन्मारिष्टं तु तावत्स्यादायुर्दायं न चिन्तयेत् ।।

पुनः महर्षि ने आयु का विचार करते हुए दूसरा मत प्रस्तुत किया है जिसमें वे आयु के आठ वर्षों तक ही बालारिष्ट को प्रभावशाली मानते हैं—

बालारिष्टे समा अष्टौ योगारिष्टे च विंशतिः ।

द्वात्रिंशद् वत्सरा अल्पे चतुःषष्टिश्च मध्यमे ।।

किन्तु महर्षि ने प्रथम मत में "जन्मारिष्टं" कहकर सम्भवतः बालारिष्ट, योगारिष्ट एवं दशारिष्ट नामक तीनों प्रकार के अरिष्टों को सम्बोधित किया है। तथा पुनः आयु विचार करते हुए आठ वर्ष तक बालारिष्ट, बीस वर्ष तक योगारिष्ट एवं तत्पश्चात की अवधि में अल्प, मध्य, दीर्घादि आयु के भेदों को बताया है। जिससे यह कहा जा सकता है कि महर्षि ने स्पष्ट रूप से बालारिष्ट-योगों को आठ वर्ष तक ही प्रभावी माना है।

आचार्य वराहमिहिर ने अपने ग्रन्थ में सद्योरिष्ट को अधिक प्रबल माना है। एवं अरिष्ट का वर्णन करते हुए कतिपय ग्रह योगों को प्रस्तुत किया, किन्तु अरिष्ट हेतु समय निर्धारण नहीं किया । तथा उनके मत से चन्द्र की गोचर स्थिति वशात् अरिष्ट की प्राप्ति होती है, जिसका विचार वे मात्र एक वर्ष तक करने को कहते हैं। साथ ही उनके मत से केवल सद्योरिष्ट ही प्रभावकारी होता है, जो कि प्रायः जन्म से लेकर एक वर्ष पर्यन्त होता है।

जबकि आचार्य वैद्यनाथ ने आठ वर्ष तक बालारिष्ट को प्रभावशाली माना है, वे कहते हैं कि आठ वर्ष तक बालारिष्ट, बीस वर्ष तक योगारिष्ट, बत्तीस वर्ष तक अल्पायु, 70 तक वर्ष तक मध्यायु एवं 100 वर्ष तक पूर्णायु होती है।

अष्टौ बालारिष्टमादौ नराणां योगारिष्टं प्राहुराविंशतिः स्यात्।
अल्पं चाद्वात्रिंशतान्मध्यमायुरासप्तत्याः पूर्णमायुः शतान्तम् ।।

आचार्य मन्त्रेश्वर ने वैद्यनाथ के मतानुसार ही 32 से 100 वर्ष तक की आयु को अल्प, मध्य एवं पूर्ण तीन भागों में विभाजित किया गया है। तथा प्रारम्भ के आठ वर्षों में बालारिष्ट व तत्पश्चात बीस वर्ष तक योगारिष्ट को प्रभावी बताया गया है।

अष्टौ बालारिष्टमादौ नराणां योगारिष्टं प्राहुराविंशतिः स्यात् ।
अल्पं चाद्वात्रिंशतं मध्यमायु श्चासप्तत्याः पूर्णमायु शतान्तम्।।
नृणां वर्षशतं ह्यायुस्तस्मिंस्त्रेधा विभज्यते।
अल्पं मध्यं दीर्घमायुरित्येतत्सर्वसम्मतम् ।।

आचार्य भट्टोत्पल के मत में कुछ भिन्नता है। उनके अनुसार बालारिष्ट केवल एक वर्ष तक ही प्रभावी प्रतीत होता है, जिसको वे सद्योरिष्ट योग के नाम से प्रस्तुत करते हैं। आचार्य का कथन है

कि एक वर्ष तक सद्योरिष्ट, बारह वर्ष तक अरिष्टयोग, बत्तीस वर्ष तक रिष्ट योग, सत्तर वर्ष तक मध्यायु, एवं दुपरान्त 100 वर्ष तक पूर्णायु होती है।

सद्योरिष्टाह्वया योगा वत्सरान्तर्मृतिप्रदाः।।
रव्यब्दान्तररिष्टाख्या नापेक्षन्ते दशामिमे।
योगारिष्टाह्वयाषष्ठिवत्सरान्तर्मृतिप्रदाः ।।
अब्दानां सप्ततेरन्तर्योगा ये मध्यमायुषः।
दीर्घायुषश्शतस्यान्तर्दशापेक्षान्वितास्त्रयः।।

यहां पर आचार्य भट्टोत्पल ने बत्तीस वर्ष तक रिष्ट योग कहा है जबकि अन्य आचार्यों ने इस अवधि तक अल्पायु कहा है। एवं बालारिष्ट को सद्योरिष्ट मानकर उसको एक वर्ष तक सीमित करना आचार्य के मत को अन्य मतों से भिन्न करता है।

3.3.2 बालारिष्ट की ऐतिहासिक परम्परा

प्राचीन वेद पुराणादि ग्रंथों के अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि शिशुओं के अरिष्ट व तत् शमनार्थ वैदिक काल से चिन्तन- मन्थन किया जाता रहा है। रूद्रसूक्त के अन्तर्गत एक मन्त्र में भगवान रुद्र से प्रार्थना की गई है कि- "हे! भगवान रुद्र हमारे गुरु, पितृव्य, वृद्धजनों, माता-पिता, बालकों एवं गर्भस्थ शिशुओं की हिंसा मत करिये तथा उनकी प्राण रक्षा करें।" इसी प्रकार से वेदों तथा वैदिक साहित्य ग्रन्थों में विभिन्न स्थानों पर बालरक्षा के मन्त्रादिकों का विवरण प्राप्त होता है। जिनसे यह ज्ञात होता है कि वैदिक काल में भी शिशुओं को अरिष्ट प्राप्त होता था । किन्तु वहाँ पर "बालारिष्ट" नाम से उल्लिखित नहीं किया गया है।

पुराणेतिहास काल में भी विभिन्न ग्रन्थों में बालारिष्ट का विवरण प्राप्त होता है। महाभारत में दुर्योधन के जन्म के समय में महात्मा विदुर जी ने विभिन्न ग्रहस्थितियों तथा भौमान्तरिक्ष उत्पातों एवं तात्कालिक ग्रह स्थिति के आधार पर अरिष्ट योगों को देखते हुए तत्काल शिशु का त्याग करने को कहा था, क्योंकि भविष्य में वह कुलघात रुपी अरिष्ट को प्रदान करेगा।

मारकण्डेय पुराणोक्त दुर्गाशप्तशती में भी बालग्रहों से बालकों की रक्षा हेतु उपाय वर्णित करते हुए कहा गया है कि देवी के चरित्र का पाठ करने से अनेक प्रकार के बालग्रहों (अरिष्टों) से बालकों की रक्षा होती है । बालारिष्ट कारक ग्रहयोगों का वर्णन प्रायः सभी प्राचीन एवं आधुनिक

ज्योतिष ग्रन्थों में प्राप्त होता है। जब से पृथ्वी पर मानव जीवन का आरम्भ हुआ तत्कालीन समय से ही सन्तानोत्पत्ति एवं उनके प्राणों की रक्षा हेतु दैविक, भौतिक एवं आध्यात्मिक उपायों पर निरन्तर शोध किया जा रहा है। जिसके कारण शिशुओं के प्राण रक्षण हेतु अनेक तन्त्र-मन्त्र-यन्त्र - चिकित्सादि उपायों को ऋषियों ने तप एवं शोध के माध्यम से प्राप्त कर संग्रहित किया।

दैवज्ञ ऋषियों ने आकाश मण्डलस्थ ग्रहों के प्रभाव को शिशुओं के जन्मांग मे उत्पन्न ज्योतिषीय योगायोगों व कर्म के सिद्धान्तों का समावेशित रुप में अध्ययन करते हुए शिशुओं के जन्म से लेकर बारह वर्षों तक के काल को प्रयत्न पूर्वक प्राण रक्षण काल बताया, एवं शिशुओं की आयु के इस कालखण्ड के सन्दर्भ में विचार करने हेतु अपने ग्रन्थों में "बालारिष्ट" नाम से अनेक ग्रहयोगों को प्रतिस्थापित किया।

ज्योतिष शास्त्र के प्राप्त प्राचीन ग्रन्थों में सर्वप्रथम दैवीय ग्रन्थ परम्परा के अन्तर्गत श्री नारदीय जातकम में देवऋषि नारद जी के द्वारा बालारिष्ट का विवरण प्रदान किया गया है। किन्तु उक्त ग्रन्थ में बालारिष्ट पर बहुत संक्षेप में चर्चा की गई है।

तदुपरान्त ऋषि परम्परा के अन्तर्गत महर्षि पराशर के होराशास्त्र में बालारिष्ट पर विशद विवेचन प्राप्त होता है जिससे कि यह ज्ञात होता है कि उनके काल तक इस विषय पर अधिकाधिक अध्ययन किया जा चुका था।

आचार्य परम्परा में वाराह मिहिर, कल्याण वर्मा, आचार्य भट्टोत्पल, पृथुयशा, आचार्य मन्त्रेश्वर, दैवज्ञ वैद्यनाथ, श्री नृसिंह दैवज्ञ, आचार्य मीनराज, तथा आधुनिक आचार्यों आदि ने भी अपने ग्रन्थों में भी पूर्व ऋषियों के मतों का अवलम्बन करते हुए बालारिष्ट पर विस्तार से वर्णन प्रदान किया है।

3.4 बालारिष्ट योग

क्षीणे शशिन्युदयगे यदि कण्टकस्थे पापोऽथवा निधनगो म्रियते तु बालः।
रन्ध्रारिगैरशुभखेटदृशा समेतैः सौम्यैः कृतान्तनगरं समुपैति मासात्॥

क्षीण चन्द्रमा लग्न में और पापग्रह केन्द्र में या अष्टम भाव में स्थित हों तो जातक की मृत्यु होती है। अष्टम या षष्ठभावस्थ शुभग्रह यदि पापग्रहों से दृष्ट हों तो जातक एक मास में मृत्युलोक को प्राप्त होता है॥

सौम्याः षष्ठाष्टमगाः पापैर्वक्रोपसङ्गतैर्दृष्टाः ।
मासेन मृत्युदास्ते यदि न शुभैस्तत्र सन्दृष्टाः' ॥
लग्नाद्द्वादशधनगैः क्रूरैम्रियते च रन्ध्ररिपुयुक्तैः ।
शुभसम्पर्कमयातैर्मासे षष्ठेऽष्टमे वाऽपि ॥ (सारावली)

शुभग्रह यदि लग्न से ६।८ भाव में वर्तमान होकर वक्री पापी ग्रहों से दृष्ट तथा शुभग्रहों से अदृष्ट हों, तो १ मास ही में मृत्यु होती है।

लग्न से दूसरे तथा बारहवें पापग्रह हों तथा षष्ठाष्टम भाव में गत पापग्रह शुभग्रह के सम्बन्ध से रहित हों, तो छठवें या आठवें मास में अवश्य मृत्यु होती है॥

एकत्र मन्दावनिनन्दनार्का रन्ध्रस्थिता वा रिपुराशियाताः ।
सौम्यैरयुक्ता अविलोकितास्ते जातस्य सद्यो मरणप्रदाः स्युः ॥

सूर्य, मंगल और शनि यदि षष्ठ या अष्टम भाव में युत हों और वे शुभग्रहों की दृष्टि से ह्येन हों तो जातक की सद्यः मृत्यु होती है॥

चन्द्रांशे सप्तमे भौमे सौम्यदृष्टिविवर्जिते ।
सप्तसप्ततितारायामुपैति मरणं शिशुः ॥

सप्तम भावगत मंगल यदि चन्द्रमा के नवांश में हो और उस पर शुभग्रह की दृष्टि न हो तो जन्मनक्षत्र से ७७वें नक्षत्र में शिशु मृत्यु को प्राप्त होता है॥

मन्दावनिजमार्तण्डैः पुत्रस्थानसमन्वितैः ।
सप्तसप्ततिनक्षत्रे जातस्य मरणं वदेत् ॥

सूर्य, मंगल और शनि लग्न से पंचम भाव में स्थित हों तो जन्मनक्षत्र से सतहत्तरवें नक्षत्र में जातक की मृत्यु होती है॥

धरासुते चन्द्रनवांशकस्थे लग्नांशके वा न च जीवदृष्टे ।
सुधाकरे नन्दनराशियाते समेति याम्यं पदमाशु बालः॥

कर्क या लग्नस्थ राशि के नवांश में स्थित भौम यदि बृहस्पति से अदृष्ट हो और चन्द्रमा पंचम भाव में स्थित हो तो जातक के लिए सद्यः मृत्युदायक होता है॥

नीचं गते लग्नपतौ विलग्नान्नाशं गते वा रविजे तथाऽस्ते ।

जातो मृतप्रायकलेवरः सन् कृच्छ्रेण वैवस्वतलोकमेति ॥

लग्नेश नीच राशिगत हो या अष्टम भाव में स्थित हो तथा शनि वैसा ही (नीच राशिगत) हो और सप्तम भाव में स्थित हो तो जातक मृतप्राय होता है तथा जन्म के अनन्तर उसकी मृत्यु हो जाती है ॥

आपोक्लिमस्थानगता नभोगा विधूतवीर्या यदि भानुमुख्याः ।
मासद्वयं तस्य ऋतुत्रयं वा जातस्य चायुः कथयन्ति तज्ज्ञाः ॥

सूर्यादि सभी ग्रह यदि निर्बल होकर आपोक्लिम (३, ६, ९, १२वें भाव में स्थित हों तो ऐसे जातक की २ मास या मास आयु आचार्यों ने कहा है ॥

लग्नारिरन्ध्रव्ययगे शशाङ्के पापेन दृष्टे शुभदृष्टिहीने ।
शुभग्रह केन्द्रेषु सौम्यग्रहवर्जितेषु प्राणैर्वियोगं व्रजति प्रजातः ॥

लग्न या त्रिक (६।८।१२वें) भाव में स्थित चन्द्रमा यदि पापग्रहों से दृष्ट हो, उसको न देखते हों तथा केन्द्र में कोई शुभग्रह न हो तो जातक की मृत्यु होती है ॥

कल्याण वर्मा चन्द्रमा को पापान्वित और पापदृष्ट होना आवश्यक मानते हैं—

व्ययाष्टषष्ठोदयगे शशाङ्के पापेन युक्ते शुभदृष्टिहीने |
केन्द्रेषु सौम्यग्रहवर्जितेषु प्राणैर्वियोगं व्रजति प्रजातः ॥ (सारावली)

पापग्रह से युक्त शुभग्रहों से अदृष्ट चन्द्रमा, यदि लग्न से 12 । 6 1 8 ।1 भाव में से किसी स्थान में हो तथा केन्द्र 1।4।7।10 स्थान में कोई शुभग्रह न हो तो जातक की शीघ्र ही मृत्यु होती है।

सौरे मदस्थे यदि वा विलग्ने जलोदयेऽब्जे यदि कीटगे वा ।
सौम्येषु केन्द्रोपगतेषु सद्यो जातस्य नाशं यवनोपदिष्टम् ॥

जलचर (कर्क, मीन या मकर का उत्तरार्ध) राशि लग्न में हो, शनि सप्तम भाव या लग्न में स्थित हो, चन्द्रमा कीट (वृश्चिक) राशिगत हो तथा केन्द्र (१।४।७।१० वें) भावों में शुभग्रह स्थित हों तो यवनाचार्य के मतानुसार जातक शीघ्र मृत्यु को प्राप्त होता है ॥

भौमक्षेत्रगते जीवे नीचराशिगतेऽथवा ।
सन्ध्यात्रये च सञ्जातो मासान्मृत्युमुपैति सः ॥

यदि बृहस्पति मेष, वृश्चिक या मकर राशिगत हो और तीनों सन्ध्याओं में किसी एक सन्ध्या में जन्म हो तो जातक एक मास तक जीवित रहता है॥

अहोरात्र में तीन सन्ध्याएँ होती हैं - १. प्रातः कालिक सन्ध्या, २. मध्याह्नकालिक सन्ध्या और ३. सायंकालिक सन्ध्या। प्रातः काल में सूर्योदय से घट्यर्ध पूर्व और सूर्योदय काल से घट्यर्ध पश्चात् एक घटी प्रातःकालिक सन्ध्या, मध्याह्न काल से पूर्व और पर के घट्यर्ध तुल्यकाल कुल एक घटी मध्याह्न सन्ध्या और सूर्यास्त से पूर्व और पर के घट्यर्ध तुल्य एक घटी का काल सायंकालिक सन्ध्या कहलाती है।

रन्ध्रे धरासूनुदिनेशसौरा जातस्तु मृत्युं समुपैति मासात्।
केतुस्तु यस्मिन्नुदितोऽत्र जातो मासद्वयेनैव यमं प्रयाति॥

सूर्य, मंगल और शनि यदि अष्टम भाव में स्थित हो तो जातक एक मास में मृत्यु को प्राप्त होता है। केतु जिस नक्षत्र में हो उस नक्षत्र में यदि जन्म हो तो जातक दो मास में मृत्यु को प्राप्त होता है॥

पापावुदयास्तगतौ कूरेण युतश्च शशी।
दृष्टश्च शुभैर्न यदा मृत्युश्च भवेदचिरात्॥

दो पापग्रह लग्न और सप्तम भावगत हों तथा तीसरा यदि चन्द्रमा से योग करता हो और उनको शुभग्रह न देखते हों तो ऐसे योग में उत्पन्न जातक शीघ्र ही मृत्यु को प्राप्त होता है॥

क्रूर मंगल का पर्याय है 'क्रूरेण युतश्च शशी' का अर्थ यदि 'मंगल से युत चन्द्रमा ग्रहण करे' तो दो पापग्रह सूर्य और शनि लग्न और सप्तम भाव में स्थित होंगे।

यदा लग्नगतः पापस्तथैवास्तगतोऽपरः।
क्रूरयुक्तश्च चन्द्रश्चेच्छुभदृष्ट्या च वर्जितः॥
तदा जातस्य सद्यः स्यान्मरणं नान्यथा भवेत्॥ (स्कन्दहोरा)

एक पापग्रह लग्न में और दूसरा सप्तम भाव में स्थित हो, मंगल से चन्द्रमा युक्त हो और शुभग्रहों की दृष्टि से हीन हो तो जातक सद्यः मृत्यु को प्राप्त होता है। सारावली में कल्याण वर्मा के अनुसार सूर्य सप्तम भाव में स्थित हो तथा मंगल या शनि विपर्यय से लग्न और चन्द्रमा से युत होकर शुभदृष्टिहीन हो तो शीघ्र ही जातक निधन को प्राप्त होता है।

क्षीणे हिमगौ व्ययगे पापैरुदयाष्टमगैः ।
केन्द्रेषु शुभाश्च न चेत् क्षिप्रं निधनं प्रवदेत् ॥

यदि क्षीण चन्द्रमा व्ययभाव में स्थित हो और पापग्रह लग्न एवं अष्टम भाव में स्थित हों तथा केन्द्र शुभग्रह से हीन हो तो जातक की शीघ्र ही मृत्यु होती है ॥

सारावली में भी यह योग थोड़े अन्तर से उल्लिखित है। क्षीण चन्द्रमा को लग्न से द्वादश भाव में और पापग्रहों को लग्न, सप्तम और अष्टम भावों में होना कहा है।

क्रूरेण संयुतः शशी स्मरान्त्यमृत्युलग्नगः ।
कण्टकाद्बहिःशुभैरवीक्षितश्च मृत्युदः ॥

क्रूर ग्रह (भौम) से युत चन्द्रमा लग्न, सप्तम, अष्टम और द्वादश भावों में स्थित होकर शुभ दृष्टि से हीन हों तथा शुभग्रह केन्द्रेतर भावों में स्थित हों तो जातक के लिए मृत्युकारक होता है ॥

शशिन्यरिविनाशगे निधनमाशु पापेक्षिते
शुभैरथ समाष्टकं दलमतश्च मिश्रेक्षिते ।
असद्भिरवलोकिते बलिभिरत्र मासं शुभे
कलत्रसहिते च पापविजिते विलग्नाधिपे ॥

छठे, आठवें भाव में यदि चन्द्रमा स्थित हो और पापग्रह से दृष्ट हो तो जातक की सद्यः मृत्यु होती है। उक्त चन्द्रमा यदि शुभग्रहों से दृष्ट हो तो जातक की आयु ८ वर्ष होती है। उक्त चन्द्रमा यदि मिश्रित (शुभ-पाप दोनों) ग्रहों से दृष्ट हो तो जातक ४ वर्ष जीवित रहता है। ग्रहयुद्ध में पापग्रहों से पराजित लग्नेश यदि शुभग्रह हो और सप्तम भाव में स्थित होकर पापग्रहों से दृष्ट हो तो जातक एक मास पर्यन्त जीवित रहता है ॥

छठे, आठवें भाव में स्थित चन्द्रमा वैसे भी अनिष्टकारक होता है और यदि पाप दृष्ट हो तो मारकशक्ति सम्पन्न होता है तथा जातक को ८ वर्ष के भीतर मृत्यु देता है। यही चन्द्रमा शुभ और पाप दोनों प्रकार के ग्रहों से दृष्ट हो तो जातक की आयुष्य चार वर्ष होती है। उपर्युक्त कथन से निम्नलिखित तथ्य स्पष्ट होते हैं-

यदि द्रष्टाग्रहों में—तीन शुभग्रह और एक पापग्रह हों तो सात वर्ष, तीन शुभग्रह और दो पापग्रह हों तो पाँच वर्ष, दो शुभग्रह और तीन पापग्रह हों तो दो वर्ष तथा एक शुभग्रह और तीन पापग्रह हों तो एक वर्ष जीवित रहता है।

वर्षान्मारयति शशी षष्ठाष्टमराशिसंस्थितो लग्नात् ।
सद्यः क्रूरैर्दृष्टः सौम्यैरब्दाष्टकाच्चैव ॥
अशुभशुभैः सन्दृष्टे वर्षचतुष्केण निर्दिशेदन्तम् ।
अनुपातः कर्तव्यः प्रोक्तादूनाधिकैर्दृष्टे' ॥ सारावली

लग्न से यदि चन्द्रमा ६ या ८वें स्थान में हो, तो १ वर्ष के ल गभग में मृत्यु करता है । यदि क्रूर ग्रहों से दृष्ट हो तो शीघ्र ही तथा शुभग्रहों से दृष्ट हो, तो ८ वर्ष में एवं यदि शुभाशुभ ग्रहों से दृष्ट हो, तो अनुपात से आगत वर्ष में मृत्यु को करता है ॥

इस योग के सम्बन्ध में विशेषता यह है कि यदि शुक्लपक्ष में रात्रिजन्म हो और कृष्णपक्ष में यदि दिवाजन्म हो तो योग प्रभावहीन होता है ।

अशुभसहिते ग्रस्ते चन्द्रे कुजे निधनाश्रिते
जननिसुतयोर्मृत्युर्लग्ने रवौ तु सशस्त्रजः ।
उदयति रवौ शीतांशौ वा त्रिकोणविनाशगै-
निधनमशुभैर्वीर्योपेतैः शुभैरयुतेक्षिते ॥

राहु से ग्रस्त चन्द्रमा यदि पापग्रह से युत हो और वह चन्द्रमा जन्माङ्ग के अष्टम भाव के अतिरिक्त किसी भाव में स्थित हो तथा मङ्गल अष्टम भावगत हो तो माता के सहित जातक का नाश करता है।

उक्त योग में सूर्य यदि लग्नस्थ हो तो शस्त्राघात (आपरेशन आदि) से मृत्यु होती है।

सूर्य अथवा चन्द्रमा लग्नगत हो; पंचम, नवम और अष्टम भावों में बलवान् पापग्रह स्थित हों तथा सूर्य अथवा चन्द्रमा पर बलवान् शुभग्रहों की दृष्टि और योग न हो तो माता सहित जातक की मृत्यु होती है ॥

बोध प्रश्न

1. ज्योतिष शास्त्र में "बलारिष्ट" का तात्पर्य है—
   (क) दीर्घायु का योग (ख) राजयोग की प्राप्ति (ग) बाल्यावस्था में मृत्यु या अशुभ योग
   (घ) शिक्षा एवं विद्या संबंधी योग

2. "जातक पारिजात" के अनुसार बलारिष्ट काल की सीमा क्या है?
   (क) 5 वर्ष (ख) 8 वर्ष (ग) 10 वर्ष (घ) 12 वर्ष
3. निम्न में से कौन-सा ग्रह जीवन एवं प्राणशक्ति का मुख्य कारक माना गया है, जिसके निर्बल होने पर बलारिष्ट योग की संभावना होती है?
   (क) मंगल (ख) शुक्र (ग) बुध (घ) चन्द्रमा
4. यदि लग्नेश पापग्रहों से पीड़ित हो और चन्द्रमा निर्बल हो, तो ज्योतिष शास्त्र के अनुसार परिणाम क्या होगा?
   (क) राजयोग की प्राप्ति होगी (ख) दीर्घायु होगी (ग) बलारिष्ट होगा (घ) शिक्षा में बाधा होगी

3.5 संराश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि ज्योतिष शास्त्र में आयु का विचार अत्यंत गंभीर विषय माना गया है। जन्मकुंडली के माध्यम से जातक की अल्पायु, मध्यमायु या दीर्घायु का निर्णय किया जाता है। अल्पायु संबंधी योगों में विशेष स्थान बलारिष्ट को दिया गया है। 'बल' शब्द बाल्यकाल का द्योतक है और 'अरिष्ट' का अर्थ अशुभ या विघटनकारी योग से है। इस प्रकार बलारिष्ट का तात्पर्य है वह अशुभ ग्रहयोग जिसके कारण शैशव अथवा बाल्यकाल में ही जातक का जीवन संकट में पड़ जाता है और मृत्यु अथवा दीर्घ रोगों का सामना करना पड़ता है।

इस प्रकार, बलारिष्ट का सार यह है कि जन्म से लेकर पाँच, आठ या बारह वर्ष तक बाल्यकाल जीवन की सबसे असुरक्षित अवधि मानी जाती है। अलग-अलग ग्रंथकारों के मत भिन्न हैं,

अतः यह कहा जा सकता है कि बलारिष्ट का काल सामान्यतः जन्म से प्रारंभ होकर बारहवें वर्ष तक चलता है, यद्यपि विद्वानों के मतभेद के कारण इसमें पाँच अथवा आठ वर्ष तक की भी सीमाएँ कही गई हैं। इस सीमा के पश्चात् यदि जातक जीवन में स्थिरता प्राप्त कर लेता है तो बलारिष्ट का भय समाप्त हो जाता है और आगे की आयु के निर्धारण के लिए अन्य योगों का विचार किया जाता है।

बलारिष्ट का यह सारांश इस तथ्य को भी उद्घाटित करता है कि ज्योतिष शास्त्र बाल्यकाल की नाजुकता को भलीभाँति पहचानता है और ग्रहस्थितियों के आधार पर उसकी सुरक्षा या असुरक्षा का सूक्ष्म विवेचन करता है। यह केवल आयु का संकेत नहीं, बल्कि शैशवावस्था की असुरक्षा का दार्शनिक विवेचन भी है, जो हमें जीवन की अनिश्चितता और उसके संरक्षण की आवश्यकता का बोध कराता है।

3.6 बोधप्रश्नों के उत्तर

1.(ग)

2. (ख)

3. (घ)

4. (ख)

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

वृहज्जातकम् - चौखम्भा प्रकाशन

वृहत्पराशरहोराशास्त्र - चौखम्भा प्रकाशन

ज्योतिष सर्वस्व – चौखम्भा प्रकाशन

सरावली- चौखम्भा प्रकाशन

मानसागरी- चौखम्भा प्रकाशन

आयुर्निर्णय – डा. सुरेशचन्द्र मिश्र

3.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. बालारिष्ट का विचार करते हुए विस्तृत रूप से उल्लेख करें।

2. बालारिष्ट का कालखण्ड निर्धारित करते हुए विभिन्न आचार्यो का मत स्पष्ट करें।

इकाई - 4 योगारिष्ट योग

इकाई की संरचना

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 योगारिष्ट योग परिचय

4.4 योगारिष्ट योग

बोध प्रश्न

4.5 सारांश

4.6 बोधप्रश्नों के उत्तर

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

4.8 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना -

प्रस्तुत इकाई BAJY(N) – 301, खण्ड 1 के इकाई 4 के ' योगारिष्ट योग' से सम्बन्धित है। आप यह जानने कि कोशिस करेंगे कि भारतीय ज्योतिष शास्त्र में जन्म कुंडली को मानव जीवन का दर्पण माना गया है। ग्रहों की स्थिति और उनके संयोग न केवल जीवन की सुख सुविधाओं और-उपलब्धियों का संकेत देते हैं, बल्कि जीवन की कठिनाइयों, रोगों और यहाँ तक कि आयु की समाप्ति के योगों का भी निर्धारण करते हैं। जब हम कुंडली में मृत्यु या अकाल मृत्यु के संकेतों की चर्चा करते हैं, तो दो महत्त्वपूर्ण संकल्पनाएँ सामने आती हैं – बलारिष्ट और योगारिष्ट। बलारिष्ट जहाँ शैशवावस्था करता है बाल्यकाल) में मृत्यु या कठिनाई को इंगित), वहीं योगारिष्ट उस स्थिति को निरूपित करता है जब जातक आगे चलकर युवा अवस्था या जीवन के किसी विशिष्ट समय में गंभीर संकट या अकाल मृत्यु का सामना करता है।

यह विषय केवल ज्योतिषीय ही नहीं, बल्कि दार्शनिक और सांस्कृतिक दृष्टि से भी गहन है, क्योंकि मृत्यु को भारतीय परंपरा में जीवन का अविभाज्य सत्य और पुनर्जन्म के मार्ग का एक पड़ाव माना गया है। अतः योगारिष्ट पर विचार करते समय हमें केवल ग्रह-योगों की गणना ही नहीं करनी चाहिए, बल्कि उसके दार्शनिक और शास्त्रीय महत्व को भी समझना चाहिए।

1.2 उद्देश्य

- ❖ योगारिष्ट योग को आप समझ सकेंगें।
- ❖ योगारिष्ट योग के योगारिष्ट का काल निर्धारण को आप समझ सकेंगे।
- ❖ योगारिष्ट की ऐतिहासिक परम्परा आप जान सकेंगे।
- ❖ विभिन्न ग्रन्थों के अनुसार योगारिष्ट योग को आप समझ सकेंगे।

4.3 योगारिष्ट योग परिचय

आयु के निर्णय हेतु जन्मकुंडली में सबसे पहले अरिष्ट योगों को देखने का निर्देश दिया है। जब तक अरिष्ट योगों का विचार नहीं किया जाएगा, तब तक आयु के संबंध में सटीक निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता। योगारिष्ट योग विशेषकर आयु को अल्प करने वाला योग है। ज्योतिष शास्त्र एक अत्यंत गूढ़ है, जो मानव जीवन के प्रत्येक पक्ष का सूक्ष्म विवेचन करता है। इसमें आयु,

स्वास्थ्य, सुख-दुःख, लाभ-हानि, जन्म-मरण आदि के विषय में गहन विचार किया गया है। आयु के निर्धारण में विशेष रूप से अरिष्ट योगों का महत्वपूर्ण स्थान माना गया है। अरिष्ट योगों का सामान्य अर्थ है—ऐसा ग्रहयोग जो जातक के जीवन में किसी प्रकार की विपत्ति, रोग, कष्ट अथवा अल्पायु का कारण बने। इन्हीं अरिष्ट योगों में एक विशेष प्रकार का योग है योगारिष्ट योग।

योगारिष्ट शब्द दो भागों से बना है—'योग' और 'अरिष्ट'। यहाँ 'योग' का अर्थ है ग्रहों का विशेष संयोग अथवा स्थिति, जबकि 'अरिष्ट' का अर्थ है अनिष्ट, कष्ट या मृत्यु। इस प्रकार योगारिष्ट योग वह विशेष ग्रहस्थिति है जिसके कारण जातक को अल्पायु प्राप्त होती है अथवा जीवन के आरंभिक समय से ही रोग एवं संकटों का सामना करना पड़ता है।

ज्योतिष शास्त्र में अरिष्ट योगों का विशेष महत्व है, क्योंकि ये जातक की आयु और जीवन की स्थिरता से प्रत्यक्ष संबंध रखते हैं। इनमें बलारिष्ट, सद्यरिष्ट और योगारिष्ट प्रमुख माने जाते हैं। बलारिष्ट जहाँ मुख्यतः शैशव और बाल्यकाल की आयु को प्रभावित करता है, वहीं योगारिष्ट का प्रभाव शैशव से आगे बढ़कर किशोरावस्था और युवावस्था तक दिखाई देता है। आचार्यों ने स्पष्ट किया है कि योगारिष्ट योग का प्रभाव केवल जन्म के प्रथम कुछ वर्षों तक सीमित नहीं रहता, बल्कि लगभग बीस वर्ष तक जातक की आयु को संकटग्रस्त बनाए रखता है। इस प्रकार देखा जाए तो आचार्यों और ग्रंथों के मतों में थोड़े बहुत भेद अवश्य हैं, किंतु सभी इस बात पर सहमत हैं कि योगारिष्ट योग की आयु सीमा बलारिष्ट से अधिक विस्तृत है और इसका प्रभाव प्रायः बीस वर्ष तक रहता है। यह तथ्य ज्योतिष शास्त्र की गंभीरता और गहनता को स्पष्ट करता है, जहाँ जन्मकुंडली के सूक्ष्म योगों के आधार पर जातक के जीवन की दिशा और अवधि का अनुमान लगाया जा सकता है।

4.4 योगारिष्ट योग

हरिजपाद्धरगे विबले विधौ निखिलपापदृशा सहिते ततः ।
यदि रवौ तनुपे विधुवीक्षिते समृदुगे मरणं नवमेऽब्दके ॥

लग्नेश से आठवें स्थान में निर्बल चन्द्रमा समस्त पापग्रहों से दृष्ट हो । यदि लग्नेश सूर्य (सिंह लग्न) शनि से युक्त हो तथा उस पर चन्द्रमा की दृष्टि हो तो नवें वर्ष में बालक का मरण हो जाता है । सारावली में बताया गया है कि जन्म समय में सूर्य व शनि से युत शुक्र हो तथा उस पर गुरु की दृष्टि हो तो बालक की आयु नौ वर्ष होती है ।

शुक्रो रविशनिसहितो मारयति नरं सदा प्रसवकाले।
दृष्टोऽपि देवगुरुणा नवभिर्वर्षैर्न सन्देहः ॥ सारावली

रवि व शनि से युक्त शुक्र यदि जन्म समय में हो तो तुरन्त मृत्यु देता है।

किन्तु इस योग में शुक्र पर बृहस्पति की दृष्टि हो तो आयु नौ वर्ष होती है। ग्रन्थकार ने चन्द्रमा की दृष्टि ने पर नौ वर्ष की आयु स्वीकार की है तथा सर्य को लग्नेश मान कर इस योग का परिसीमन केवल सिंह लग्न तक हो कर दिया है।

दस वर्ष की आयु के योग-

कोले कोविदलोकिते मृगलवे मृत्युर्दशाब्देऽसुरे-
तुयें केन्द्रवधारिगे सुषिमगौ तद्वद्व्यये पर्वरौ।
पाते खे कुतले कुजे तनयगेऽयोग्रेक्षिते कण्टके
भोगीशे मरणं शिशोर्दशमिते वर्षेऽथवा षोडशे ॥

शनि, मकर के नवांश में स्थित हो, तथा बुध से दृष्ट हो।

चतुर्थ स्थान में राहु तथा केन्द्र, षष्ठ व अष्टम स्थानों में चन्द्रमा हो तो दसवें वर्ष में मृत्यु हो जाती है।

बारहवें स्थान में चन्द्रमा, चौथे या दसवें स्थान में राहु और पांचवें स्थान में मंगल हो तब भी उक्त फल होता है।

केन्द्र स्थानों में स्थित राहु यदि पाप ग्रहों से दृष्ट हो तो बालक दसवें या सोलहवें वर्ष में मृत्यु को प्राप्त होता है।

मदनिकेतगते हरिलोकिते शुभदृशारहितेऽसुरनायके।
दशमितेऽर्कमिते किमु हायने शिशुजनस्य मृतिं कथये बुधः ॥

यदि सातवें स्थान में राहु हो तथा उसे सूर्य व चन्द्रमा देखते हों तथा शुभ ग्रहों की दृष्टि न हो तो दसवें या बारहवें वर्ष में वालक की मृत्यु बतानी चाहिए।

ग्यारह वर्ष की आयु के योग-

पुण्यादृष्टे पुष्पवदभ्यां युते ज्ञे यद्वा सेने बोधने भव्यदृष्टे।

आहो दुष्टस्थानकेऽन्योन्यभस्थौ वागीशास्त्रावेति मृत्युं शिवाब्दैः ॥

बुध यदि सूर्य व चन्द्रमा से युक्त हो तथा उस पर शुभ ग्रहों की दृष्टि न हो।

बुध यदि सूर्य से युत हो तथा उस पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो।

छठे, आठवें व बारहवें स्थान में कहीं गुरु की राशि (६, १२) में मंगल हो तथा मंगल की राशि (१,८) में गुरु हो।

इन योगों में ग्यारह वर्ष तक की आयु होती है।

सूर्य व बुध की एक साथ स्थिति कोई दुर्लभ योग नहीं है। उस पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो, ऐसे उदाहरण भी सैकड़ों देखे जा सकते हैं।

बारह वर्ष की आयु के योग :

हिमकरे हरिगे हरगे भगे यमधुते भदृशा सहिते ततः।
अलिलवे मृदुगे मिहिरेरक्षिते मरणमेति शिशू रविहायने ॥

सिंह राशि में चन्द्रमा हो और आठवें स्थान में सूर्य व शनि हो तथा उन पर शुक्र की दृष्टि हो।

वश्चिक के नवांश में शनि हो तथा उस पर सूर्य की दृष्टि हो तो बारहवें वर्ष में बालक की मृत्यु हो जाती है।

जननपोदयपौ तपनान्वितौ त्रिकगतौ न शुभान्वितलोकितौ।
अथ गुरौ कुजभे गुरुभे कुजे किमिनभे मृदुगे मृदुभे भगे ॥
किमिनजे युधि मासि तनौ तथा मृतिरघेऽन्त्यघनार्थलयेऽत्ययः।
रविमितेऽष्टमिते किमु वत्सरे शमलपद्धतिबन्धत ईरितः ॥

छठे, आठवें, बारहवें भाव में यदि लग्नेश तथा जन्म राशीश हों तथा वे सूर्य से युक्त हों और शुभग्रहों से युत या दृष्ट न हों।

गुरु व मंगल का अन्योन्य राशि सम्बन्ध हो, अर्थात् मंगल की राशि में गुरु व गुरु की राशि में मंगल हो।

यही अन्योन्य राशि सम्बन्ध शनि व सूर्य का हो अथवा अष्टम में शनि तथा लग्न में चन्द्रमा हो तो इन योगों में बारह वर्ष की आयु समझनी चाहिए।

प्रथम, द्वितीय, अष्टम व द्वादश स्थानों में पापग्रह हो तो आठवें या बारहवें वर्ष में मलद्वार के अवरोध से मृत्यु होती है।

तेरह वर्ष की आयु के योग :

जनुषि वक्रिणि मन्दगतौ क्षतौ सतिमिरेऽथ तुलाधरभागगे।
मृदुगतौ मरुतां गुरुणेक्षिते त्रिविधुसम्मित हायनकेऽत्ययः॥

यदि जन्म समय में व्यय स्थान में वक्री शनि हो तथा वह राहु से युक्त हो, अथवा तुला राशि के नवांश में शनि हो तथा उस पर गुरु की दृष्टि हो तो इन योगों में तेरहवें वर्ष में बालक का मरण होता है।

चौदह वर्ष की आयु के योग :

याम्ये यमेनरुधिराहिबुधैरुत ज्ञ-
दृष्टेऽबलाल गते मृदुगेऽथ सार्कौ।
साऽथवा तमसि रिफ उतास्तगेऽस्त्र
ऽर्के कण्ठगे शिशुरुपैति मृति वृषादे॥

आठवें स्थान में शनि, सूर्य, मंगल, राहु व बुध हों। कन्या के नवांश में शनि हो तथा उस पर बुध की दृष्टि हो। बारहवें स्थान में शनि या मंगल से युक्त राहु हो।

सातवें स्थान में मंगल और तीसरे स्थान में सूर्य हो तो इन योगों में उत्पन्न बालक की आयु चौदह वर्ष होती है।

पन्द्रह वर्ष की आयु के योग :

मिहिरे दरभे जले जडांशौ न खगे केन्द्र उतोरगेण दृष्टे।
हरिभागगते पतङ्ग-पुत्रे मरणं माणवकस्य वासराब्दे॥

छठे स्थान में सूर्य, चतुर्थ स्थान में चन्द्रमा हो तथा केन्द्र स्थानों में ग्रह न हो।

सिंह के नवांश में शनि हो और वह राहु से दृष्ट हो तो बालक की मृत्यु पन्द्रहवें वर्ष में हो जाती है।

सोलह वर्ष की आयु के योग

कर्कांशगे केतुनिरीक्षितेऽर्कजे सर्पातिरब्दे नृपसम्मिते मृतिः ।
व्याये यमे हंसकरे त्रिकोणगे केन्द्रस्थयोर्नेज्यभयोस्ततस्तमे ॥
वनेऽम्बरे राजनि सङ्गरे दरे केन्द्रेऽथ चन्द्रो हरिगो भगोऽष्टमे ।
द्विष्युप्रयुक् चारुदृशोनितोऽङ्गप आपोविलमे षोडशवत्सरेऽत्ययः ॥

शनि कर्क राशि के नवांश में हो तथा उस पर केतु की दृष्टि हो तो सोलहवें वर्ष में सांप के काटने से मृत्यु होती है।

तीसरे या ग्यारहवें में शनि हो, त्रिकोण (५, ६) स्थानों में सूर्य हो तथा केन्द्र में गुरु व शुक्र न हों।

चतुर्थ या दसवें स्थान में राहु हो, षष्ठ, अष्टम या केन्द्र में चन्द्रमा हो।

सिंह राशि का चन्द्रमा हो तथा छठे व आठवें स्थानों में पापग्रह से युक्त शनि हो तथा उस पर शुभग्रहों की दृष्टि न हो, साथ ही लग्नेश आपोक्लिम स्थानों में हो।

इन योगों में उत्पन्न बालक की सोलहवें वर्ष में मृत्यु हो जाती है।

सत्रह वर्ष की आयु के योग :

पाते न पूज्ययुतवीक्षित उग्रदृष्टे-
ऽङ्गे सालिकेसरिधटेऽथ पुरेशदृष्टे ।
स्वांशे शनौ किमजभे भगुरू यमेन -
भाजोः कुलीरघटयोर्मरणं घनाब्दे ॥

सिंह, तुला या वृश्चिक लग्न में जन्म हो तथा राहु लग्न में ही स्थित हो और उस पर अन्य पापग्रहों की दृष्टि हो, गुरु व शुक्र की दृष्टि न हो।

शनि अपने ही नवांश में हो तथा उस पर लग्नेश की दृष्टि हो।

मेष में गुरु शुक्र हों, कर्क कुम्भ में शनि सूर्य हों।

इन योगों में उत्पन्न जातक सतह वर्ष में शरीर त्याग देता है।

अट्ठारह वर्ष की आयु के योग :

चेत्कण्टके कलहपो निजनिम्नभस्थो
रन्ध्रे बुधेऽर्ककरलुप्त उतोग्रखेदैः ।
स्वान्तोत्थकल्पकलिगैविमलैविवीय्य-
र्वान्योन्यराशिसहितौ हरिजायुरीशौ ॥
नो शोभनौ किमुत तौ परिपन्थिभावे
प्रान्त्ये न पूज्यसहितावथ काव्यराशौ ।
आद्र्येभ इज्यभ उतारगिरीशयो रुग्-
रन्ध्रानुजेषु मृ तिरष्टधरोन्मितेऽब्दे ॥

अष्टमेश अपनी नीच राशि में किसी केन्द्र स्थान में स्थित हो तथा अष्टम स्थान में अस्त बुध विद्यमान हो।

लग्न, सप्तम, अष्टम में पापग्रह हों व शुभग्रह निर्बल हों।

लग्नेश व अष्टमेश में परस्पर राशि सम्बन्ध हो, अर्थात् लग्नेश अष्टमेश की राशि में हो और अष्टमेश लग्नेश की राशि में हो और वे शुभ ग्रह न हों।

षष्ठ या अष्टम स्थान में लग्नेश या अष्टमेश हों और वे गुरु से युक्त न हों।

शुक्र की राशि (२, ७) में बृहस्पति और बहस्पति की राशि (६, १२) में शुक्र हो।

तृतीय, षष्ठ व अष्टम स्थान में मंगल व बृहस्पति हो।

इन योगों में उत्पन्न बालक की आयु अट्ठारह वर्ष होती है।

उन्नीस वर्ष की आयु के योग :

कर्के कुजे खतिलके हरिणे समन्दा-
च्छे स्तङ्गते विदि किमिज्यलवेऽहिदृष्टे ।
मन्देऽङ्गपे शुभदृशा न युते तदीशे
स्वोच्चांशके यदि मृतिर्नवभूमितेऽब्दे ॥

मंगल अपनी नीच राशि कर्क में हो, सूर्य मकर में हो तथा वह शनि शुक्र से युक्त हो और बुध अस्त हो।

बृहस्पति के नवांश में शनि हो, उस पर राहु की दृष्टि हो और लग्नेश पर शुभग्रह की दृष्टि न हो और लग्नेश की अधिष्ठित राशि का स्वामी अपने उच्च नवांश में हो।

इन योगों में जातक की आयु उन्नीस वर्ष होती है।

बोस वर्ष की आयु के योग :

कालेऽर्केन्द्र नवभुवनगोऽगु: कुजोऽस्तेऽच्चितेऽर्थे-
ऽथोग्रा: केन्द्रे हरिजरमणो जन्यगो जन्मभेश: ।
सत्सन्दृष्टोऽथ वपुषि कवीज्यो चितीनाहिभौम-
र्वाङ्गाधीशो विबुधसहितो नान्यदृष्टे विलग्ने ॥

सूर्य चन्द्रमा आठवें स्थान में हों, चतुर्थ या नवम स्थान में राहु हो, सातवें स्थान में मंगल व दूसरे स्थान में बृहस्पति हो।

केन्द्र में पापग्रह हों, लग्नेश अष्टम स्थान में हो और जन्म राशि के स्वामी पर शुभ ग्रह की दृष्टि न हो।

लग्न में शुक्र व गुरु हों तथा पांचवें स्थान में सूर्य, मंगल व राहु हों।

लग्नेश यदि बुध से युक्त हो तथा लग्न पर किसी ग्रह की दृष्टि न हो और अष्टमेश आठवें स्थान में हो तो जातक की आयु बीस वर्ष होती है।

निर्याणस्थे निपतनपतौ वा शशाङ्काष्टमस्थै:
पापै: सौम्यैस्त्रिरिपुनवमान्त्याश्रितैर्मान्द्यमृत्यो: ।
राकेशे वोदय इनकुजौ चन्दिरे धीदयास्थे
देवाचाय्यें यदि चरगृहान्तर्लवे संस्थितेऽथो ॥

चन्द्रमा से आठवें स्थान में पापग्रह हो। तीसरे, छठे, नौवें और बारहवें स्थानों में शुभग्रह हों और छठे, आठवें स्थान में चन्द्रमा हो।

लग्न में सूर्य मंगल हों, नवम या पचम में चन्द्रमा हो और चर राशि के मध्य भाग में बृहस्पति हो।

इन योगों में उत्पन्न जातक की आयु बीस वर्ष होती है।

केन्द्रे क्रूराः शशिशुभदृशोना भपेऽरौ लये वा
केन्द्र पापैर्घनजननभे सार्क उग्रेक्षिते वा।
मन्दर्क्षेऽर्के यमजनकभे लक्ष्मणे वा हितेऽहौ
केन्द्रोपेते धवलकिरणेऽन्तो नखाब्दैर्नराणाम् ॥

केन्द्र में पापग्रह हों, उन पर चन्द्रमा या शुभग्रह की दृष्टि न हो तथा चन्द्रमा छठे या आठवें स्थान में हो।

केन्द्र में पापग्रह हों लग्न व चन्द्रमा सूर्य से युक्त हो और उन पर पापग्रहों की दृष्टि हो।

शनि की राशि में सूर्य और सूर्य की राशि में चन्द्रमा हो।

चतुर्थ स्थान में राहु और केन्द्र में चन्द्रमा हो।

इन योगों में उत्पन्न मनुष्यों का बीसवें वर्ष में देहान्त हो जाता है।

अभव्यराश्यंशगता विहङ्गा सर्वेऽथवा श्रेष्ठबलाधिशाली।
चारुग्रहः केन्द्रगतो न कश्चि कलौ भवेद्विंशतिवर्षमायुः ॥

पापग्रहों की राशि या नवांश में सब ग्रह हों। केन्द्र में सर्वश्रेष्ठ बली शुभग्रह हो और अष्टम में कोई ग्रह न हो तो बालक की आयु बीस वर्ष समझनी चाहिए।

होरापाले सशुभेऽङ्गे न कैश्चिद् दृष्टे काले कलिपे वा कलेशे।
क्षीणे क्रूरे कलिगे कालपाले केन्द्रेऽङ्गेशे विबले वा शनीनौ ॥
केन्द्रेऽत्रोऽङ्गे विगतोऽङ्गपेऽथो स्वायुः प्रान्त्ये व्यहिचन्द्रा खला वा।
सन्तोऽर्य्यङ्कान्त्यभुजस्थाः शनीन्दू मान्द्यायुःस्थौ नखवर्षे मृतिः स्यात् ॥

लग्न में शुभग्रह से युक्त लग्नेश हो, अष्टमेश अष्टम में हो और उस पर किसी ग्रह की दृष्टि न हो।

चन्द्रमा क्षीण हो, आठवें स्थान में पापग्रह हो, अष्टमेश केन्द्र में हो और लग्नेश निर्बल हो।

केन्द्र में शनि सूर्य हों, मंगल लग्न में हो तथा लग्नेश निर्बल हो।

दूसरे, आठवें व बारहवें स्थान में पापग्रह हों तथा वे राहु व चन्द्रमा से युक्त न हों।

तीसरे, छठे, नवें व बारहवें स्थान में शुभग्रह हों और षष्ठ व अष्टम स्थान में शनि व चन्द्रमा हों।

इन योगों में उत्पन्न मनुष्यों की आयु बीस वर्ष होती है।

बोध प्रश्न

1. ज्योतिष शास्त्र में "योगारिष्ट योग" का मुख्य प्रभाव किससे संबंधित है?
   (क) विवाह का समय
   (ख) अल्पायु और मृत्यु का संकेत
   (ग) धन की प्राप्ति
   (घ) शिक्षा की सफलता

2. सद्यरिष्ट, बलारिष्ट और योगारिष्ट में से सबसे दीर्घ अवधि तक प्रभावी कौन-सा है?
   (क) सद्यरिष्ट
   (ख) बलारिष्ट
   (ग) योगारिष्ट
   (घ) इनमें से कोई नहीं
3. योगारिष्ट योग का प्रभाव मुख्यतः किस आयु तक बताया गया है?

   (क) 4 वर्ष तक (ख) 8 वर्ष तक (ग) 12 वर्ष तक (घ) 20 वर्ष तक

4. निम्नलिखित में से कौन-सा अरिष्ट सबसे अल्प अवधि तक प्रभावी होता है?

   (क) बलारिष्ट (ख) सद्यरिष्ट (ग) योगारिष्ट (घ) आयुरिष्ट

4.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि योगारिष्ट का जातक के जीवन में कितने वर्ष तक रहाता है और विभिन्न ग्रथों के अनुसार योगारिष्ट योग को जाना कि कौसे कुण्डली में निर्माण होता है। ऐसा अरिष्ट जो विशेष योग के कारण उत्पन्न हो। यह केवल शैशवावस्था तक सीमित नहीं है, बल्कि किशोरावस्था और युवावस्था की आरम्भिक सीमा तक जीवन को प्रभावित करता है। बलारिष्ट को जहाँ प्रायः बारह वर्ष तक माना गया है, वहीं योगारिष्ट का प्रभाव लगभग बीस

वर्ष तक चलता है। यही कारण है कि योगारिष्ट को "दीर्घकालिक अरिष्ट" कहा जाता है।

योगारिष्ट योग जीवन के प्रारम्भिक दो दशकों तक मृत्यु का भय उपस्थित करता है। विभिन्न ग्रंथकारों के मतों में कुछ अंतर अवश्य है, किन्तु सभी इस बात पर सहमत हैं कि बलारिष्ट की अपेक्षा योगारिष्ट अधिक दीर्घकाल तक प्रभावी रहता है। शास्त्रीय दृष्टि से देखा जाए तो योगारिष्ट केवल ग्रहों की स्थिति का योग मात्र नहीं है, बल्कि यह कर्मफल की व्याख्या भी है, जिसमें यह माना गया है कि जन्म-जन्मान्तर के शुभाशुभ कर्म ही जीवन की आयु का निर्धारण करते हैं।

सारांश रूप में यह कहा जा सकता है कि योगारिष्ट योग जातक के जीवन का वह काल है जब वह निरन्तर मृत्यु के भय से ग्रसित रहता है। यह भय केवल बाल्यकाल तक ही सीमित नहीं होता, बल्कि युवा अवस्था की दहलीज तक उसका पीछा करता है। अतः ज्योतिषीय दृष्टि से यह योग अत्यन्त गम्भीर और शोध योग्य है।

4.6 बोधप्रश्नों के उत्तर

1.(ख)

2. (ग)

3. (घ)

4. (ख)

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

वृहज्जातकम् - चौखम्भा प्रकाशन

वृहत्पराशरहोराशास्त्र - चौखम्भा प्रकाशन

सरावली- चौखम्भा प्रकाशन

आयुर्निर्णय- डा. सुरेशचन्द्र मिश्र

4.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. योगारिष्ट योग क्या है उल्लेख करें।
2. योगारिष्ट योग विचार करते हुए विस्तृत रूप से उल्लेख करें।
3. योगारिष्ट का कालखण्ड निर्धारित करते हुए विभिन्न आचार्यो का मत स्पष्ट करें।

खण्ड -2

मातृ-पितृ अरिष्ट एवं अन्य योग विचार

इकाई -1 मातृ अरिष्ट

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 ज्योतिष शास्त्र में द्वादश भाव

1.4 चतुर्थ भाव फल एवं मातृ अरिष्ट विचार

1.5 पाराशर होरा शास्त्र में मातृ अरिष्ट विचार

1.6 सारावली ग्रन्थ के अनुसार मातृ अरिष्ट विचार

1.7 फल दीपिका ग्रन्थ के अनुसार मातृ अरिष्ट विचार

1.8 सारांश

1.9 पारिभाषिक शब्दावली

1.10 अभ्यास प्रश्न

1.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.12 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1.13 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी.ए.जे.वाई .(N)-301 पाठ्यक्रम से सम्बंधित है। इस इकाई का शीर्षक 'मातृ अरिष्ट" हैं|

प्राचीन ज्योतिष शास्त्रीय ग्रंथों मैं अरिष्ट योग के विषय मैं विस्तृत वर्णन प्राप्त होता हैं। अरिष्ट क्या हैं इस पर विचार किया जाय तो यह नकारात्मक फल को देने वाला होता हैं। मनुष्य का जन्म होते ही उसकी कुंडली के अनुसार उस जातक का अरिष्ट योग कब कब होगा इन सभी का ज्ञात ज्योतिष शास्त्र के अनुसार किया जाता हैं। जिससे की आने वाले अरिष्ट यानि कष्ट का पता चल सके। वस्तुत देखा जाय तो मनुष्य का जन्म होते ही उसे चारों अवस्थाओं से होकर गुजरना पड़ता हैं। जिसमें बाल्यावस्था, कुमारावस्था, युवा, वृद्धावस्था, तथा मृत् अवस्था आते हैं मनुष्य को अपनें कर्म के अनुसार इन अवस्थाओं के माध्यम से सुख दुख का भोग करना पड़ता हैं जो कि विधि का लक्ष्य को हैं। हमारे अष्टादश आचार्यों ने भी ग्रहों को बाल, युवा, कुमार, वृद्ध अवस्थाओं मैं विभक्त किया हैं जिसके माध्यम से जातक को फल की प्राप्ति होती रहती हैं। अरिष्ट का ज्ञान ज्योतिष शास्त्र के अनुसार जन्मागं कुंडली के आधार पर किया जाता हैं। ज्योतिष शास्त्र पूर्व मैं ही घटनाओं का ज्ञान कर लेता हैं। चार प्रकार की आयु मैं वह जातक अल्पायु, मध्यमायु,पूर्णायु, या अमितायु,है या नहीं इन सभी का ज्ञान ज्योतिष शास्त्र के अनुसार पूर्व मैं ही किया जाता हैं। आयु का एक छोटा भाई ही अरिष्ट कहलाता हैं। ग्रहों के संयोग से होने वाले नकारात्मक प्रभाव के नाम को अरिष्ट कहा जाता हैं। इसी क्रम मैं हम। मातृअरिष्ट, द्वादश भाव, चतुर्थ भाव मैं स्थित ग्रहों के द्वारा मातृ अरिष्ट का विस्तार पूर्वक अध्ययन करेंगे।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप-

- मातृ अरिष्ट के बारे में जान सकेंगे l
- अरिष्ट क्या हैं ? इस विषय से अवगत हो सकेंगे l
- चतुर्थ भाव से मातृ अरिष्ट के बारे में जान सकेंगे।l
- ज्योतिष शास्त्र में मातृ अरिष्ट क्या है? अवगत हो पाएँगे।l
- ज्योतिष शास्त्र में अरिष्ट ज्ञान को समझ सकेंगे l

1.3 ज्योतिष शास्त्र में द्वादश भाव विचार

प्राय देखने में आता है की ज्योतिष शास्त्र में ही अरिष्ट योग या मातृ अरिष्ट के विषय में वर्णन किया गया हैं । परन्तु मातृ अरिष्ट का विचार जन्मकुंडली के अनुसार द्वादश भावों में से चतुर्थ भाव से मातृ अरिष्ट का विचार किया जाता हैं । अरिष्ट से पूर्व 12 भावों का ज्ञान तथा अलग अलग भावों का विचार करना आवश्यक होता है की जिससे हमें भावों क ज्ञान हो सके । यहाँ पर भावों में बारे में बताया जा रहा हैं।

1. लग्न भाव (तनुभाव) से जातक के मुख्य मुख्य वस्तुओं का विचार किया जाता हैं। शरीर, शरीरोग, सुख, दुःख, बुढापा, ज्ञान, जन्मस्थान, कीर्ति, बल, गौरव, राज्य, नम्रता, स्वभाव, आयु, शान्ति, अवस्था व्यक्तित्व, स्वाभिमान, कार्य, चोट, निशान, अपमान, त्वचा, वर्ण, इत्यादि विषयों का विचार किया जाता हैं।

2. धन भाव से जातक के वित्त, संचित धन, परिवार, कुटुम्ब, चक्षुवाणी, मुख की वाचालता, भाषण कला, भोजन का स्वाद, क्रय विक्रय, दान, धनप्राप्ति का प्रयत्न, आस्तिकता, परिवार का उत्तरदायित्व, नख, चलने का ढंग, नाक, जीभ, वस्त्र , भोग विलास, मित्र, नौकर, मृत्यु, विचारधारा, प्रसन्नता, धन विनयशीलता, वैराग्य, बदनामी, विद्या, यात्राएँ, मन की स्थिरता, आदि का विचार किया जाता हैं।

3. तृतीय (सहज भाव) से भाई, पराक्रम, अनिष्ट, पुरूषार्थ, परिश्रम, कान, मुँह, टाँगें, मुजा. चित्त की वेचैनी, स्वर्ग, पर सन्ताप, स्वप्न, बहादुरी, मित्र, यात्रा, गला, कुभोजन, घन का बंटवारा, आभूषण, गुण, अभिरूचियाँ, लाभ, शरीर की बढ़ोत्तरी कुल का स्तर, नौका, सहयोगी, वाहन, छोटी यात्राएँ महान कार्य, पिता की मृत्यु, छाती, मामा आदि का विचार इस भाव से किया जाता है।

4. चतुर्थ या (सुख स्थान) से सुख, सम्पत्ति, वाहन, माता, मित्र वर्ग, प्रसिद्धि, मकान, यात्राएँ, बन्धु - बान्धव, मनोरथ, राजा, खजाना, श्वसुर, पशुधन, प्रेम प्रसंग, बाह्य सुख, पिता का व्यवसाय, भोजन, निद्रा, सुख, सिंहासन, यश, जन सम्पर्क, झूठे आरोप, गड़ा धन, गृह त्याग. चोरी गई वस्तु की दिशा का स्थान, धान्य सम्पदा आदि का विचार किया जाता हैं।

5. पंचमभाव से विद्या, बुद्धि, प्रबन्ध कुशलता, मन्त्रणा शक्ति, गूढ़ तान्त्रिक क्रियाएँ, सन्तान, शिल्प, कला कौशल, महान् कार्य, पैतृक धन, दूरदर्शिता, रहस्य, नम्रता, लगन,

समालोचना शक्ति, धन कमाने का ढंग, परम्परा से प्राप्त मन्त्री पद, गर्भ, पेट, भोजन की मात्रा, लेखन शक्ति आदि का विचार किया जाता हैं।

6. षष्ठ या शत्रु भाव से – शत्रु, रोग, मामा, युद्ध, सृजन, पागलपन, फुंसी फोड़े, कंजूसी, परिश्रम, ऋण, गर्मी, जख्म, नेत्ररोग, विषपान, निन्दा, चोरी, विपत्ति, भाइयों से झगड़ा, अंग भंग, नाभि, कमर, मूत्ररोग, भिक्षावृत्ति आदि का विचार करना चाहिए।

7. सप्तम भाव से पत्नी दाम्पत्य सुख दैनिक आय, मृत्यु, व्यभिचार, काम शक्ति, स्त्री में शत्रुता, रास्ता भटकना, पौष्टिक भोजन, सुगन्ध प्रयोग, सजने की प्रवृत्ति, भूल, कपडे प्राप्त करना वीर्य पवित्रता गुप्तांग दत्तक पुत्र अन्य देश अन्य स्त्री से उत्पन्न पुत्रादि व चाचा का विचार सप्तम भाव से करना चाहिए।

8. अष्टभाव से आयु, मृत्यु का कारण, मृत्यु प्रकार, गड़ा धन, वैराग्य, सुख, कष्ट, मुसीबत, गुप्तरोग, पत्नी का शारीरिक कष्ट, नाश, ऋण, राजकोप, पाप, शरीर कटना, शल्य चिकित्सा, क्रूर कार्य, जीवनरक्षा, मरणोपरान्त गति, गढ़ विजय, चोरी की आदत, वेतन, सूदखोरी, आलस्य आदि अष्टम भाव से विचार किया जाता हैं।

9. नवम भाव से दान, धर्म, त्याग, बलिदान, तीर्थयात्रा, तपस्या, गुरुभक्ति, चिकित्सा, मन की शुद्धि, ऐश्वर्य, पुत्र, पुत्री, पैतृक धन, राज्याभिषेक, जॉघ, सभी प्रकार की सफलता आदि का विचार नवम भाव से किया जाता है।

10. दशम भाव से राज्य, आज्ञा, मान सम्मान, प्रतिष्ठा, राज्यप्राप्ति, राजपद, सवारी, यश, धन ग्खना, वृद्धजन, कार्य- विस्तार, औषधि, कमर, सफलता, ख्याति, गौरव, नियन्त्रण, प्रशासन, आज्ञा, कृषि, रोजगार, खानदान, संन्यास, आकाश, वायुमार्ग की यात्रा, घुटना, आदि का विचार किया जाता हैं।

11 . एकादश भाव से लाभ, असफलता, सब प्रकार की उपलब्धि, भाई, गुलामी, आमदनी, विद्या, धन कमाने की शक्ति, घुटने, पदवी, सुखलाभ, धननाश, प्रेमिका की भेंट, मंत्रीपद, ससुर से लाभ, भाग्योदय, मनोरथ सिद्धि, आशा, कान, माता की आयु. निपुणता, कन्याएँ, पुत्रवधू, चाचा आदि का विचार इस भाव से किया जाता है।

12. द्वादश भाव से सब प्रकार की हानि, नेत्र, धननाश, धन का निवेश, भोग, निद्रा, विस्तर का सुख, विवाह में विलम्ब, पदयात्रा, कर्ज, मोक्ष, जन विरोध, अंग- भंग, अधिकार नाश, पदावनति, कैद, बन्धन, शरीर हानि, क्रोध, अन्य देश में बसना, पत्नी का नाश, गरीबी, कष्ट, शरीर विकार आदि का विचार द्वादश भाव से किया जाता हैं।

1.4 चतुर्थ भाव फल एवं मातृ अरिष्ट विचार

ज्योतिष शास्त्र में 'मातृ अरिष्ट' विचार का संबंध जातक की कुंडली में माता के स्वास्थ्य, जीवन और सुख से जुड़ा होता है। इसका विश्लेषण मुख्यतः चंद्र, चौथा भाव, उसकी दशा और उससे संबंधित ग्रहों के आधार पर किया जाता है। 'अरिष्ट' का अर्थ होता है कष्ट या हानि। अतः **मातृ अरिष्ट** का अर्थ हुआ **माता को होने वाले कष्ट या आयु पर संकट**। अगर कुंडली में मातृ अरिष्ट योग हो, तो जातक की माता को गंभीर स्वास्थ्य समस्याएं हो सकती हैं, या कम आयु प्राप्त हो सकती है।**जन्मांग के आधार पर** मातृ अरिष्ट **का विचार चतुर्थ भाव से किया जाता हैं, ग्रहों के अनुसार यदि शुभवर्ग बलवान शुक्र या चन्द्रमा केन्द्र में शुभग्रह से देखा जाता हो तो माता दीर्घायु होती हैं। यदि बलहीन सुखेश पष्ठ स्थान वा द्वादश स्थान में ही लग्न से पापदृष्ट या पापग्रह हो तो माता का नाश होता है। क्षीण चन्द्रमा अष्टम, पष्ठ, या द्वादश भावों में पापग्रह से युक्त हो, चतुर्थभाव पापग्रह से युक्त हो तो माता की निःसंदेह मृत्यु होती हैं। चतुर्थस्थान पापग्रह से दृष्ट हो तथा शनि ग्रह स्थित हो, अष्टमेश शत्रुगृह में या नीचराशि में हो तो** मातृ अरिष्ट **योग बनता हैं। यदि तृतीय और पंचम भाव में पाप ग्रह हो, चतुर्थेश शत्रु राशि में या नीच राशि हो तथा चन्द्रमा पापग्रह के साथ हो तो माता का नाश होता है।**

पातालेशः स्वराशौ शुभखचरयुतो भाग्यनाथेन युक्तः,
सामन्तः स्यात्ततश्चेत्सुरपतिगुरुणा वाहनेशस्तनुस्थः ।
संदृष्टो राजपूज्यस्तदनु च हिबुकाधीश्वरो लाभसंस्थो,
यानं पश्यन्नराणां निवहमभिमतं वाहनानां प्रदत्ते ।।

चतुर्थ भाव से यश, प्रतिष्ठा, उच्च पद एवं वाहन सुख का विचार किया जाता है। चतुरथेष अपनी राशि में नवमेश एवं शुभग्रह से युक्त हो तो जातक मण्डलेश्वर, सामन्त, पार्षद आदि पद को प्राप्त करता हैं। बृहस्पति की पूर्ण दृष्टि से युक्त चतुर्थेश लग्न में हो जातक पूज्य, प्रसिद्ध एवं लोकप्रिय होता है। बृहस्पति से दृष्ट चतुर्थेश एकादश भाव में हो तो जातक को

वाहनों की प्राप्ति होती है। चतुर्थेश चतुर्थ को देखे और चतुर्थेश को देखे तो भी जातक को वाहनों का सुख मिलता है। वस्तुतः चतुर्थ सुख स्थान एवं नवम भाग्य के नाम से जाना जाता हैं। जातक को सुख की प्राप्ति भाग्य से मिलता हैं। नवमेश एवं चतुर्थेश के परस्पर संबन्ध से अनेक प्रकार के सुख प्राप्त होते हैं।

स्वक्षेत्रे तुर्यनाथस्तनुपतिसहितः स्यादकस्माद्गृहाप्तिः,
सौहार्द वा सुहृदिद्धस्तदितरगृहगश्चेद्गृहाऽलाभयोगः ।
यावन्तः पापखेटा घनदशमगृहप्रान्त्यपैश्चेत् त्रिकस्था।

चौथा भाव माँ का भाव माना जाता हैं । यदि चतुर्थ भाव पीड़ित हो (शनि, राहु, केतु, पापग्रहों से ग्रसित), हो तो माता को कष्ट होता है। यदि चतुर्थ भाव का स्वामी नीच राशि का हो, अस्त हो या शत्रु राशि में हो, तो भी मातृ अरिष्ट योग माना जाता है। ग्रहों के अनुसार चंद्रमा माता का कारक ग्रह होता हैं।

यदि चंद्रमा राहु-केतु, शनि या मंगल से पीड़ित हो, तो माता को कष्ट हो सकता है। जन्म के समय चंद्रमा पाप ग्रहों के साथ हो या दृष्ट हो, तो माता की स्थिति कमजोर मानी जाती है। यदि चतुर्थ भाव का स्वामी पाप ग्रहों के साथ हो या पाप दृष्ट हो, और नीच/शत्रु राशि में हो तो मातृ अरिष्ट योग बनाता हैं । राशी के अनुसार भी माता का विचार किया जाता हैं। जेसे कर्क राशि भी माता की ही राशि मानी जाती है, इसलिए कर्क राशि का विचार भी करना चाहिए ।

1.5 पाराशर होरा शास्त्र में मातृ अरिष्ट विचार

प्राचीन ऋषियों ने ज्योतिष शास्त्र के विषय में पहले ही भविष्य फल कहते हुये मातृ अरिष्ट के बारे में स्पष्ट उल्लेख किया हैं , जो आगे दिया जा रहा हैं। यदि जातक की कुंडली में तीन पाप ग्रह चन्द्रमा को देखते हो तो उस जातक की माता मृत्यु को प्राप्त होती हैं । यदि चन्द ग्रह पर शुभ ग्रह की दृष्टि हों तो जातक की माँ को कष्ट नही होता हैं। यदि जातक की कुंडली के धन (द्वितीय) भाव में राहु, बुध, शुक्र, शनि एवं सूर्य स्थित हो तो पिता के मरण के अनन्तर जातक का जन्म होता है और उस जातक की माता की मृत्यु हो जाती है ऐसा शास्त्र वचन हैं। यदि पाप ग्रहयुक्त होकर चन्द्र, पापग्रह से सप्तम और अष्टम में स्थित हो, बलवान पापग्रह से दृष्ट हो तो जातक की माता परलोक गमन करती हैं । लग्न से सप्तम स्थान में रवि अपने उच्च अथवा नीच राशि का हो तो वह जातक स्वमाता के दुग्धपान से

हीन होता हुआ और बकरी के दुग्ध द्वारा जीवित रहता है। चन्द्र से चतुर्थ स्थान में शत्रुक्षेत्रीय पापग्रह हो और केन्द्र में शुभ ग्रह न हो तो जातक की माता की मृत्यु हो जाती है। लग्न से द्वादश, षष्ठ भाव में पापग्रह हो तो माता को भय होता है। इसी प्रकार चतुर्थ, दशम में स्थित पापग्रह पितृकष्टकारक होता है। यदि लग्न में पापग्रह हो, द्वादश में भी क्रूर ग्रह हो, धनभाव में शुभ ग्रह हो एवं सप्तम में क्रूर ग्रह हो तो परिवार का ही क्षयकारक योग होता है। लग्न में गुरु, द्वितीय में शनि एवं तृतीय में राहु हो तो उस जातक की माता जीवित नहीं रहती हैं। यदि जातक की कुंडली में क्षीण चन्द्र से त्रिकोण में पापग्रह हो, शुभग्रह से हीन हो तो ६ माह के अन्दर उसकी माता जातक को त्याग देती है। एक ही अंश में शनि, भौम होकर जिस किसी राशि में बैठे हों और चन्द्र केन्द्र (१-४-७-१०) में स्थित हो तो दो माता (एक जन्म देने वाली और दूसरी पालन करने वाली) होने पर भी जातक जीवित नही रहता हैं।

त्रिभिः पापग्रहैः सूतौ चन्द्रमा यदि दृश्यते। मातृनाशो भवेत्तस्य शुभैर्दृष्टे शुभं वदेत् ॥२४॥

धने राहुर्बुधः शुक्रः सौरिः सूर्यो यदा स्थितः ।तस्य मातुर्भवेन्मृत्युमृते पितरि जायते ॥ २५

पापात्सप्तमरन्ध्रस्थे चन्द्रे पापसमन्विते ।बलिभिः पापकैर्दृष्टे जातो भवति मातृहा ॥२६

उच्चस्थो वाऽथ नीचस्थः सप्तमस्थो यदा रविः । पानहीनो भवेद् बाल अजाक्षीरेण जीवति ॥२७

चन्द्राच्चतुर्थगः पापो रिपुक्षेत्रे यदा भवेत्। तदा मातृवधं कुर्यात् केन्द्रे यदि शुभो न चेत् ॥२८॥

द्वादशे रिपुभावे च यदा पापग्रहो भवेत्। तदा मातुर्भयं विद्याच्चतुर्थे दशमे पितुः ॥२९॥

लग्ने कुरो व्यये क्रूरो धने सौम्यस्तथैव च। सप्तमे भवने क्रूरःपरिवारक्षयङ्करः ॥३०॥

लग्नस्थे च गुरौ सौरौ धने राहौ तृतीयगे। इति चेज्जन्मकाले स्यान् माता तस्य न जीवति ॥३१॥ क्षीणचन्द्रात् त्रिकोणस्थैः पापैः सौम्यविवर्जितैः। माता परित्यजेद् बालं षण्मासाच्च न संशयः ॥३२॥ एकांशकस्थौ मन्दारौ यत्र कुत्र स्थितौ यदा । शशिकेन्द्रगतौ तौ वा द्विमातृभ्यां न जीवति ॥३३॥

1.6 सारावली ग्रन्थ के अनुसार मातृ अरिष्ट विचार

इस ग्रन्थ में भी आचार्य कहते है की जातक के जन्म के समय यदि चन्द्रमा का ग्रहण हो और चन्द्रमा पापग्रह के साथ लग्न में व अष्टम भाव में हो तो माता के सहित जातक का मरण होता है। यदि जातक का जन्म सूर्य ग्रहण में हो व पाप ग्रह से युत सूर्य लग्न में हो और अष्टम भाव में मंगल स्थित हो तो माता सहित जातक का निधन शस्त्र (आपरेशन) से होता है।

ग्रहणोपगते चन्द्र सक्रूरे लग्नगे कुजेऽष्टमगे ।

मात्रा साधं म्रियते चन्द्रवदकें च शस्त्रेण ।।३७।।

इसी प्रकार पुन: विचार करते है यदि जातक की कुंडली में चन्द्रमा से अष्टम राशि में या नवम में या सप्तम में समस्त पाप ग्रह हों या एक पाप ग्रह हो तो माता के साथ जातक अर्थात् दोनों की मृत्यु होती हैं।

चन्द्रादष्टमराशी नवमे वा सप्तमेऽपि वा पापा: ।

सर्वे तत्रान्यतमे हन्युर्जातं सह जनन्या ॥

पुन: माता के अरिष्ट का विचार करते हैं। यदि जन्म के समय पाप ग्रह जातक की कुंडली में प्रथम, अष्टम, सप्तम, षष्ठ, द्वादश, भाव में हों तो नि:सन्देह माता के साथ जातक की भी मृत्यु होती हैं ॥

जन्माष्टमसप्तषष्ठद्वादशसंस्थेषु चैव पापेषु ।

माता सुतेन सार्धं क्रियते नास्त्यत्र सन्देह: ॥

जीवति माता, म्रियते सूनु: २वष्ठाष्टमेषु पापेषु ।

जन्माष्टट्सप्तमेषु च जोर्वात सूनुम्रियेत तन्माता

1.7 फल दीपिका के अनुसार मातृ अरिष्ट विचार

तृतीय भाव का स्वामी यदि उक्त दोषों (१४वें श्लोक में कथित दोषों) से युक्त हो तो उसकी दशा में जातक कटु आलोचना का पात्र होता है (उसके कार्यों की निन्दा होती है), रानुओं से

उत्पीड़न और विफलता, भातृ-निधन, पराजय, हतश्री या मान-मर्दन होता है। चतुर्थभावाधिपति यदि उक्त दोषों से युक्त हो तो मातृकष्ट, स्वजनों का अनिष्ट, कृषि-भूमि और गृहादि की क्षति, अश्वादि पशुओं का विनाश और जल से भय होता है ॥

दुश्चिक्याधिपतौ सहोदरमृतिं कार्ये दुरालोचना-

मन्तः शत्रुनिपीडनं परिभवं तद्गर्वभङ्गं वदेत् ।

मातृक्लेशमरिष्टमिष्टसुहृदां क्षेत्रगृहोपप्लुतिं

पश्वश्वादिविनाशनं जलभयं पातालनाथेऽबले ॥

1.8 सारांश

प्रस्तुत ईकाई मैं मातृ अरिष्ट के बारे मैं बताया गया है आप सभी मातृ अरिष्ट से अवगत हो गये होंगे। प्राचीन आचार्यों ने ज्योतिष शास्त्र के अनुसार अरिष्टाध्याय के अंतर्गत मातृ अरिष्ट का भी उल्लेख किया हैं। कि मातृ अरिष्ट योग किस प्रकार से जातक की कुंडली मैं बनता हैं इस बारे मैं शास्त्रीय ग्रंथों मैं उल्लेख किया गया हैं। अरिष्ट क्या हैं इस विषय को समझने की भी आवश्यकता हैं। अरिष्ट का सामान्य अर्थ कष्ट यानि ग्रहों के द्वारा आने वाली समस्याओं जैसे जातक की कुंडली मैं 3,6,11या2, 7,812,इन भावों मैं पाप ग्रह स्थिति होकर सूर्य,शनि, ग्रहों की दृष्टि हो तो वह जातक अरिष्टों का सामना करते करते जीवन को व्यतीत करता हैं। उसे अरिष्ट कहते हैं। इसे दूसरे भावार्थ मैं समझने का प्रयास करते हैं तो यह अरिष्ट संकट को नाम से भी समझना चाहिए। मातृ अरिष्ट का अर्थ है कि जातक के जन्म के समय या जन्म से पूर्व जातक के ग्रहों के द्वारा जातक के अरिष्ट ग्रहों से माता पर अरिष्ट योग बनने की संभावनाएं रहती हैं। जैसे शनि की दशा मैं शनि ग्रह चतुर्थ भाव मैं स्थित हो तथा सूर्य या भौम की पूर्ण दृष्टि हो तो माताक्षको अरिष्ट का सामना करना पड़ता हैं, जिसे मातृ अरिष्ट योग कहते हैं। इस ईकाई मैं लग अलग अलग ग्रंथो के माध्यम से आचार्यों ने मातृ अरिष्ट केक्षबारज मैं उल्लेख किया हैं। आप सभी इस ईकाई के द्वाराअध्ययय कर मातृ अरिष्ट योग कैसे बनता है समझ गये होंगे।

1.9 पारिभाषिक शब्दावली

1. **तनु लग्न**

2. क्षीण चंद्र क्षीण चंद्रमा
3. युतश्च युत्त
4. क्षिप्रं शीध्र कार्य होना
5. त्रिकोण पंचम नवम भाव
6. रन्ध्र। अष्टम भाव
7. सुत भाव पंचम भाव
8. असित पाप ग्रह
9. ऊर्ध्व ऊपर की और
10. चन्द्रजौ चन्द्र और शुक्र ग्रह
11. केन्द्र स्थान। 1,4,7,10
12. नवांश राशि का नवम भाग
13. अरिष्ट संकट
14. अल्पायु 50वर्ष से पहले
15. निधनाय मृत्यु होना

1.10 अभ्यास प्रश्न

1. मातृ अरिष्ट का ज्ञान किस अध्याय के अंतर्गत आता हैं।
2. ज्योतिष शास्त्र के स्कंध हैं
3. माता का विचार किया जाता हैं।
4. भावों की संख्या हैं l
5. अवस्थाओं के कितने प्रकार हैं
6. मातृ अरिष्ट क्या हैं।
7. सुख का विचार किया जाता हैं।
8. हस्य और नम्रता का विचार किया जाता हैं।
9. मृत्यु का विचार किया जाता हैं।
10. पाराशर होरा शास्त्र के लेखक हैं।
11. फलदीपिका के लेखक हैं ।
12. भावेश किसे कहते हैं।
13. तृतीय स्थान को कहा जाता हैं।

1.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. **अरिष्टाध्याय**
2. **तीन**
3. **चतुर्थ भाव से**
4. **द्वादश**
5. **4**
6. **मां को कष्ट**
7. **चतुर्थ भाव से**
8. **पंचम भाव से**
9. **अष्टम भाव से**
10. **ऋषि पाराशर**
11. **आचार्य मंत्रेश्वर**
12. **भाव के स्वामी को**
13. **भ्रातृ स्थान**

1.12 संदर्भ ग्रन्थ सूची

ग्रन्थ	लेखक	प्रकाशक
1. बृहज्जातक 2002 संवत्	वराहमिहिर	चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी
2. सारावली दिल्ली 1977	कल्याणवर्मा	मोतीलाल बनारसीदास प्रथम संस्करण
3. भावकुतूहल	जीवनाथ	संस्कृत पुस्तकालय वाराणसी
4. बृहत्पाराशरहोराशास्त्र मुम्बई 1904	पराशर मुनि	लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस कल्याण,
5. बृहत्संहिता	वराहमिहिर	चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी

1.13 निबन्धात्मक प्रश्न

1. मातृ अरिष्ट का विस्तार पूर्वक उल्लेख कीजिए।
2. द्वादश भावों के विचारणीय वस्तु का वर्णन कीजिए।
3. पाराशर मतानुसार मातृ अरिष्ट पर प्रकाश डालिए।
4. मातृ अरिष्ट पर विभिन्न मत मैं वर्णन कीजिए।
5. होरा शास्त्र पर निबंध लिखिए।

इकाई - 2 पितृ अरिष्ट

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 ज्योतिष शास्त्र का परिचय

2.4 नवम ,दशम भाव फल विचार

2.5 पाराशर होरा शास्त्र में पितृ अरिष्ट विचार

2.6 सारावली ग्रन्थ के अनुसार पितृ अरिष्ट विचार

2.7 सारांश

2.8 पारिभाषिक शब्दावली

2.9 अभ्यास प्रश्न

2.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची

2.12 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी.ए.जे.वाई .(N)-301 पाठ्यक्रम से सम्बंधित है। इस इकाई का शीर्षक ' पितृ अरिष्ट" हैं| प्राचीन ज्योतिष शास्त्रीय ग्रंथों मैं अरिष्ट योग के विषय मैं विस्तृत वर्णन प्राप्त होता हैं। अरिष्ट क्या हैं इस पर विचार किया जाय तो यह नकारात्मक फल को देने वाला होता हैं। मनुष्य का जन्म होते ही उसकी कुंडली के अनुसार उस जातक का अरिष्ट योग कब कब होगा इन सभी का ज्ञात किया जाता हैं। जिससे की आने वाले अरिष्ट यानि कष्ट का पता चल सके। वस्तुत देखा जाय तो मनुष्य का जन्म होते ही उसे चारों अवस्थाओं से होकर गुजरना पड़ता हैं। जिसमें बाल्यावस्था, कुमारावस्था, युवा, वृद्धावस्था, तथा मृत् अवस्था आते हैं मनुष्य को अपनें कर्म के अनुसार इन अवस्थाओं के माध्यम से सुख दुख का भोग करना पड़ता हैं जो कि विधि का लक्ष्य को हैं। हमारे अष्टादश आचार्यों ने भी ग्रहों को बाल, युवा, कुमार, वृद्ध अवस्थाओं मैं विभक्त किया हैं जिसके माध्यम से जातक को फल की प्राप्ति होती रहती हैं। अरिष्ट का ज्ञान ज्योतिष शास्त्र के अनुसार जन्मागं कुंडली के आधार पर किया जाता हैं। ज्योतिष शास्त्र पूर्व मैं ही घटनाओं का ज्ञान कर लेता हैं। चार प्रकार की आयु मैं वह जातक अल्पायु, मध्यमायु,पूर्णायु, या अमितायु,है या नहीं इन सभी का ज्ञान ज्योतिष शास्त्र के अनुसार पूर्व मैं ही किया जाता हैं। आयु का एक छोटा भाई ही अरिष्ट कहलाता हैं। ग्रहों के संयोग से होने वाले नकारात्मक प्रभाव के नाम को अरिष्ट कहा जाता हैं। इसी क्रम मैं हम।, द्वादश भाव, चतुर्थ भाव मैं स्थित ग्रहों के द्वारा पितृ अरिष्ट का विस्तार पूर्वक अध्ययन करेंगे।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप-

- पितृ अरिष्ट के बारे में जान सकेंगे l
- अरिष्ट क्या हैं ? इस विषय से अवगत हो सकेंगे l
- दशम भाव से पितृ अरिष्ट के बारे में जान सकेंगे।
- ज्योतिष शास्त्र में पितृ अरिष्ट क्या है? अवगत हो पाएँगे।
- ज्योतिष शास्त्र में अरिष्ट ज्ञान को समझ सकेंगे l

2.3 ज्योतिष शास्त्र का परिचय

ज्योतिष का व्युत्पत्तिपरक अर्थ ज्ञात करने के लिए शास्त्रों का ज्ञान होना महत्वपूर्ण माना जाता हैं। ज्योतिष शब्द द्युत् द्योतने (प्रकाशने) धातु से द को ज, इसि प्रत्य करके गुण, ज्योतिस्, स कोष करके ज्योतिष शब्द निष्पन्न होता है। जिसका अर्थ है प्रकाशमान होना आकाशीय ग्रह, नक्षत्र, तारे आदि।समस्त अस्तित्व एक ही हैं। अतः इस खगोलीय पिण्डों की गति का प्रभाव सभी प्रकार के जीवों प्राणियों व पदार्थों पर भी पड़ता रहता हैं। इस व्युत्पत्ति के अनुसार निष्पन्न ज्योतिर्पिण्डों अर्थात् ग्रह-नक्षत्र तारों इत्यादि की गति. संचरण आदि के गणितीय विश्लेषण तथा उनसे होने वाले प्रभाव का अध्ययन करने वाला शास्त्र ज्योतिषशास्त्र कहलाता हैं। ज्योतिष के आचार्यो ने ज्योतिषशास्त्र को छः वेदांगों में से एक महत्त्वपूर्ण अंग नेत्र माना गया हैं।1. शिक्षा 2. कल्प, 3. निरुक्त, 4. व्याकरण 5. छन्द 6. ज्योतिष। ये षड वेदांग कहे गये हैं। इनमें से "ज्योतिषं नेत्र उच्यते" कह कर ज्योतिष शास्त्र की उपयोगिता एवं महत्त्व को विशेषरूप से स्वीकार किया गया हैं। क्योंकि इस गणितीय विश्लेषण को आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टि से भी सिद्ध किया जा सकता हैं। इसे ज्योतिर्विज्ञान के नाम से भी जाना जाता हैं। इसकी वैज्ञानिकता तथा प्रामाणिक फलादेशों को देखकर ही ज्योतिषं शास्त्र के नाम से प्रसिद्ध हुआ। भारतीय ज्योतिष की परिभाषा में तीन स्कन्धों में होरा, सिद्धान्त एवं संहिता तथा पाँच स्कन्धों में होरा, सिद्धान्त संहिता, प्रश्न एवं शकुन ये पाँच अंग स्वीकार किये जाते रहे हैं। वेदों में सूर्य, चन्द्रमा तथा नक्षत्रों के स्तुति-विषयक मन्त्र भी प्राप्त होते हैं। जब आदिकाल समाप्त होते-होते गणित, सिद्धान्त तथा फलित ये तीनों ज्योतिष के अंग स्पष्ट हो गए। ग्रहों की गति, उनकी स्थिति, अयनांश, पात इत्यादि भी स्वीकार किये गये। शुभ अशुभ समय का निर्धारण, , यज्ञादि कार्यों के समय व स्थान आदि का निर्णय फलित ज्योतिष का विषय माना गया। पूर्वमध्य काल के अन्त में सिद्धान्तज्योतिष व ग्रहवेध की परम्परा लुप्त होने से गणित द्वारा ग्रहों का स्थान निर्धारण इसी के अन्तर्गत आ गया। इस पूर्वमध्यकाल के आदि में ज्योतिष के तीन स्कन्ध-होरा, सिद्धान्त तथा संहित्ता स्वीकार किये गये, परन्तु इसी युग के मध्य में होरा, गणित अथवा सिद्धान्त, संहिता, प्रश्न एवं शकुन ये पाँच स्कन्ध स्वीकार किये गये।

होरा

होरा को जातक शास्त्र के नाम से भी जाना जाता हैं। 'अहोरात्र' शब्द से इसकी उत्पत्ति मानी गयी हैं। जन्मकालिक स्थिति के आधार पर जन्म कुंडली के माध्यम से दशा अन्तर्दशा के आधार पर होरा शास्त्र के द्वारा सुख; दुःख का ज्ञान तथा शुभ अशुभ फलों का भी ज्ञान किया जाता हैं। होरा शास्त्र के

अन्तर्गत दो प्रकार से फल का निरुपण किया जाता हैं। इन ग्रन्थों मे जन्म, जन्मलग्नादि द्वादशभाव से फलकथन किया जाता हैं। श्रीपति व श्रीधर आदि आचार्यों द्वारा ग्रहबल, ग्रवर्ग विंशोतरी आदि दशाओं का फल इस होराशास्त्र के माध्यम प्राप्त होता हैं।

सिद्धान्त (गणित)-

गणित-ज्योतिष में त्रुटि प्रारम्भिक इकाई तथा अन्तिम इकाई कल्पकाल पर्यन्त कालगणना, सौरमास, चान्द्रमास का निरूपण, ग्रहों की गति का प्रतिपादन, व्यक्ताव्यक्तगणित का विश्लेषण, अनेक प्रश्नोत्तर-विधियों, ग्रह-नक्षत्रों की स्थिति का आकलन, विविध यन्त्रों की निर्माण-विधि, दिशा-देश-कालज्ञान के लिए किया जाता हैं। अंग, तथा अक्षज्या, लम्बाज्या, युज्या कुज्या, समशंकु आदि अक्षक्षेत्र सम्बन्धी इकाईयों का आनयन भी रहता हैं। अंकगणित द्वारा अहर्गण का मान साधकर ग्रहों का आनयन करना इस सिद्धान्त शास्त्र का मुख्य प्रतिपाद्य विषय आदिकाल में माना जाता रहा हैं। सिधांत ज्योतिष के द्वारा जातक के भविष्य का खगोलीय पिंडो के आधार पर गणना कर जन्म कुंडली का निर्माण कर ग्रह के अनुसार जातक का ज्ञान किया जा सकता हैं।

संहिता

ज्योतिष शास्त्र में तीनो स्कन्धो में संहिता ज्योतिष एक वृहत् रूप में आचार्यो ने स्वीकार किया हैं, जिसके अंतर्गत वास्तुशास्त्र में भूमिशोधन, दिक्शोधन, शल्योद्धार, मेलापक, आयादि का आनयन, गृह-साधन (उपकरण), इष्टिका- द्वार, गृहारम्भ, गृहप्रवेश, जलाशयादि का निर्माण, शुभ कार्यों के मुहूर्त, विभिन्न निमित्तों (उल्कापात, वर्षा, ग्रहों के उदय व अस्त होने) का फल, ग्रहों के संचार सूर्य-चन्द्र ग्रहण के प्रभाव आदि का निरूपण संहिता शास्त्र में किया गया हैं। इसी विषय को मध्ययुग में देखा जाय तो नवमशताब्दी पर्यन्त संहिता में होरा, गणित, व शकुन को भी परिगणित किया जाने लगा। उत्तरोत्तर विकासमान इसकी परिभाषा में लौकिक जीवन से सम्बन्धित लगभग सभी विषय स्वीकार किये गये हैं। इसी क्रम में प्रश्न शास्त्र का भी वर्णन किया गया हैं। जिससे तत्काल फल कथन किया जाता रहा हैं। किसी प्रश्नकर्ता द्वारा उच्चारण किये गये अक्षरों के आधार पर फल कहा जाता है। पंचम व षष्ठ शताब्दी में प्रश्न पूछने वाले के शब्दों में विद्यमान अक्षरों से फलकथन की परम्परा होती थी किन्तु कालान्तर में 1. प्रश्नाक्षर, 2. प्रश्नलग्न, 3. स्वरविज्ञान इन तीन सिद्धान्तों को इसके अन्तर्गत स्वीकार किया गया जो बाद में प्रचलित होता रहा।

2.4 नवम , दशम भाव फल विचार

धर्मे कुजे वा सूर्ये वा दु:स्थे तन्नायके सति ।

पापमध्यगते वाऽपि पितुर्मरणमादिशेत् ॥२२॥

यदि जातक की कुंडली के नवम भाव सूर्य अथवा मङ्गल से युत हो और नवम भाव का अधिपति अशुभ स्थानों 6,8,12 अथवा नवम भाव का स्वामी पापग्रहों के स्थित हो तो यह योग जातक के पिता की मृत्यु का कारण बनता हैं । यदि विचार किया जाय तो दक्षिण भारत में पिता के सम्बन्ध में नवें भाव से विचार किया जाता है, जबकि उत्तर भारत में दशम भाव से पिता का विचार होता हैं। इस प्रकार की स्थिति यदि दशम भाव के साथ हो तब भी पिता के लिये अरिष्टकारक योग बनता हैं । पिता की मृत्यु यदि तत्काल सम्भव न हो तो सूर्य या मङ्गल की परमायु दशा होने पर मृत्यु होती है।

दिवा सूर्ये निशा मन्दे सुस्थे शुभनिरीक्षिते ।

धर्मेशे बलसंयुक्ते चिरं जीवति तत्पिता ॥

यदि दिन में जातक का जन्म हो तो सूर्य और रात्रि जन्म हो तो शनि यदि शुभ स्थान में शुभग्रहों में दृष्ट हों तथा नवम भाव का स्वामी बलसंयुक्त हो तो जातक का पिता दीर्घायु को प्राप्त होता हैं।

मन्दारयो: शीतरुचौ च सूर्ये त्रिकोणगे तज्जननीपितृभ्याम् ।

त्यक्तो भवेच्छक्रपुरोहितेन दृष्टे तनूजोऽस्ति सुखी चिरायु: ॥

यदि मङ्गल और शनि से सूर्य एवं चन्द्रमा पञ्चम तथा नवम भावों में स्थित हों तो जात्तक अपने माता और पिता के द्वारा परित्यक्त होता है। किन्तु यदि उन पर बृहस्पति के दृष्टि हो तो जातक सुखी और दीर्घायु होता है

धर्मे तदीशे वा मन्दयुक्ते दृष्टेऽपि वा चरे ।

जातो दत्तो भवेन्नूनं व्ययेशे बलशालिनि ॥

यदि जातक की कुंडली के दशम भाव में शुभग्रह स्थित हो और दशम भाव का स्वामी अपनी राशि या अपनी उच्चराशि का होकर केन्द्र या त्रिकोण में बलयुक्त होकर स्थित हो अथवा लग्न का स्वामी दशम भाव में स्थित हो तो ऐसे योग में उत्पन्न जातक धार्मिक वृत्ति और बुद्धि का सत्कीर्तिमुक्त, राजा के समान भाग्यशाली और दीर्घायु होता है ॥

नभसि शुभखगे वा तत्पतौ केन्द्रकोण

बलिनि निजगृहोच्चे कर्मगे लग्मपे वा।

महितपृथुयशाः स्यान्द्धर्मकर्मप्रवृत्तिः

नृपतिसदृश भाग्यं दीर्घमायुश्च तस्य ॥

जातक की कुंडली के दशम भाव में यदि सूर्य अथवा मंगल स्थित हों तो जातक अनंत ऊर्जासम्पन्न और सर्वजनप्रिय होता है। दशम भाव का स्वामी भी यदि शुभ स्थान में पञ्चम, नवम स्थान में स्थित हो तो जातक स्वपराक्रम से अनेक महान् कार्यों का साधन करने वाला होता है। दशम भाव में यदि अनेक शुभयह स्थित हो तो जातक अनेक लाभकर और सज्जनों द्वारा स्लाघनीय कार्य का सम्पादन करता है। किन्तु यदि दशम भाव में शनि, राहु या केतु स्थित हो तो जातक नोचकर्म या दुष्कर्म करने वाला होता है तथा पिता के लिए कष्ट कारी होता हैं।

ऊर्जस्वी जनवल्लभो दशमगे सूर्ये कुजे वा महत्, कार्य साधयति प्रतापबहुलं खेशश्च सुस्थो यदि । सद्व्यापारवतीं क्रियां वितनुते सौम्येषु सच्छलाधिता कर्मस्थेष्वहिमन्दकेतुषु भवेहुष्कर्मकारी नरः ॥

ज्योतिष शास्त्र के अनुसार जन्म कुंडली के नवम भाव से पिता, पुण्य एवं भाग्य का विचार किया जाता है। प्रबल भाग्येश यदि स्थानगत हो तो जातक भाग्यशाली होता है। भाग्य स्थान से दूसरे या चौथे में मंगल हो और अपने नीचस्थानगत हो तो जातक का पिता निर्धन होता है। केन्द्रस्थित भाग्येश शुक्र दृष्ट हो तो जातक का पिता वाहनों से युक्त राजा या राजतुल्य होता है। भाग्येश कर्मस्थान में और कर्मश भाग्य स्थानगत हो और शुभ ग्रह की पुष्टि हो तो जातक का पिता धनाढ्य एवं यशस्वी होता है। सूर्य अपने परमोच्यांश पर स्थित हो, भाग्येश लाभस्थान गत हो तो जातक धर्मिष्ठ, राजप्रिय तथा पितृसेवी होता है । साग्न से नवम, पंचम में सूर्य हो और सप्तम स्थानस्थित भाग्येश गुरु से युत या दृष्ट हो तो बालक पितृभक्त होता है। भाग्येश धनभावगत और घनेश भाग्य स्थानगत हो तो 32 वर्ष

के बाद जातक वाहन तथा यश का भागी रहता हैं। षष्ठेश युक्त लग्नेश यदि भाग्य राशिस्थ हो को पिता पुत्र में परस्पर शत्रुता होती है, साथ ही पिता कुत्सित स्वभाव वाला होता हैं।

2.5 पाराशर होरा शास्त्र में पितृ अरिष्ट विचार

लग्ने मन्दो मदे भौमः षष्ठस्थाने च चन्द्रमाः।

इति चेज्जन्मकाले स्यात् पिता तस्य न जीवति॥

लग्ने जीवो घने मन्दरविभौमबुथास्तथा।

विवाहसमये तस्य बालस्य प्रियते पिता॥

जिस जातक के जन्मसमय में लग्न में शनि, सप्तम में मंगल एवं षष्ठ स्थान में चन्द्र बैठे हों तो जातक का पिता जीवित नहीं रहता है। लग्न में गुरु, धनभाव में शनि, सूर्य, भौम, बुध स्थित हो तो उस बालक का पिता उसके विवाह के समय में मर जाता जिस जातक के जन्मकाल में सूर्य पापग्रह से युक्त हो अथवा दो पाप ग्रह के मध्य में सूर्य हो या सूर्य से सप्तम स्थान में पापग्रह हो तो उसके पिता का वध हो जाता है। लग्न से सप्तम में सूर्य, दशम में भौम एवं द्वादश में राहु हो तो उस जातक के पिता को कष्ट होत्ता है। शत्रुक्षेत्रीय होकर भौम दशम स्थान में स्थित हो तो जातक के पिता का शीघ्र मरण होता है। लग्न से षष्ठ भाव में चन्द्र हो और लग्न में शनि तथा सप्तम में मंगल हो तो जातक के पिता भी शीघ्र मृत्यु होती है॥

सूर्यः पापेन संयुक्तो ह्यथ वा पापमध्यगः। सूर्यात् सप्तमगः पायस्तदा पितृवधो भवेत्॥

सप्तमे भवने सूर्यः कर्मस्थो भूमिनन्दनः। राहुर्व्यये च यस्यैव पिता कष्टेन जीवति॥

दशमस्थो यदा भौमः शत्रुक्षेत्रसमाश्रितः। म्रियते तस्य जातस्य पिता शीघ्रं न संशयः॥

रिपुस्थाने यदा चन्द्रो लग्नस्थाने शनैश्चरः। कुजश्च सप्तमे स्थाने पिता तस्य न जीवति॥

सूर्य, मंगल के नवमांश में हो और शनि के द्वारा दृष्ट हो तो जातक का पिता जातक के जन्म से पूर्व ही वैराग्य धारण कर अपना गृह त्याग देता है अथवा मर जाता है।लग्न से चतुर्थ, दशम, द्वादश भाव में पाप ग्रह बैठे हों तो माता-पिता के मर जाने के कारण जातक अपना घर छोड़कर देशान्तर में चला

जाता है। राहु-गुरु लग्न षष्ठ लग्न, चतुर्थ भावों में से किसी एक भाव में हो तो जातक के २३वें वर्ष में पिता का मरण हो जाता है।

चतुर्थे दशमे पापौ द्वादशे च यदा स्थितौ
पितरं मातरं हत्वा देशाद्देशान्तरं व्रजेत्
राहु-जीवौ रिपुक्षेत्रे लग्ने वाऽथ चतुर्थके
त्रयोविंशतिमे वर्षे पुत्रस्तातं न चतुर्थके।

म्पूर्ण जीवों के पिता सूर्य और माता चन्द्रमा हैं। अत: इन दोनों के शुभाशुभ से ही माता-पिता का शुभाशुभ अवगत करना चाहिए। पापग्रह से युक्त या दृष्ट अथवा पापग्रह के बीच सूर्य हो तो जातक के पिता को कष्ट होता है। सूर्य से ६, ८, ४ में पापग्रह हो और शुभ ग्रह से युक्त या दृष्ट न हो तो पिता को कष्ट होता है॥

पित्ररिष्टं विजानीयाच्छिशोर्जातस्य निश्चितम्।
भानोः षष्टाष्टमर्क्षस्थैः पापैः सौम्यविवर्जितैः॥
सुखभावगतैर्वापि पित्ररिष्टं विनिर्दिशेत्॥

2.6 सारावली ग्रन्थ के अनुसार पितृ अरिष्ट विचार

जिस जातक का दिन में जन्म हो और सूर्य, भौम शनि से दिखाई देता हो अथवा सूर्य, पाप ग्रह से पुत्त हो तो निश्चय पिता का मरण होता है। यदि जन्म के समय में सूर्य, भौम जौर क्षगि से युद्ध हो तथा बुध, गुरु, शुक्र से युत न हो तो जातक के पिता व पितामह का मरण कहना चाहिए।

रुधिरशनैश्चरदृष्टो दिवसकरो दिवसजन्मनि तु यस्य। पापयुतो वा हन्यात् पितरं निःसंशयं जातः।
रहितो बुधगुरुशुकैर्जन्मनि रुधिराङ्गसौरसहितोर्कः। कथयति पितरमतीतं पितुरपि च शरीरकर्तारम्॥

यदि किसी जातक का जन्म दिन में हो और सूर्य ग्रह दो पाप ग्रहों के मध्य में हो, अथवा सूर्य पाप ग्रह से युक्त हो तो अवश्य पिता का मरण होता है। यदि जन्म काल में सूर्य को राशि से अष्टम साँग में (पाठान्तर में सप्तम राशि में) शनि व भौम शुभग्रह से अदृष्ट हों तो पिता का शोझ मरण करते हैं। यदि जन्माङ्ग में चरराशि में सूर्य, पाप सह से युक्त हो तो आयु से पिता की मृत्यु विष या शस्त्र के द्वारा होती हैं।

पापयुतो वा हन्यात् पितरं निःसंशय जातः

'सूर्यादष्टमराशौ यदि युक्ती सौरलोहितौ प्रसवे ।
सौम्यादृष्टो निधनं कुर्यातां सद्य एव पितुः
पापग्रहसंयुक्तश्चरराशिगतो दिवाकर. प्रसवे ।
विषशस्त्रजलान्मृत्यु कथयत्यल्पायुषं पितरम् ॥

यदि जातक का जन्म रात्रि में हो और चरराशिस्थ शनि, भौम से युक्त हो तो पिता का मरण परदेश में होता है- इसमें सन्देह नहीं हैं। यदि जन्माङ्ग में जिस किसी भी राशि में सूर्य, शनि व भौम से युत हो तो जन्म से पूर्व ही पिता का निधन कहना चाहिये ॥

रुधिरसहितस्तु सौरश्चरभवने रात्रिजन्मनिरतस्य । कथयति पितरमतीतं परदेशे नात्र सन्देहः ॥

यत्रस्थस्तत्रस्थः स्वपुत्ररुधिराङ्गसङ्गतः सूर्यः । प्राग्जन्मनो निवृत्तं कथयति पितरं प्रसूतस्य

2.7 सारांश

प्रायः ज्योतिष शास्त्र मैं सिद्धांत ज्योतिष के अनुसार खगोलीय पिंड का अध्ययन कर यह ज्ञात होता हैं कि जातक के भविष्य का विचार खगोलीय ग्रहों के माध्यम से किया जाता हैं। इसके पश्चात् होरा शास्त्र के माध्यम सें जातक का फलादेश किया जाता हैं। जो कि भविष्य मैं होने वाली घटनाओं से सचेत करती हैं। यहां पर पितृ अरिष्ट क्या हैं इस विषय को समझने के लिए हमने गणित के आधार पर जातक के फलादेश के बारे मैं खगोलीय पिंडों का विचार किया। अब हम बारह भावों मैं नवम ,एवं दशम भावों से पिता का विचार किस प्रकार किया जाता हैं इस बारे मैं बारह भावों मैं 9,10, भावों से पितृ अरिष्ट का विचार किया जाता हैं। यदि जातक की कुंडली मैं 6,8,12इन अशुभ स्थानों मैं पाप ग्रह बैठे हो तथा इन पाप ग्रह पर शनि , मंगल की पूर्ण दृष्टि हो तो पितृ अरिष्ट का योग बनता हैं जिससे की जातक के पिता को समस्याओं का सामना करना पड़ता हैं। यदि जातक की कुंडली मैं प्रथम, चतुर्थ, सप्तम , दशम, पाप ग्रह बैठे हों तथा लग्न मैं क्षीण चंद्र हो तो तो उस जातक को मृत्यु तुल्य कष्ट एवं इन्हीं 1,7,8,10, भावों मैं पापग्रह स्थित हो तो पिता को भी मृत्यु तुल्य कष्ट होता हैं, जिसे अरिष्ट योग कहते हैं। आप सभी ने इस ईकाई के माध्यम से पितृ अरिष्ट के बारे मैं समझ लिया होगा।

2.8 पारिभाषिक शब्दावली

1. वेदागं	वेदों के अंग
2. सिद्धांत	गणित
3. दिवाकर	सूर्य
4. मन्द	शनि
5. क्रूरेण	पाप ग्रह
6. भृगुसुत:	शुक्र ग्रह
7. सुयोगे	शुभ योग
8. पणफर स्थान	2,5,8,11
9. मदन	सप्तम भाव
10. त्रित्रिकोण	1,5, 9
11. नवांश	राशि का नवम भाग
12. शीध्र	जल्दी
13. भानु	सूर्य
14. रन्ध्र	अष्टम भाव
15. हिबुक	चतुर्थ भाव
16. बलाधिक	ज्यादा बल होने पर

2.9 अभ्यास प्रश्न

1. पितृ अरिष्ट क्या हैं।
2. वेदागं के कितने अंग हैं 1
3. आकाशीय मंडल मैं कोन होते हैं।
4. ज्योति किसे कहते हैं। जो प्रकाश की और ले जायें
5. लग्न मैं शनि,सप्तम मैं मंगल,षष्ठ स्थान मैं चन्द्र हो तो क्या फल होगा।
6. जीव किस ग्रह का पर्यायवाची हैं।
7. यदि सूर्य, मंगल के नवमांश मैं हो तो क्या होगा।
   जातक के जन्म से ही पूर्व
8. शशि क्या हैं। शशि एक ग्रह हैं
9. पिता का विचार करना चाहिए। दशम भाव,तथा नवम भाव से
10. दक्षिण मैं पिता का विचार किस भाव से किया जाता हैं।
11. आत्म कारक ग्रह हैं।

12. क्षीण चंद्र शुभ या अशुभ होता हैं।
13. द्यून किस भाव का पर्यायवाची हैं।

2.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. पिता को कष्ट
2. छ:
3. ग्रह
4. जो प्रकाश की और ले जायें
5. पिता को कष्ट
6. वृहस्पति का
7. जातक जन्म से ही पूर्व वैराग्य हो जाता है।
8. शशि एक ग्रह हैं
9. दशम भाव,तथा नवम भाव से
10. नवम भाव
11. सूर्य
12. अशुभ
13. सप्तम
14.

2.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची

ग्रन्थ	लेखक	प्रकाशक
6. बृहज्जातक 2002 संवत्	वराहमिहिर	चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी
7. सारावली दिल्ली 1977	कल्याणवर्मा	मोतीलाल बनारसीदास प्रथम संस्करण
8. भावकुतूहल	जीवनाथ	संस्कृत पुस्तकालय वाराणसी
9. बृहत्पाराशरहोराशास्त्र मुम्बई 1904	पराशर मुनि	लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस कल्याण,

10. बृहत्संहिता वराहमिहिर चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी

2.12 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पितृ अरिष्ट का विस्तार पूर्वक उल्लेख कीजिए।
2. ज्योतिष शास्त्र का परिचय देते हुए तीनो स्कंधों पर प्रकाश डालिए।
3. पाराशर के मत मैं पितृ अरिष्ट का विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिए।
4. नवम, दशम भाव फल पर प्रकाश डालिए।
5. ज्योतिष शास्त्र मैं अरिष्ट विचार का उल्लेख कीजिए।

इकाई - 3 अरिष्ट भंग योग

इकाई की संरचना

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 अरिष्ट योग विचार

3.4 ग्रहों के द्वारा अरिष्ट योग विचार

3.5 पाराशर होरा शास्त्र के अनुसार अरिष्ट भंग योग विचार

3.6 सारावली ग्रन्थ के अनुसार अरिष्ट भंग योग विचार

3.7 वृहतजातक में अरिष्ट भंग योग विचार

3.8 सर्वार्थ चिंतामणि के अनुसार अरिष्ट भंग योग विचार

3.9 सारांश

3.10 पारिभाषिक शब्दावली

3.11 अभ्यास प्रश्न

3.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

3.13 संदर्भ ग्रन्थ सूची

3.14 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी.ए.जे.वाई .(N)-301 पाठ्यक्रम से सम्बंधित है। इस इकाई का शीर्षक ' अरिष्टभंग योग " हैं| प्राचीन ज्योतिष शास्त्रीय ग्रंथों मैं अरिष्ट योग भंग के विषय मैं विस्तृत वर्णन प्राप्त होता हैं। अरिष्टभंग क्या हैं इस पर विचार किया जाय तो यह नकारात्मक से सकारात्मक फल को देने वाला होता हैं। मनुष्य का जन्म होते ही उसकी कुंडली के अनुसार उस जातक का अरिष्ट योग कब कब होगा इन सभी का ज्ञात किया जाता हैं। जिससे की आने वाले अरिष्ट यानि कष्ट का ज्ञान हो सके । वस्तुत देखा जाय तो मनुष्य का जन्म होते ही उसे चारों अवस्थाओं से होकर गुजरना पड़ता हैं। जिसमें बाल्यावस्था, कुमारावस्था, युवा, वृद्धावस्था, तथा मृत् अवस्था आते हैं मनुष्य को अपनें कर्म के अनुसार इन अवस्थाओं के माध्यम से सुख दुख का भोग करना पड़ता हैं जो कि विधि का लक्ष्य को हैं। हमारे अष्टादश आचार्यों ने भी ग्रहों को बाल, युवा, कुमार, वृद्ध अवस्थाओं मैं विभक्त किया हैं जिसके माध्यम से जातक को फल की प्राप्ति होती रहती हैं। अरिष्ट का ज्ञान ज्योतिष शास्त्र के अनुसार जन्मागं कुंडली के आधार पर किया जाता हैं। ज्योतिष शास्त्र पूर्व मैं ही घटनाओं का ज्ञान कर लेता हैं। चार प्रकार की आयु मैं वह जातक अल्पायु, मध्यमायु,पूर्णायु, या अमितायु,है या नहीं इन सभी का ज्ञान ज्योतिष शास्त्र के अनुसार पूर्व मैं ही किया जाता हैं। आयु का एक छोटा भाई ही अरिष्ट कहलाता हैं। ग्रहों के संयोग से होने वाले नकारात्मक प्रभाव के नाम को अरिष्ट कहा जाता हैं। अतः आज आप "अरिष्ट भंग योग' इस विषय पर सूक्ष्मता से इस इकाई के माध्यम से ज्ञान ग्रहण करेंगे।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप-

- अरिष्टभंग योग के बारे में जान सकेंगे l
- अरिष्ट क्या हैं ? इस विषय से अवगत हो सकेंगे l
- ग्रहों के अनुसार अरिष्ट भंग योग के बारे में जान सकेंगेl
- अरिष्ट योग का जीवन में क्या प्रभाव होगा? अवगत हो पाएँगेl

- ज्योतिष शास्त्र में अरिष्ट ज्ञान को समझ सकेंगे l

3.3 अरिष्ट योग विचार

"अरिष्ट योग" ज्योतिष शास्त्र का एक प्रसिद्ध अध्याय माना जाता हैं l जिसे ज्योतिष शास्त्र में अशुभ योग कहा गया हैं l ज्योतिष शास्त्र के अनुसार जातक की जन्म कुंडली में कुछ विशेष ग्रहों की स्थिति और दृष्टियों के अनुसार के अरिष्ट योग बनता हैं । संस्कृत में अरिष्ट का अर्थ होता है "कष्ट"यानि "दुःख", "बीमारी" या "जीवन में संकट"। जब किसी जातक की जन्म कुंडली में कुछ विशेष प्रकार के ग्रहों की स्थिति होती है, तो उसे "अरिष्ट योग " कहा जाता है, जो जातक के जीवन में समय समय पर घटित होता रहता हैं। इस मनुष्य लोक में मानव अपने कर्मानुबन्ध के अनुसार जन्म धारण करता हैं, तथा अपने जन्म-जन्मान्तर में किये गये शुभाशुभ कर्मवशात् फल के द्वारा अल्पायु, मध्यमायु या दीर्घायु योग प्राप्त करता हुवा आगे बढता रहता हैं l ज्योतिष शास्त्र के अंतर्गत सभी प्रकार के योगो का वर्णन मिलता हैं , इनमे से भी प्रमुख रूप से आयु का निर्धारण प्रमुखतया तीन भागों करता है। अल्पायु, मध्यमायु और दीर्घायु। किसी जातक को मध्यमायु प्राप्त हैं l वह जातक स्वयं के कर्मों के आधार के द्वारा सुख तथा दुख को प्राप्त करता हैं। इस संसार में दृश्य एवं अदृश्य रूप से सब कर्माधीन हैं। जातक अपने कमों के अनुरूप इस जन्म में सुख-दुःख, लाभ-हानि, व्यय-अपायय राजयोग एवं दरिद्रयोग स्वयं के कर्मों से प्राप्त करता हैं । ठीक इसी प्रकार से व्यक्ति का दीर्घायु होना या अल्पायु होना भी जातक के जन्म-जन्मान्तरों में किये गये शुभाशुभ कर्मों का ही प्रतिफल माना जाता हैं, यदि नकारात्मक फल मिल रहा है तो वह अरिष्ट योग का सामना करते हुये दुःख को भोगते रहता हैं । वास्तव में अरिष्ट भी कुछ इसी प्रकार के ग्रहयोग से ही बनता हैं । अरिष्ट के विषय में भिन्न-भिन्न ग्रन्थों में भिन्न-भिन्न मत हैं। प्रायः बाल अरिष्ट योगों के विषय में माता-पिता द्वारा किये गये कर्मानुसार मिलने वाला फल माना जाता हैं। ज्योतिष शास्त्र के अष्टादश आचार्यों के कथनानुसार यदि जातक की मृत्यु प्रथम चार वर्ष (जन्म से प्रारम्भ कर के मध्य) में होती है तो उसमें जीव का कोई दोष नहीं रहता हैं। उस जातक को दण्ड उसकी माता के कर्मों के द्वारा प्राप्त होता हैं । क्योंकि जन्म से लेकर प्रथम चार वर्ष तक अथवा गर्भ में मृत्यु को प्राप्त होना इन सभी कारणों में माता के कर्मों की मुख्य भूमिका रहती हैं। क्योंकि

ऐसे काल में जातक माता के द्वारा खाये अन्न-जल को ग्रहण करके अपने शरीर का पोषण करता हैं। अतः प्रथम चार वर्ष के मध्य बालक के अरिष्ट का विचार माता के जन्मांग चक्र से करना चाहिए यह शास्त्र का विधान हैं। क्योंकि बालक का भरण-पोषण माता के द्वारा किये गये कर्म के द्वारा होता हैं। इसलिए प्रथम चार वर्ष तक बाल अरिष्ट हेतु माता के जन्मांग चक्र से विचार करना चाहिए।

3.4 ग्रहों के द्वारा अरिष्ट योग विचार

जब किसी ग्रह की स्थिति या उसकी दृष्टि (किसी अशुभ ग्रह या अशुभ भाव (6, 8, 12) पर पूर्ण दृष्टी पड़ती है, तब वह ग्रह अरिष्ट फल देने वाला होता हैं, यानि उस ग्रह की ऊर्जा नकारात्मक रूप से प्रभावित होती रहती हैं। जिससे जातक के जीवन में बाधा, संकट आने की संभावना रहती हैं।

जेसे शनि ग्रह अपनी मंद गति और न्याय के देवता के रूप में जाने जाते हैं। यदि किसी जातक की कुंडली में शनि ग्रह लग्न, चंद्रमा या 4, 7, 10वें भावों में पाप ग्रहों के साथ युति या दृष्टि करता है तो उस जातक को उन ग्रहों के द्वारा अरिष्ट फल की प्राप्ति होती हैं। इसी तरह राहु ग्रह भी जातक की कुंडली में अशुभ स्थानों में बेठा हो तो भ्रम, धोखा और नेगेटिव ऊर्जा देने वाला होता हैं । यदि राहु ग्रह चंद्रमा या सूर्य को दृष्टि करता है तो मानसिक तनाव, भ्रम, और अचानक दुर्घटना होने के योग बनाते हैं। केतु ग्रह के अशुभ होने पर रोग, दुर्घटना और मानसिक विकार ला सकता है। इसी प्रकार केतु ग्रह के अशुभ होने पर अशुभ भावों में होने पर जातक को रोग और दुर्घटना का योग बनाते हैं। मंगल ग्रह उत्साह, और ऊर्जा का प्रतीक ग्रह माना जाता हैं। यदि मंगल 8वें या 12वें भाव में हो या किसी पाप ग्रह के साथ हो, तो मंगल की पूर्ण दृष्टि या युति से अरिष्ट योग बनता हैं, चंद्रमा राहु या केतु की दृष्टि में हो या नीच भावों में स्थित हो, तो मानसिक तनाव, डिप्रेशन या बाल रोग योग बनता हैं । इसी प्रकार से स्वास्थ्य और आत्मबल का प्रतिनिधि ग्रह सूर्य कहलाता हैं । यदि जातक की कुंडली में सूर्य कमजोर हो या राहु-केतु की दृष्टि में हो, तो शरीर में कमजोरी, आंखों या हृदय की समस्या होती हैं जो अरिष्ट कारक होती हैं ।अरिष्ट के प्रमुख कारण माने जाते हैं उनमे से ग्रहों की नीच स्थिति, ग्रहों का एक-दूसरे के साथ पापयुक्त होना, ग्रहों की दृष्टि अशुभ भाव पर पड़ना अरिष्ट योग बनता हैं । जन्म के समय या

जन्म कुंडली में शनि, राहु या केतु की अशुभ स्थिति होने से, जातक को बार बार अरिष्ट का सामना करना पड़ता हैं l

यदि कुंडली के केंद्र स्थानों में पाप ग्रह शनि, मंगल, राहु बैठे हों , केन्द्र में स्थित पापग्रह के साथ चन्द्रमा बैठा हो तो जातक मृत्यु को प्राप्त होता हैं ।

सन्ध्यायां हिमदीधितिहोरा पापैर्मान्तगतै निर्धनाय ।

प्रत्येक शषिपापसमेतैः केन्द्रर्वा स विनाषमुपैति ।।

यदि किसी जातक की जन्मकुण्डली के पूर्वार्ध में अर्थात् दशम भाव से चतुर्थ भाव तक, अर्थात् पूर्व में पाप ग्रह हों, तथा लग्न कुण्डली के परार्ध चतुर्थभाव से दशम भाव तक शुभ ग्रह हो तो जातक शीघ्र मृत्यु होती हैं l यदि लग्न और सप्तम भाव से द्वितीय, द्वादश, स्थान स्थित पाप ग्रहों से भी जातक को मृत्यु तुल्य कष्ट होता हैंl

चक्रस्य पूर्वापरभागगेषु क्रूरेषु सौम्येषु च कीटलग्ने ।

क्षिप्रं विनाशं समुपैति जातः पापैर्विलग्नास्तमयाभितष्च ll

यदि जातक की कुंडली के लग्न में, सप्तम भाव में पापग्रहों से पापयुक्त चन्द्रमा पर शुभ ग्रहों की दृष्टि नहीं हो तो जातक शीघ्र मृत्यु को प्राप्त होता हैं ।

पापावुदयास्तगतौ क्रूरेण युतष्च शशी ।

दृष्टष्च शुभैर्न यदा मृत्युष्च भवेदचिरात् ।।

यदि जातक की कुंडली के 12 वें स्थान में स्थित क्षीण चन्द्रमा (कृष्ण पक्ष की पंचमी से शुक्ल पक्ष की पंचमी पर्यन्त चन्द्रमा क्षीण होता है) यदि जातक के जन्मांग में हो, लग्न और अष्टम भाव में पाप ग्रह हों और केन्द्रभावों में शुभग्रह नहीं हो तो जातक मृत्यु को प्राप्त होता हैं ।

क्षीणे हिमगौ व्ययगे पापैरुदयाष्टमगैः।

केन्द्रेषु शुभाष्च न चेत्क्षिप्रं निधनं प्रवदेत् ।।

इसी प्रकार से जातक का विचार करना चाहिए। यदि जन्मांग चक्र में पाप ग्रहों से युक्त चन्द्रमा सप्तम, द्वादश, अष्टम और लग्न में हो, तथा केन्द्रभावों में प्रथम, चतुर्थ, सप्तम और दशम भाव में शुभ ग्रहों की स्थिति और उसके साथ-साथ दृष्टि योग भी न हो तो ऐसी ग्रहस्थिति में उत्पन्न जातक मृत्यु को प्राप्त होता हैं ।

आचार्य पाराशरमुनि के अनुसार आयु विचार करते समय सर्वप्रथम बालारिष्ट विचार करना चाहिए।

जन्म लग्न से 6. 8. 12वें स्थान में चन्द्र हो तथा पापग्रहों से दृष्ट हो तो जातक का शीघ्र मरण होता है तथा यदि शुभग्रह से अवलोकित हो तो 8वें वर्ष में मरण होता है-

चतुर्विंशति वर्षाणि यावद् गच्छन्ति जन्मतः ।

जन्मारिष्टं तु तावत् स्यादायुर्दायं न चिन्तयेत् ।।'

चन्द्र सदृश शुभग्रह भी 6. 8. 12 भाव में वक्री हो तथा पापग्रहों से दृष्ट हों तो जातक का एक माह में मरण होता है परन्तु यदि लग्न में शुभ ग्रह का अभाव हो तभी यह योग घटित होता हैं।

षष्टारिष्फगश्चन्द्रः क्रूरैः खेटैश्चः वीक्षितः ।

जातस्य मृत्युदः सद्यस्त्वष्टवर्षेः शुभेक्षितः ।।

चन्द्र सदृश शुभग्रह भी 6. 8. 12 भाव में वक्री हो तथा पापग्रहों से दृष्ट हों तो जातक का एक माह में मरण होता है परन्तु यदि लग्न में शुभ ग्रह का अभाव होने पर यह योग घटित होता हैं ।

शशिवन्मृत्युदाः सौम्याष्चेद्वक्राः क्रूरवीक्षिताः ।

शिशोर्जातस्य मासेन लग्ने सौम्यविवर्जिते।।

प्राचीन आचार्यो के मत में ग्रहों के माध्यम से अरिष्ट योग का विचार किया जाता रहा है जिससे की समय रहते उस ग्रहों का उपचार किया जाये और अरिष्ट का शमन हो सके ।

3.5 पाराशर होरा शास्त्र के अनुसार अरिष्टभंग योग विचार

अभी तक हमने अरिष्ट योग क्या हैं? इस बारे में अध्ययन किया अब हम अरिष्ट योग किस प्रकार से भंग हो सके इस बारे में विचार करते हैं I ज्योतिष शास्त्र को जानने वाले आचार्यो ने अरिष्ट भंग योग को जातक की कुंडली के अनुसार विचार कर अशुभ ग्रहों का कुंडली में अशुभ भावों में बेठना उसके बाद उनका अशुभ फल मिलना जो अरिष्ट योग कहलाता हैं I यदि किसी जातक का अरिष्ट योग बन रहा हो तो वह अरिष्ट योग भंग केसे हो सके इसका विचार शास्त्रीय प्रमाण के साथ आगे किया जा रहा हैं। इत्यरिष्टं मया प्रोक्तं तद्भङ्गश्चापि कथ्यते । यत् समालोक्य जातानां रिष्टाऽरिष्टं वदेद् बुधः ॥१॥

एकोऽपि ज्ञार्यशुक्राणां लग्नात् केन्द्रगतो यदि । अरिष्टं निखिलं हन्ति तिमिरं भास्करो यथा ॥२॥

एक एव बली जीवो लग्नस्थोऽरिष्टसञ्चयम् । हन्ति पापक्षयं भक्त्या प्रणाम इव शूलिनः ॥३॥

एक एव विलग्नेशः केन्द्रसंस्थो बलान्वितः । अरिष्टं निखिलं हन्ति पिनाकी त्रिपुरं यथा ॥४॥

शुक्लपक्षे क्षपाजन्म लग्ने सौम्यनिरीक्षिते । विपरीतं कृष्णपक्षे तथारिष्टविनाशनम् ॥५॥

आचार्य पराशर जी अरिष्ट योगों के बारे कहते हैं I यदि कुंडली में लग्न से केन्द्र में बुध, गुरु, शुक्र सभी ग्रह हों अथवा एक भी हों तो वे सभी अरिष्टों का नाश कर देते हैं, जैसे कि एक सूर्य समस्त अन्धकार का नाश कर देता है। बलयुक्त गुरु लग्न में स्थित हो तो सभी अरिष्ट का नाश कर देता है, जैसे भक्तिपूर्वक शिव जी को प्रणाम करने से ही वे सभी पापों को नष्ट कर देते हैं। उसी प्रकार लग्नाधीश बलवान होकर अकेला भी केन्द्र में हो तो भी सभी अरिष्ट का नाश कर देता है, जैसे महादेव द्वारा त्रिपुर देत्य का नाश किया गया था। यदि शुक्ल पक्ष की रात्रि में जन्म हो, लग्न को शुभ ग्रह द्वारा देखा जाता हो अथवा कृष्ण पक्ष में दिन का जन्म हो और पाप ग्रहों द्वारा लग्न को देखा जाता हो तो सभी प्रकार के अरिष्ट का शमन हो जाता हैं। लग्न स्थान से प्रथम-चतुर्थ सप्तम दशम स्थानों में बुध गुरु-शुक्र में से कोई भी ग्रह रहे तो सभी अरिष्ट सूर्य के प्रकाश द्वारा समाप्त हो जाते हैं।

इत्यरिष्टं मया प्रोक्तं तद्भङ्गश्चापि कथ्यते ।

यत् समालोक्य जातानां रिष्ठाऽरिष्टं वदेद् बुधः ॥१॥

जन्मांग कुंडली में एक ही गुरु यदि बली होकर लग्नगत हो जाए तो सभी अरिष्टो का शमन उसी प्रकार दूर हो जाते हैं जिस प्रकार भक्ति पूर्वक शंकर जी को प्रणाम करने मात्र से सारे कष्ट , या पाप का विनाश हो जाता हैंl

एकोऽपि ज्ञार्यशुक्राणां लग्नात् केन्द्रगतो यदि ।

अरिष्टं निखिलं हन्ति तिमिरं भास्करो यथा ॥

जन्मांग में बली लग्नेश यदि केन्द्र में स्थित हो तो सभी प्रकार के अरिष्टो का शमन हो जाता हैंl जिस प्रकार पिनाकपाणीं शंकर जी ने त्रिपुरों का संहार किया था उसी प्रकार से अरिष्टो का नाश होता हैं ।

एक एव बली जीवो लग्नस्थोऽरिष्टसञ्चयम् ।

हन्ति पापक्षयं भक्त्या प्रणाम इव शूलिनः॥

यदि किसी जातक का दिन में जन्म हो तथा लग्न पर पापग्रहों की दृष्टि हो तो सभी प्रकार के अरिष्ट समाप्त हो जाते हैं l

एक एव विलग्नेशः केन्द्रसंस्थो बलान्वितः ।

अरिष्टं निखिलं हन्ति पिनाकी त्रिपुरं यथा ॥

लग्न से चतर्थ भाव में पाप ग्रह स्थित हो तथा गुरु 1-4-7-10-9-5 में से अन्यतम में हो तो जातक स्वस्थ, दीर्घाय एवं माता-पिता दोनों के कुल में वृद्धि होने वाल होता हैं ।

लग्नाच्चतुर्थकः पापो गुरु केन्द्रत्रिकोणगः।

कुलद्वयानन्दकरः स्वस्थो दीर्घायुरर्मकः ।

यदि जातक की कुंडली में चतुर्थ या दशम में स्थित पापग्रह शुभग्रहों के मध्य में पड़े शुभग्रह केन्द्र 1.4.7.10 या त्रिकोण 9,5 में हो तो पिता को सौख्य कहना चाहिए ऐसा फल कहा गया हैं।

चतुर्व दशमें पाप सौग्यमध्ये यथा भवेत्।

पितु: सौख्यकरो योग: शुमै: केन्द्रत्रिकोणगै:।।

शुभ ग्रहों के बीच में पापग्रह हो और शुभग्रह केन्द्र या त्रिकोण में स्थित हो तो सभी प्रकार के अरिष्ट का नाश हो जाता हैंl

सौम्यान्तरगतै: पापै: शुभै: केन्द्रत्रिकोणगै:।

सद्योनाशयतेऽरिष्टं तद्भावीत्यफलं न तत् l

ज्योतिष शास्त्र के सभी आचार्यो ने अरिष्ट योग एवं अरिष्ट भंग योग के बारे में विस्तार पूर्वक वर्णन किया हैं l जिसका की जीवन में फल घटित होता रहता हैं l

3.6 सारावली ग्रन्थ के अनुसार अरिष्ट भंग योग विचार

आचार्य कल्याण वर्मा ने अरिष्ट भंग योग के बारे में कहा हैंl जिसका वर्णन आगे किया जा रहा हैंl

सर्वेगंगन भ्रमणैदृष्टश्चन्द्रो विनाशयति रिष्टम् ।

आपूर्यमाणमूतिर्यथा नृप: सन्नयेद्वेषम् ॥

चन्द्र: सम्पूर्णतनु: शुक्रेण निरीक्षित: सुहृद्भागे ।

"रिष्टहराणां श्रेष्ठो वातहराणां यथा बस्ति: ॥

यदि जातक के जन्म समय में चन्द्रमा पूर्ण बिम्ब अर्थात् सोलह कला परिपूर्ण हो और समस्त ग्रहों से दृष्ट हो तो अरिष्ट का नाश करने वाला होता हैं। जिस प्रकार राजा न्याय के विरुद्ध चलने वालों का नाश करता है। यदि पूर्ण बिम्ब से युत चन्द्रमा, मित्र के नवमांश में स्थित हो तथा शुक्र से दृष्ट हो तो अरिष्ट दूर करने वालों में श्रेष्ठ होता हैं, अर्थात् अरिष्ट का शमन करता है।

परमोच्चे शिशिरतनुभृ ग्तनयनिरीक्षितो हरति रिष्टम्।

सम्यग्विरेकवमनं कफपित्तानां यथा दोषम् ॥५॥

चन्द्रः शुभवर्गस्थः क्षीणोऽपि शुभेक्षितो हरति रिष्टम्।

जलमिव महातिसारं जातीफलवल्कलक्वथितम् ॥

इसी प्रकार से यदि चन्द्रमा जन्म के समय में अपने उच्च में स्थित हो और शुक्र ग्रह से से दृष्ट हो तो अरिष्ट का नाश करने वाला होता हैं।

सप्ताष्टमषष्ठस्थाः शशिनः सौम्या हरन्त्वरिष्टफलम्।

पापैरमिश्रचाराः कल्याणपूर्त यथोन्मादम् ॥७॥

युक्तः शुभफलदायिभिरिन्दुः सौम्यैनिहन्त्परिष्टानि।

तेषामेव त्र्यंशे लवणविमिश्र धूतं नयनरोगम ॥

यदि जातक की कुंडली में चन्द्रमा से ७, ८, ६ भावों में पाप ग्रह से रहित शुभ हो तो अरिष्टो का नाश करने वाला होता हैं। जैसे उन्माद रोग का नाश कल्याण घृत करता है। यदि चन्द्रमा शुभफल देने वाले शुभग्रहों से युक्त हो और शुभग्रह के द्रेष्काण में हो तो अरिष्ट भंग योग बनता हैं।

आपूर्यमाणमूतिर्द्वादशभागे शुभस्य यदि चन्द्रः ।

रिष्टं नयति विनाशं तक्राभ्यासो यथा गुदजम ॥९॥

सौम्यक्षेत्रे चन्द्रो होरापतिना विलोकितो हन्ति ।

रिष्टं न वीक्षितोऽन्यैः कुलाङ्गना कुलमिवान्यगता ॥

यदि जन्माङ्ग में चन्द्रमा पूर्ण बिम्ब से युत होकर शुभ ग्रह के द्वादशांश में हो तो अरिष्ट का विनाशक होता है, जैसे तक्र (मठा) के सेवन से गुद रोग (बवासीर) नष्ट होता है। यदि बन्द्रमा शुभ ग्रह की राशि में लग्नेश से दृष्ट हो और अन्य ग्रहों से अदृष्ट हो तो अरिष्ट का नाशक होता है।

क्रूरभवने शशाङ्को भवनेशनिरीक्षितस्तदनुवर्गे । रक्षति शिशुं प्रजातं कृपण इव धनं प्रयत्नेन।

जन्माधिपतिबंलवान् सुहृद्धि रभिवीक्षितः शुभेर्भङ्गम् रिष्टस्य करोति सदा भीरुरिव प्राप्तसंग्रामः ॥

यदि चन्द्रमा पापग्रह की राशि में या पापग्रह के वर्ग में राशिस्वामी से दृष्ट हो तो जातक की रक्षा करता है, जैसे लोभी पुरुष अपने धन की प्रयत्न से रक्षा करता है। यदि राशिस्वामी बली हो और शुभ मित्र ग्रह से दृष्ट हो तो अरिष्ट का नाश करता है।

3.7 वृहतजातक में अरिष्ट भंग योग विचार

असितरविशशांक भूमिजैर्त्ययननवमोदयनैधनाश्रितैः

भवति मरणमाशु देहिनां यदि बलिना गुरुणा च वीक्षिताः ।

यदि किसी व्यक्ति के जन्मांग कुंडली में पपग्रहों या पापग्रहों से युक्त चन्द्र की स्थिति 5,7,9,12,8 वें भाव में दिखाई पड़ती है तो वह में जातक को मृत्यु कष्ट देता हैं। यदि इन्ही भावों पर शुक्र, बुध या गुरु की दृष्टि पड़ती है तो अरिष्ट भंग योग बनता हैं।

सुतमदननवान्त्यलग्नरन्ध्रेष्वशुभयुतो मरणाय शीतरश्मिः ।

भृगुसुतशशिपुत्रदैवपूज्यैर्यदि बलिभिर्नयुतोऽवलोकितो वा।।

यदि गुरु ग्रह केंद्र तथा त्रिकोण में हो तथा उसे पापग्रह न देखते हो शुभ ग्रह से देखे जाते हो तो वह उस प्राणी के लग्न चन्द्रमा और मुन्था इनसे उत्पन्न अरिष्ट का शमन करता हैं।

गुरुः केन्द्रे त्रिकोणें वा पापदृष्टः शुभेक्षितः ।

लग्नचन्द्रेन्यिहारिष्ट विनाशार्थ सुखं दिशेत् ।।

लग्ने धुने शस्तनुगाः सुरेव्यः क्रूरैरदृष्टः शुममित्रदृष्टः ।

रिष्ट निहत्यर्थयशः सुखास्ति दिशेत्स्वपाके नृपतिप्रसादम् ।।

यदि सातवें स्थान का स्वामी और बृहस्पति लग्न में हो परन्तु दोनों (सप्तमेश बृहस्पति को पाप ग्रह न देखते हो किन्तु उसे शुभग्रह वा मित्र ग्रह देखते हो तो उस जातक के अरिष्टो का शमन हो जाता हैं। जेसे अपनी दशा में राजा को प्रसन्नता से धन यश सभी कुछ प्राप्त करते हैं।

त्रिषष्ठलाभोपगतैरसौम्यैः केन्द्रत्रिकोणोपगतैष्व सौम्यैः।

रत्नाम्बरस्वर्णयशः सुखान्तिर्नाशोऽप्यरिष्टस्य वर्गश्च पुष्टिः।।

यदि तीसरे छठे, ग्यारहवें इनमें से किसी स्थान में पापग्रह हो और केन्द्र 1.4.7.10 तथा त्रिकोण 9,5 इनमें से किसी भी स्थान में शुभ ग्रह हो तो वह प्राणी रत्न, कपड़े, सोना और यश प्राप्त करता है। उसके अरिष्ट नष्ट हो जाते और उसका शरीर हृष्ट-पुष्ट रहता हैं ।

3.8 सर्वार्थ चिंतामणि ग्रन्थ के अनुसार अरिष्ट भंग योग

अलग अलग विद्वानों के द्वारा ज्योतिष शास्त्र में अरिष्ट भंग योग के बारे में वर्णन मिलता हैं। जो की मनुष्य पर आये अरिष्टो का समाधान किस प्रकार से हो सके उन सभी के लिए जातक की कुंडली के माध्यम से अरिष्ट भंग योग का वर्णन शास्त्रों में किया गया हैं। जो आगे वर्णित हैं।

प्रकाशमानो गगनेन्द्रपूज्यः केन्द्रस्थितो रक्षति जातसूनुम् ।

सौम्यांशका जीवशशांकशुक्रसौम्या विनिघ्नन्ति समस्तदोषम् ।।

यदि बृहस्पति बल पूर्वक होकर केन्द्र में स्थित हो तो बालक की रक्षा करता है। यदि गुरु, शुक्र, चन्द्र व बुध शुभ स्थानों में हो तो सम्पूर्ण अरिष्ट योगों के फल का शमन हो जाता हैं।

जन्माधिपः केन्द्रगतः शुभश्चेज्जातं शिशुं रक्षति सौम्यदृष्टः ।

स्वांशस्थितैः शोभनखेचरेन्द्रैर्दृष्टस्तदान्यो विनिहन्त्यरिष्टम् ।।

यदि जन्मलग्नेश शुभ ग्रह हो तथा केन्द्र में स्थित हो और शुभ ग्रहों द्वारा दृष्ट हो तो जातक की रक्षा करता है। लग्नेश शुभ ग्रह के साथ हो तथा उसे नवमांश में स्थित शुभ ग्रह देखता हो तो वह भी अरिष्टहन्ता तथा अरिष्ट भंग योग बनता हैं।

उदयोऽगस्त्यमुनेः सप्तर्षीणां मरीचिपूर्वाणाम् ।

सर्वारिष्टं नश्यति तम इव सूर्योदये प्रबलम् ।।

3.9 सारांश

बी.ए.जे.वाई. 303, पाठ्यक्रम के अंतर्गत हमने अरिष्ट भंग योग क्या हैं इस विषय के बारे मैं जान लिया होगा। अरिष्ट क्या हैं, तथा इसका क्या फल हैं। इस बारे मैं ज्योतिष शास्त्र के प्रमाणिक ग्रंथों मैं इसका उल्लेख मिलता हैं। इस संसार मैं जो भी जीव जन्म लेता हैं उस प्रभु के आशीर्वाद तथा अपने पूर्व जन्म के कर्मों के आधार पर जन्म लेता हुआ अनेकानेक कष्टों को सहन करता हुआ अपनें जीवन को आगे बढ़ाता हैं। जीव जन्म लेते ही सुख, दुख दोनों का भोग करता हैं जिसे अरिष्ट या संकट के नाम से भी जाना जा सकता हैं। यह अरिष्ट कहा से उत्पन्न होता हैं वह हैं जातक का पूर्व जन्म जिसका ज्ञान ज्योतिष शास्त्र के आधार पर ग्रहों के द्वारा किया जाता हैं। जिसे अरिष्ट करोड़ के नाम से भी जाना जाता हैं। अब प्रश्न यह है, कि इन अरिष्टों का ज्ञान कैसे हों अरिष्ट है या नहीं उसके लिए जन्मांग कुंडली का निर्माण कर ग्रहों के माध्यम से अरिष्टों का ज्ञान किया जाता हैं। यदि किसी जातक की कुंडली के केंद्र स्थान 1,4,7,10,इन भावों मैं वृहस्पति, शुक्र,या बुध ग्रह बैठे हो या इन ग्रहों पर शुभ ग्रहों चन्द्र,या वृहस्पति की पूर्ण दृष्टि या 5,9दृष्टि हो तो जातक की कुंडली मैं बनने वाला अरिष्ट योग तत्काल भंग हो जाता हैं। दूसरे आचार्य के मत मैं अरिष्ट योग भंग का विचार करते हैं। यदि किसी भी जातक की कुंडली मैं शुभ ग्रह केन्द्र भावों मैं हो या अपने उच्च राशि, स्वगृही , अपनें मूल

त्रिकोण, भावों स्थित होकर बैठा हो तो जातक का शीघ्र ही अरिष्ट भंग योग बनता हैं जिससे उस जातक को शुभ फल की प्राप्ति होती हैं। आप सभी ने इस ईकाई के माध्यम से अरिष्ट भंग योग के बारे मैं अध्ययन कर लिया होगा।

3.10 पारिभाषिक शब्दावली

1. अरिष्ट	**कष्ट**
2. युतश्च	**युक्त**
3. क्षिप्रं	**शीध्र**
4. बलिभि:	**बलवान्**
5. मन्द ग्रह	**शनि**
6. कलत्र सहिते	**पत्नी के साथ**
7. लग्नाधीश	**लग्न का स्वामी**
8. अवलोकित	**ग्रहों को देखना**
9. रव्यादि	**सूर्यादि ग्रह**
10. केन्द्र स्थान	**1,4,7,10**
11. जन्मागं	**जातक का जन्म लग्न**
12. चिरात्	**देरी होने पर**
13. त्रिकोण।	**पंचम नवम स्थान**
14. उपैति	**प्राप्त करना**
15. होरा	**राशि का अर्ध भाग**
16. द्यून	**सप्तम भाव**

3.11 अभ्यास प्रश्न

1. **अरिष्ट क्या हैं?**
2. **अरिष्ट भाव हैं ?**
3. **संध्याकाल मैं क्या करना चाहिए।**
4. **नवांश किसे कहते हैं?**

5. **पाप ग्रह हैं?**
6. **क्रूर ग्रह कोन कोन से हैं?**
7. **क्षीण चंद्र होने पर क्या फल होता होगा।**
8. **वृहत् पाराशर के लेखक हैं ?**
9. **अरिष्ट भंग योग होता हैं।**
10. **गुरु ग्रह लग्न मैं बली हों तोक्या फल हैं।**
11. **भावों की संख्या हैं ?**
12. **सारावली ग्रन्थ के लेखक हैं।**

3.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. **किसी भी जातक के ऊपर कष्ट होना**
2. **6,8,12**
3. **पूजन**
4. **राशि के नवम भाव को नवांश कहते हैं।**
5. **राहु,केतु**
6. **सूर्य, शनि, मंगल**
7. **अशुभ फल**
8. **आचार्य पाराशर**
9. **केन्द्र मैं बुध, गुरु,शुक्र ग्रहों के होने से**
10. **सभी अरिष्टों का नाश होता हैं।**
11. **12**
12. **आचार्य कल्याण वर्मा**

3.13 संदर्भ ग्रन्थ सूची

ग्रन्थ	लेखक	प्रकाशक

1. बृहज्जातक वराहमिहिर चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी 2002 संवत्
2. सारावली कल्याणवर्मा मोतीलाल बनारसीदास प्रथम संस्करण दिल्ली 1977
3. भावकुतूहल जीवनाथ संस्कृत पुस्तकालय वाराणसी
4. बृहत्पाराशरहोराशास्त्र पराशर मुनि लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस कल्याण, मुम्बई 1904
5. बृहत्संहिता वराहमिहिर चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी

3.14 निबन्धात्मक प्रश्न

1. अरिष्टभंग योग क्या हैं विस्तार पूर्वक उल्लेख कीजिए।
2. सारावली ग्रन्थ के अनुसार अरिष्टभंग योग विषय पर प्रकाश डालिए।
3. ग्रहों के द्वारा अरिष्ट भंग योग का विस्तार से वर्णन कीजिए।
4. अरिष्ट योग क्या है स्पष्ट कीजिए।
5. ज्योतिष शास्त्र में अरिष्ट योग की भूमिका पर प्रकाश डालिए।

इकाई – 4 चन्द्र-गुरु कृत अरिष्टभंग योग

इकाई की संरचना

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 अरिष्ट विचार

4.4 चन्द्र ग्रह का स्वरुप

4.5 सर्वार्थ चिंतामणि ग्रन्थ के अनुसार चंद्रगुरुकृत अरिष्ट भंग योग विचार

4.6 सारावली ग्रन्थ के अनुसार चंद्रगुरुकृत अरिष्ट भंग योग विचार

4.7 जातक पारिजातक ग्रन्थ के अनुसार चन्द्र गुरुकृत अरिष्ट भंग योग

4.8 वृहतजातक में अरिष्ट भंग योग विचार

4.9 सारांश

4.10 पारिभाषिक शब्दावली

4.11 अभ्यास प्रश्न

4.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

4.13 संदर्भ ग्रन्थ सूची

4.14 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी.ए.जे.वाई (N)-301 पाठ्यक्रम से सम्बंधित है। इस इकाई का शीर्षक 'चन्द्र गुरु कृत अरिष्टभंग योग" हैं। प्राचीन ज्योतिष शास्त्रीय ग्रंथों मैं अरिष्ट योग भंग के विषय मैं विस्तृत वर्णन प्राप्त होता हैं। अरिष्टभंग क्या हैं इस पर विचार किया जाय तो यह नकारात्मक से सकारात्मक फल को देने वाला होता हैं। मनुष्य का जन्म होते ही उसकी कुंडली के अनुसार उस जातक का अरिष्ट योग कब कब होगा तथा अरिष्ट गोग भंग किन किन ग्रहों के द्वारा होता हैं , यह पर यह भी विचार किया गया हैं कि अरिष्ट योग के बाद अरिष्ट भंग योग का विचार करना शास्त्रीय सम्मत माना जाता हैं। सुर्यादि नवग्रहों में चन्द्र , गुरु के माध्यम से अरिष्ट भंग योग करने का विधान ज्योतिष शास्त्रीय ग्रन्थों में प्राप्त होता हैं। ज्योतिष ग्रंथो में अन्यग्रहो जेसे राहु, शनि के द्वारा भी अरिष्ट भंग योग का विचार किया जाता हैं , जिससे की जातक के ऊपर आने वाली समस्या के दूर किया जा सके। इन सभी ग्रहों का अरिष्ट भंग योग में विचार करना चाहिए। जिससे की आने वाले अरिष्ट यानि कष्ट का ज्ञान हो सके । वस्तुत देखा जाय तो मनुष्य का जन्म होते ही उसे चारों अवस्थाओं से होकर गुजरना पड़ता हैं। जिसमें बाल्यावस्था, कुमारावस्था, युवा, वृद्धावस्था, तथा मृत् अवस्था आते हैं मनुष्य को अपनें कर्म के अनुसार इन अवस्थाओं के माध्यम से सुख दुख का भोग करना पड़ता हैं जो कि विधि का लक्ष्य को हैं। हमारे अष्टादश आचार्यों ने भी ग्रहों को बाल, युवा, कुमार, वृद्ध अवस्थाओं मैं विभक्त किया हैं जिसके माध्यम से जातक को फल की प्राप्ति होती रहती हैं। अरिष्ट का ज्ञान ज्योतिष शास्त्र के अनुसार जन्मागं कुंडली के आधार पर किया जाता हैं। ज्योतिष शास्त्र पूर्व मैं ही घटनाओं का ज्ञान कर लेता हैं। चार प्रकार की आयु मैं वह जातक अल्पायु, मध्यमायु,पूर्णायु, या अमितायु,है या नहीं इन सभी का ज्ञान ज्योतिष शास्त्र के अनुसार पूर्व मैं ही किया जाता हैं। आयु का एक छोटा भाई ही अरिष्ट कहलाता हैं। ग्रहों के संयोग से होने वाले नकारात्मक प्रभाव के नाम को अरिष्ट कहा जाता हैं। अतः आज आप "चन्द्र गुरुकृत अरिष्ट भंग योग' इस विषय पर सूक्ष्मता से इस इकाई के माध्यम से ज्ञान ग्रहण करेंगे।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप-

- चन्द्र ग्रह के स्वरुप के बारे में जान सकेंगे l
- गुरु ग्रह के स्वरुप के बारे में इस विषय से अवगत हो सकेंगे l

- ग्रहों के अनुसार चन्द्र गुरु के द्वारा अरिष्ट भंग योग के बारे में समझने का प्रयास करेंगेl
- अरिष्ट योग का जीवन में क्या प्रभाव होगा? अवगत हो पाएँगेl
- ज्योतिष शास्त्र में अन्य ग्रह से भी अरिष्ट ज्ञान को समझ सकेंगे l

4.3 अरिष्ट विचार

"अरिष्ट योग" एक वैदिक ज्योतिष का शब्द माना गया हैं। जिसे एक प्रकार का अशुभ योग मानते हैं, ज्योतिष शास्त्र के अनुसार जो जातक की जन्म कुंडली में कुछ विशेष ग्रहों की स्थिति और दृष्टियों के द्वारा बनने के कारण अरिष्ट योग बनता हैं । संस्कृत में अरिष्ट का अर्थ होता है "कष्ट"यानि "दुःख", "बीमारी" या "जीवन में संकट"। जब किसी जातक की जन्म कुंडली में कुछ विशेष प्रकार के ग्रहों की स्थिति होती है, तो उसे "अरिष्ट योग " कहा जाता है, जो जातक के जीवन में समय समय पर घटित होता रहता हैंl इस मनुष्य लोक में मानव अपने कर्मानुबन्ध के अनुसार जन्म धारण करता हैं, तथा अपने जन्म-जन्मान्तर में किये गये शुभाशुभ कर्मवशात् फल के द्वारा अल्पायु, मध्यमायु या दीर्घायु योग प्राप्त करता हुवा आगे बढता रहता हैं l ज्योतिष शास्त्र के अंतर्गत सभी प्रकार के योगो का वर्णन मिलता हैं , इनमे से भी प्रमुख रूप से आयु का निर्धारण प्रमुखतया तीन भागों करता है। अल्पायु, मध्यमायु और दीर्घायु। किसी जातक को मध्यमायु प्राप्त हैं l वह जातक स्वयं के कर्मों के आधार के द्वारा सुख तथा दुख को प्राप्त करता हैंl इस संसार में दृश्य एवं अदृश्य रूप से सब कर्माधीन हैं। जातक अपने कमों के अनुरूप इस जन्म में सुख-दुःख, लाभ-हानि, व्यय-अपायय राजयोग एवं दरिद्रयोग स्वयं के कर्मों से प्राप्त करता हैं। ठीक इसी प्रकार से व्यक्ति का दीर्घायु होना या अल्पायु होना भी जातक के जन्म-जन्मान्तरों में किये गये शुभाशुभ कर्मों का ही प्रतिफल माना जाता हैं, यदि नकारात्मक फल मिल रहा है तो वह अरिष्ट योग का सामना करते हुये दुःख को भोगते रहता हैं। वास्तव में अरिष्ट भी कुछ इसी प्रकार के ग्रहयोग से ही बनता हैं। अरिष्ट के विषय में भिन्न-भिन्न ग्रन्थों में भिन्न-भिन्न मत हैं। प्रायः बाल अरिष्ट योगों के विषय में माता-पिता द्वारा किये गये कर्मानुसार मिलने वाला फल माना जाता हैं। ज्योतिष शास्त्र के अष्टादश आचार्यों के कथनानुसार यदि जातक की मृत्यु प्रथम चार वर्ष (जन्म से प्रारम्भ कर के मध्य) में होती है तो उसमें जीव का कोई दोष नहीं रहता हैंl उस जातक को दण्ड उसकी माता के कर्मों के द्वारा प्राप्त होता हैं। क्योंकि जन्म से लेकर प्रथम चार वर्ष तक अथवा गर्भ में मृत्यु

को प्राप्त होना इन सभी कारणों में माता के कर्मों की मुख्य भूमिका रहती हैं। क्योंकि ऐसे काल में जातक माता के द्वारा खाये अन्न-जल को ग्रहण करके अपने शरीर का पोषण करता हैं। अतः प्रथम चार वर्ष के मध्य बालक के अरिष्ट का विचार माता के जन्मांग चक्र से करना चाहिए यह शास्त्र का विधान हैं। क्योंकि बालक का भरण-पोषण माता के द्वारा किये गये कर्म के द्वारा होता हैं। इसलिए प्रथम चार वर्ष तक बाल अरिष्ट हेतु माता के जन्मांग चक्र से विचार करना चाहिए।

4.4 चन्द्र एवं गुरु ग्रह का स्वरुप

चन्द्र ग्रह को देवता के रूप मे तथा सोम के रूप में भी जाना जाता है। तथा उन्हें वैदिक चंद्र देवता सोम के साथ पहचाना जाता है। इनका स्वरुप युवा , सुंदर, गौर, द्विबाहु के रूप में दिखाई पड़ता हैं। जिनके हाथों में एक मुगदर और एक कमल रहता है। वे हर रात्रि को पूरे आकाश में अपने रथ को चलाते हुये दिखाई देते हैं। दश सफेद घोडे या मृग द्वारा चन्द देव के रथ को खींचा जाता है। जो जनन क्षमता के देवताओं में से एक हैं। जो मन का प्रतिनिधित्व करते हैं। मन का प्रतिनिधित्व करता है। चंद्र को सोम के रूप में भी जाना जाता है और उन्हें वैदिक चंद्र देवता सोम के साथ पहचाना जाता है। उन्हें जवान, सुंदर, गौर, द्विबाहु के रूप में वर्णित भी किया गया है और उनके हाथों में एक मुगदर और एक कमल रहता है। वे हर रात पूरे आकाश में अपना रथ (चांद) चलाते हैं, जिसे दस सफेद घोड़े या मृग द्वारा खींचा जाता है। सोम के रूप में वे सोम वार के स्वामी हैं। वे सत्व गुण वाले हैं और मन, माता की रानी का प्रतिनिधित्व करते हैं। अब हम गुरु ग्रह के स्वरुप का वर्णन करते हैं। बृहस्पति ग्रह , देवताओं के गुरु हैं, शील और धर्म के अवतार भी माने हेट हैं, तथा प्रार्थनाओं और बलिदानों के मुख्य प्रस्तावक भी हैं। जिन्हें देवताओं के पुरोहित के रूप में प्रदर्शित किया जाता है। वे सत्व गुणी हैं और ज्ञान और शिक्षण का प्रतिनिधित्व करते हैं। हिन्दू शास्त्रों के अनुसार, वे देवताओं के गुरु हैं और दानवों के गुरु शुक्राचार्य के कट्टर विरोधी हैं। वे पीले या सुनहरे रंग के हैं और एक छड़ी, एक कमल और अपनी माला धारण करते उनका स्वरुप दिखाई देता हैं।

4.5 सर्वार्थ चिंतामणि ग्रन्थ के अनुसार चंद्रगुरुकृत अरिष्ट भंग योग विचार

लग्नस्थितो देवगुरुर्विशेषात् खेटान्निहन्याद्बिबलांस्तथैव ।

एकोऽपि बालेन्दुधरप्रणामः समस्तपापं शमयेत्तथैव ।।

किसी भी जातक की कुंडली में यदि बृहस्पति लग्न में स्थित हो तो बाल्यारिष्ट ग्रहों में विशेष स्थान होता हैंl यह ग्रह निर्बल ग्रहों के फलों का उसी प्रकार नाश कर देता है, जिस प्रकार एक बार शिवजी को किया गया प्रणाम समस्त पापों का क्षय कर देता है

अत्यन्तसत्त्वे यदि लग्ननाथे सौम्यान्विते तादृशदृष्टिमार्गे ।

केन्द्रस्थिते पापदृशा विहीने स भाग्यवान् जीवति दीर्घमायुः।।

यदि लग्नेश अतिबली हो, शुभग्रहों से दृष्ट होकर अथवा उनके साथ बैठकर केन्द्र में बैठा हो और पापदृष्टिरहित हो तो वह अरिष्ट भंग योग बनता हैंl जिसमे बालक भाग्यवान् और दीर्घायु होताहै।

शशाङ्को रन्ध्रनाथस्तु सौम्यद्रेष्काणसंयुतः ।

जातं शिशुं प्रयत्नेन रक्षयेद्रात्रिवासरम्।।

चन्द्रमा तथा अष्टमेश सौम्य द्रेष्काण में युत हों तो वह शिशु प्रयत्नपूर्वक एक अहोरात्र (दिन-रात) रक्षा करने पर अरिष्टभंग योग बनाकर उस व्यक्ति की रक्षा करता हैं॥

चन्द्रः सम्पूर्णगात्रस्तु सौम्यक्षेत्रांशगोऽपि वा ।

सर्वारिष्टनिहन्ता स्याद्विशेषाच्छुक्रवीक्षितः ।।

यदि कसी भी जातक की कुंडली में पूर्ण चन्द्र सौम्य ग्रह के राश्यंशक में हो तो समस्त प्रकार के बाल्यारिष्टों का नाश कर देने वाला होता हैं l विशेषतः शुक्र से दृष्ट इस प्रकार का चन्द्र यह फल प्रदान करता है जिससे अरिष्ट भंग योग बन जाता हैंl

जीवभार्गवसौम्यानामेकः केन्द्रगतो बली ।

पापदृयोगहीन श्चेत्सद्योरिष्टस्य भङ्गकृत् ।।

यदि जन्मांग में गुरु, शुक्र अथवा बुध में से एक भी ग्रह केन्द्र में बलवान हो और पापग्रहों से युक्त हो

तथा दृष्ट न हो तो तत्काल अरिष्ट योगों को भंग करने वाला होता है, जिसका प्रभाव जातक के अरिष्ट योगों पर पड़कर अरिष्ट भंग योग कहलाता हैंl

चन्द्रोऽपि शत्रुराशिस्थो जीवशुक्रविदां यथा ।

द्रेष्काणं शमयत्येवारिष्टं पापं हरिर्यथा ।।६।।

यदि जन्मांग कुंडली में चन्द्र शत्रुराशि में भी स्थित हो, किन्तु गुरु, शुक्र या बुध के द्रेष्काण में स्थित करते हो तो शीघ्र ही अरिष्ट योगों को उसी प्रकार भङ्ग करता है, जैसे श्रीहरि पापों का शमन करता हैं।

शुक्लेऽपि पक्षे यदि रात्रिजन्म चन्द्रोऽपि षष्ठाष्टमराशियुक्तः ।

शुभेक्षितः सन्निह कृष्णपक्षे दृश्यः स पापैरवति प्रसूतम् ।।

यदि किसी व्यक्ति का शुक्ल पक्ष में रात्रि का जन्म हो तथा कृष्ण पक्ष में दिन के समय में जन्म हो तो उस व्यक्ति के अरिष्टो का शमन हो जाता हैं। यदि चन्द्र षष्ठ भाव या अष्टम भाव में भी पापदृष्ट होकर बैठा हो तब भी बालक की समस्या दूर हो जाती हैं।

निशाकरे शोभनखेचरांशे शुभेक्षिते पूरितदीप्तिजालः ।

जातस्य निःशेषमरिष्टमाशु यथा विषं हन्ति च वैनतेयः ।।

यदि चन्द्रमा शुभ ग्रह के अंशक में शुभ ग्रह से दृष्ट होकर दीप्त होकर बैठा हो तो सर्पों का नाश कर देते हैं हैं उसी प्रकार जातक के अरिष्टों का नाश हो जाता हैं।

प्रकाशमानो गगनेन्द्रपूज्यः केन्द्रस्थितो रक्षति जातसूनुम् ।

सौम्यांशका जीवशशांकशुक्रसौम्या विनिघ्नन्ति समस्तदोषम् ।।

यदि बृहस्पति प्रकाशमान होकर केन्द्र में स्थित हो तो बालक की रक्षा करता है। गुरु, शुक्र, चन्द्र व बुध शुभांशकों में स्थित हों तब भी सम्पूर्ण अरिष्ट योगों के फल का नाश करता हैं॥

जन्माधिपः केन्द्रगतः शुभश्चेज्जातं शिशुं रक्षति सौम्यदृष्टः ।

स्वांशस्थितैः शोभनखेचरेन्द्रैर्दृष्टस्तदान्यो विनिहन्त्यरिष्टम् ।।

यदि जन्मलग्नेश शुभ ग्रह हो तथा केन्द्र में स्थित हो और शुभ ग्रहों द्वारा दृष्ट हो तो बालक की रक्षा करता है। लग्नेश शुभ ग्रह हो तथा उसे स्वांशक में स्थित शुभ ग्रह देखता हो तो वह भी अरिष्टहन्ता होता है।

शीषर्योदयस्थाः सकला महेन्द्रा रिष्टं हरन्त्याशु शुभांशकस्थाः ।

पूर्णेन्दुरन्यैर्वियुतः शुभैस्तु दृष्टो हरत्याशु समस्तरिष्टम् ।।

यदि ये समस्त शोषोंदय राशियों (सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, कुम्भ, मिथुन राशियों) में शुभ ग्रहों के अंशकों में स्थित हो अथवा पूर्ण चन्द्र पापग्रहरहित हो तथा शुभ ग्रहों से दूष्ट हो तो सम्पूर्ण दोषों का हनन करता हैं l

सर्वग्रहेन्यैः परिपूर्णचन्द्रो दृष्टो हरत्याशु समस्तदोषान् ।

नयैः स्वकीयैः प्रहरेत् क्षितीशो यथा तथा जन्मनि दोषजालम् ।।१३।।

पूर्ण चन्द्र पर पर सभी ग्रहों की दृष्टि हो तो वह सम्पूर्ण दोषों को उसी प्रकार दूर करता है, जिस प्रकार राजा अपने न्याय द्वारा प्रजा के दोषों को दूर करता है।

चन्द्रः शुभवर्गस्थः क्षीणोऽपि शुभेक्षितो हरति रिष्टम् ।

जलमिव हन्त्यतिसारं जातीफलवल्कलक्वथितम् ।।

यदि जातक की कुंडली में चन्द्रमा क्षीण होने पर भी यदि शुभ ग्रहों के अंशक में हो तो अरिष्ट को उसी प्रकार हर लेता है, जिस प्रकार जातीफल के वल्कलों से पकाया गया जल अतिसार को हर लेता हैं l

सप्ताष्टमषष्ठस्थाः शशिनः सौम्या हरन्ति कष्टफलम् ।

युवतिजनस्य कटाक्षा ललिता यूनां यथा नूनम् ।।

चन्द्र से सप्तम, अष्टम एवं षष्ठ स्थान में स्थित शुभ ग्रह कष्टों का उसी प्रकार से कष्टफल हरण कर लेते हैं, जिस प्रकार से युवतियों के कटाक्ष से युवाजनों के कहने से दूर हो जाते हैं।

पापराशिगते चन्द्रे तदीशेन निरीक्षिते ।

सौम्यग्रहाणां वर्गस्थे कृपणेन धनं यथा ।।

यदि चद्रमा पापग्रह की राशि में स्थित हो तथा चन्द्रराशि द्वारा चन्द्र निरीक्षित हो और सौम्य ग्रहों से भी दृष्ट हो तो ठीक उसी प्रकार बालक की रक्षा करता है, जिस प्रकार कि कृपण मनुष्य धन की रक्षा करता है, तथा अरिष्टो का शमन हो जाता हैं।

चन्द्राधिष्ठितराशीशे लग्नस्थे शुभवीक्षिते ।

भृगुणा वीक्षिते चन्द्रे स्वोच्चे रिष्टं हरेत्तदा ।।

यदि किसी व्यक्ति की कुंडली में चन्द्राधिष्ठित राशि का स्वामी लग्न में शुभ ग्रहों द्वारा दृष्ट हो तथा चन्द्र को उच्चराशिस्थ शुक्र देखता हो तो सम्पूर्ण अरिष्ट फलों का हरण कर लेता है।

स्वोच्चस्थे स्वग्रहेऽथ वापि सुहृदां वर्गे स्वकीयेऽथ वा

सम्पूर्णः शुभवीक्षितः शशिधरो वर्गेषु सौम्येषु वा ।

शत्रूणामवलोकनेन रहितः पापैरयुक्तेक्षितो

रिष्टं हन्ति सुदुस्तरं दिनमणिः प्रालेयनाशं यथा ।।

जातक की कुंडली में पूर्ण चन्द्र शुभ ग्रहों से दृष्ट होकर उच्च्च राशि का हो, तथा स्वराशि में स्थित हो अथवा मित्र के वर्ग में हो या स्ववर्ग में स्थित हो, शत्रुदृष्टि से रहित हो तथा पापग्रहों द्वारा भी न देखा जाता हो, तो उस जातक के अरिष्ट का शमन हो जाता हैं ।

4.6 सारावली ग्रन्थ के अनुसार चंद्रगुरुकृत अरिष्ट भंग योग विचार

यदि जातक के जन्म समय में चन्द्रमा पूर्ण बिम्ब अर्थात् सोलह कला परिपूर्ण हो और समस्त ग्रहों से दृष्ट हो तो अरिष्ट का नाश करने वाला होता हैं 1 जिस प्रकार राजा न्याय के विरुद्ध चलने वालों का नाश करता है। यदि पूर्ण बिम्ब से युत चन्द्रमा, मित्र के नवमांश में स्थित हो तथा शुक्र से दृष्ट हो तो अरिष्ट दूर करने वालों में श्रेष्ठ होता हैं, अर्थात् अरिष्ट का शमन करता है। यदि जातक की कुंडली में चन्द्रमा से ७, ८, ६ भावों में पाप ग्रह से रहित शुभ हो तो अरिष्टो का नाश करने वाला होता हैं 1 जैसे उन्माद रोग का नाश कल्याण घृत करता है। यदि चन्द्रमा शुभफल देने वाले शुभग्रहों से युक्त हो और शुभग्रह के द्रेष्काण में हो तो अरिष्ट भंग योग बनता हैं 1 यदि जन्माङ्ग में चन्द्रमा पूर्ण बिम्ब से युत होकर शुभ ग्रह के द्वादशांश में हो तो अरिष्ट का विनाशक होता है, जैसे तक्र (मठा) के सेवन से

गुद रोग (बवासीर) नष्ट होता है। यदि बन्द्रमा शुभ ग्रह की राशि में लग्नेश से दृष्ट हो और अन्य ग्रहों से अदृष्ट हो तो अरिष्ट का नाशक होता है।

क्रूरभवने शशाङ्को भवनेशनिरीक्षितस्तदनुवर्गे । रक्षति शिशुं प्रजातं कृपण इव धनं प्रयत्नेन।

जन्माधिपतिबंलवान् सुहृद्धि रभिवीक्षितः शुभेर्भङ्गम् रिष्टस्य करोति सदा भीरुरिव प्राप्तसंग्रामः ॥

यदि चन्द्रमा पापग्रह की राशि में या पापग्रह के वर्ग में राशिस्वामी से दृष्ट हो तो जातक की रक्षा करता है, जैसे लोभी पुरुष अपने धन की प्रयत्न से रक्षा करता है। यदि राशिस्वामी बली हो और शुभ मित्र ग्रह से दृष्ट हो तो अरिष्ट का नाश करता है।

यहाँ पर आचार्य ने चन्द्र ,गुरु के द्वारा होने वाले अरिष्ट योगो का विधि पूर्वक वर्णन किया गया हैं। यहा यह भी बताया गया की जातक के अरिष्ट योगो का शमन केसे किया जाय आगे आप अध्ययन करेंगे ।

सर्वातिशाय्यतिबलः स्फुरदंशुमाली एको लग्ने स्थितः प्रशमयेत् सुरराजमन्त्री ।

बहूनि दुरितानि सुदुस्तराणि भक्त्या प्रयुक्त इव चक्रधरे प्रणामः ॥

यदि जातक के जम्माङ्ग में देदीप्यमान किरणों से युत बली गुरु अकेला भी लग्न में स्थित हो तो जातक के समस्त अरिष्टों का नाश होता है, जैसे भक्ति पूर्वक किया हुजा श्रीविष्णु के पाठान्तर से श्री शिवजी के प्रति एक नमस्कार भी समग्र महापापों को नष्ट करता हैं ।

गुरुशुक्रौ च केन्द्रस्थी जीवेद्वर्षशतं नरः ।

गृहानिष्टं हिनस्त्याशु चन्द्रानिष्टं तथैव च ॥

यदि किसी जातक की जन्मकुण्डली में गुरु-शुक्र केन्द्र स्थानों में स्थित हो तो वह सो वर्ष का जीवन यापन करता हैं । तथा ग्रहजन्य व चन्द्रजन्य अनिष्ट शीघ्र ही नष्ट हो जाता हैं ॥

4.7 जातक पारिजातक ग्रन्थ के अनुसार चन्द्र गुरुकृत अरिष्ट भंग योग विचार

ज्योतिष के फलित ग्रन्थों में बहुत से अरिष्ट योगों का वर्णन ग्रंथो में प्राप्त होता हैं। जो अरिष्ट योग जातक की कुंडली में बनता हैं उस योग के द्वारा जातक के जीवन पर, आयु पर मान, प्रतिष्ठा इत्यादि पर अरिष्ट योग का प्रभाव पड़ता हैं। जिससे उस जातक को जीवन पर्यंत दुखों का सामना करना पड़ता हैं। इस अरिष्ट योग के समाधान के लिए अरिष्ट योग भंग का विचार करना आवश्यक होता हैं। जिस प्रकार एक लघुतम दीपक भी घनघोर अन्धकार का नाश देता है ठीक उसी प्रकार कुण्डली में भी शुभ ग्रह की दृष्टि या युक्ति से पापग्रह की दृष्टि या युति के द्वारा भी उपर्युक्त अरिष्ट योगों का प्रभाव समाप्त हो जाता हैं। जो अरिष्ट भंग योग कहलाता हैं। इन अरिष्ट भंग योगों द्वारा मनुष्य शुभफल को प्राप्त करता है। इन अरिष्ट भंग योगों का जातक ग्रन्थों में विस्तृत वर्णन किया गया हैं , जो आगे दिया जा रहा हैं।

दैवज्ञ वैद्यनाथ कृत "जातक परिजात" नामक ग्रन्थ में अरिष्टाध्याय में विभिन्न अरिष्ट मंग योगों का वर्णन प्राप्त होता है। यदि जातक की कुंडली में लग्नेश अत्यन्त बलवान हो तथा शुभ ग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट हो, तथा केन्द्र भावो में स्थित हो, पापग्रहों की दृष्टि से रहित हो तो ऐसा जातक सदा भाग्य से युक्त होकर दीर्घायु होता है। तथा अरिष्ट का शमन हो जाता हैं।

अत्यन्तसत्वे यदि लग्ननाथे सौम्यान्विते तादृशदृष्टियोगे।

केन्द्रस्थिते पापदृशाविहीने सद्भाग्ययुग् जीवतिदीर्घमायुः ।।"

लग्नाधिपोऽति बलवान् शुभैरवृष्टः, केन्द्रस्थिते शुनखगैरवलोक्यमानः।

मृत्युं विधूय विदधाति सुदीर्घमायुः, सार्थ गुणैबहुभिरुर्जितया च लक्ष्म्या।

यदि जातक के जन्मांम कुंडली में चन्द्रमा शुभ ग्रहों से युक्त हो दृष्ट हो तो जातक के सम्पूर्ण अरिष्ट का नाश करता हैं।

चन्द्रः सम्पूर्णगात्रास्तु सौम्यक्षेत्रांशगोऽपि वा।

सर्वारिष्टनिहन्ता स्यात् विशेषाच्छुकवीक्षिताः ।।

यदि जातक के जन्मांग में बृहस्पति, शुक्र अथवा बुध इन तीनों सौम्य ग्रहों में से कोई भी एक ग्रह बलयुक्त होकर चारों केन्द्रभावों में से किसी भी स्थान में हो तथा उस ग्रह की किसी भी पापग्रह से सम्बन्ध न हो तो ऐसा योग जातक के अरिष्ट योगों का शीघ्र नाश कर देता है। यथा-

जीवभार्गवसौम्यानामेकः केन्द्रगतो बली।

पापकृद्योगहीनश्चेत्सद्योरिष्टस्य भंगकृद् ।।"

4.8 वृहतजातक में अरिष्ट भंग योग विचार

आचार्य वराहमिहिर कृत बृहज्जातक की भट्टोत्पली टीक में भी अरिष्ट भंग योग के बारे में वर्णन किया गया हैं 1 जो आगे दिया जा रहा हैं।

बुधभार्गवजीवानामेकतमः केन्द्रमागतो बलवान् ।

यद्यक्रूरसहायः सद्योरिष्टस्य भंगाय।। 2

शीत ऋतु में रात्रिकाल घास पर पड़ी ओस रूपी जल की बूंदें प्रातःकाल तक जमकर हिम का रूप धारण तो कर लेती हैं परन्तु सूर्य की तप्त किरणें जिस प्रकार उस हिमावरण को भेदकर उस जलराशि का नाश करती हैं उसी प्रकार से ही यदि किसी जातक के जन्मांग में चन्द्रमा अपनी उच्च राशि (वृष) में हो, तथा अपनी स्व राशि (कर्क) में हो, अपने मित्रों के वर्ग में हो तो जातक का अरिष्ट भंग योग बनता हैं। यदि जातक की कुंडली में पूर्ण चन्द्रमा शुभवर्ग में स्थित हो तथा शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो जातक के सभी अरिष्टों का नाश उसी प्रकार करता है जेसे गरूड जहरीले सर्पों का नाश करता है।

निशाकरः शोभनवर्गयुक्तः, शुभिक्षितः पूरितदीप्तजालः ।

जातस्य निःशेषमरिष्टमासुः, निहन्तियद्वद् गरलं गरुत्मान्।।"

यदि जातक के जन्माग चक्र में चन्द्र राशीश लग्न में हो तथा उस पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तथा चन्द्रमा पर शुक्र ग्रहों की दृष्टि हो तो जातक के सभी अरिष्टों का शमन हो जाता हैं 1 इस प्रकार से हम

सभी ने अनेक आचार्यो के द्वारा दिए ग्रंथो के आधार पर अरिष्ट भंग योग के बारे में जानने का प्रयत्न किया l

4.9 सारांश

इस लौकिक जगत मैं सभी जीव किसी न किसी समस्याओं से पीड़ित दिखाई देते हैं। वह समस्या उस जातक के कर्मों तथा उसके चलनें वाली ग्रह दशा के आधार पर अरिष्टों का सामना करना पड़ता हैं। यहां पर ज्योतिष शास्त्र के अनुसार हमनें पिछले ईकाई मैं अरिष्ट योग, अरिष्ट भंग विचार के बारे मैं अध्ययन किया। अब हम अरिष्ट से किस प्रकार मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं इन सभी का विचार ज्योतिष शास्त्र के माध्यम से कुछ विशेष ग्रह होते हैं वो चन्द्र, गुरु, ग्रह हैं। जिसके के द्वारा अरिष्ट भंग योग के बारे जाना जा सकता हैं। जैसे गुरु, चंद्र के द्वारा अरिष्ट भंग के बारे मैं विचार किया जाता हैं। यदि किसी जातक की कुंडली मैं चन्द्र राशि का स्वामी लग्न मैं हो तथा शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो जातक का अरिष्ट भंग योग बनता हैं। यदि चन्द्रमा अपनी उच्च राशि या अपने स्वगृही होकर केंद्र मैं स्थित हो तो इस स्थिति मैं भी जातक का अरिष्ट भंग योग बनता हैं। इस प्रकार से वृहस्पति ग्रह का भी विचार किया जाता हैं। यदि गुरु ग्रह बली होकर लग्न मैं स्थित हो तो सभी प्रकार के अरिष्ट योगों को भंग करता हुआ जातक को शुभ फल की प्राप्ति कराता हैं। गुरु ग्रह अपने उच्च, स्वगृही, होकर केंद्र मैं हो तो सभी प्रकार के अरिष्ट दोषों का शमन हो जाता हैं, जो अरिष्ट भंग योग कहलाता हैं। आप सभी ने इस ईकाई के द्वारा अध्ययन कर चन्द्र गुरुकृत अरिष्ट भंग योग के बारे मैं समझ लिया होगा।

4.10 पारिभाषिक शब्दावली

1. जन्मांग	जन्म कुंडली
2. जातक	व्यक्ति
3. जीव	वृहस्पति
4. अष्टमेश	अष्टम भाव का स्वामी
5. भार्गव	शुक्र ग्रह
6. शीर्षोदय राशि	सिंह, कन्या
7. क्षिप्रं	शीध्र ही
8. विमिश्रेण	मिश्रित
9. अन्त्य	द्वादश भाव

10. शीतरश्मि चन्द्रमा
11. शशिसुत सुध
12. मन्द शनि
13. सौरेण शनि के द्वारा
14. विधातव्य जानना
15. धरणी पृथ्वी

4.11 अभ्यास प्रश्न

1. देवताओं के गुरु हैं।
2. नमन क्या हैं।
3. जिस व्यक्ति का जन्म शुक्ल पक्ष की रात्रि मैं जन्म हो तो उसका क्या फल हैं।
4. शनि ग्रह की विशेष दृष्टि होती हैं।
5. पाताल किस भाव की संज्ञा हैं।
6. 2,7,12, इन भावों को क्या कहा जाता हैं।
7. जातक पारिजात के लेखक हैं।
8. केन्द्र मैं गुरु के बैठ जाने पर क्या फल होगा।
9. सारावली के लेखक हैं।
10. पाप ग्रह हैं।
11. धरासुत किस ग्रह को कहा जाता हैं।
12. बुध ग्रह का केंद्र मैं होकर क्या फल होता हैं।

4.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. वृहस्पति
2. झुकना
3. उस व्यक्ति के अरिष्ट दूर हो जाते हैं
4. 3,10भावों पर
5. चतुर्थ भाव की
6. मारक स्थान
7. आचार्य वैध नाथ

8. जातक का अरिष्ट भंग योग बनता हैं।
9. आचार्य कल्याण वर्मा
10. राहु, केतु,
11. भौम ग्रह को
12. अरिष्ट भंग योग करता हैं।

4.13 संदर्भ ग्रन्थ सूची

ग्रन्थ	लेखक	प्रकाशक
6. बृहज्जातक 2002 संवत्	वराहमिहिर	चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी
7. सारावली दिल्ली 1977	कल्याणवर्मा	मोतीलाल बनारसीदास प्रथम संस्करण
8. भावकुतूहल	जीवनाथ	संस्कृत पुस्तकालय वाराणसी
9. बृहत्पाराशरहोराशास्त्र	पराशर मुनि	लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस कल्याण,
10. बृहत्संहिता	वराहमिहिर	चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी
11. सर्वार्थ चिंतामणि		

4.14 निबन्धात्मक प्रश्न

1. चन्द्र, गुरुकृत अरिष्ट भंग योग का विस्तार पूर्वक उल्लेख कीजिए।
2. चन्द्र,तथा गुरु के स्वरूप का वर्णन कीजिए।
3. सारावली ग्रन्थ के अनुसार अरिष्ट भंग योग पर प्रकाश डालिए।
4. अरिष्ट योगों पर निबंध लिखिए।

खण्ड -3
विविध आयु योग

इकाई -1 अल्पायु योग

इकाई की संरचना –

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 अल्पायु योग का परिचय
1.4 अल्पायु योग के भेद
1.5 बोध प्रश्न
1.6 सारांश
1.7 बोध प्रश्नों के उत्तर
1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना-

प्रस्तुत इकाई के द्वारा हम यह जानने का प्रयास करंगे की अल्पायु योग है क्या ? किन-किन योगों के द्वारा इसे जाना जा सकता है, जीवन में सभी मनुष्य की आयु निर्धारित हैं। संसार में शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति होगा जो अपनी आयु जानने के बारे में उत्सुक ना हो। सभी जातक - जातिका को अपनी उम्र को जानने की लालसा होती हैं ज्योतिष शास्त्र से कुछ योगों द्वारा कुछ हद तक जाना जा सकता हैं, कि कब मारकेश की दशा, शनि या अष्टमेश आने पर कष्ट मिलेगा। ज्योषित शास्त्र सिर्फ संकट की सूचना ही नहीं देता, बल्कि उसका समाधान भी बताता हैं। आयु के संकट में भी यही बात हैं विभिन्न ग्रहों की स्थिति और योगों से मृत्यु के संबध में जानकारी मिल जाती हैं |

मनुष्य के जीवन में आयु से जीवन व मृत्यु निर्धारित होती हैं। सत्य ये हैं, कि मृत्यु के विषय में जानकारी देना अत्यंत दुर्लभ हैं, परन्तु फिर भी एक अनुमान द्वारा हम जानने की प्रयत्न करते हैं। तथा इससे की पहले इकाइयों में अन्य अरिष्टों के बारे में जानकारी प्राप्त कर चुके है, इस इकाई में हम केवल अल्पायु सम्बन्धी योगों के बारे में समझाने का प्रयास करेंगे |

1.2 उद्देश्य

- अल्पायु योग क्या है, यह जान सकेंगे|
- किन-किन योगों के द्वारा अल्पायु योग होता है यह जान सकेंगे|
- अल्पायु योग के आधार बिंदुओं को समझने का प्रयास करेंगे|
- अल्पायु कितने से कितने वर्ष तक होता है|

1.3 अल्पायु योग का परिचय –

सर्वप्रथम हम बात करें तो किसी भी योग या जातक के शुभाशुभ की जानकारी की तो हमें सर्वप्रथम शुद्ध जन्मांग चक्र की आवश्यकता होती है बिना सही जन्मांग चक्र के कोई भी गणितज्ञ (ज्योतिषी) हो सही गणना नही कर सकता है उसी प्रकार से जब भी जातक का फलादेश किया जाय तो सबसे पहले उसकी आयु का विचार करना चाहिए ,यदि आयु ही नहीं होगी तो अन्य योगों का कुछ भी महत्त्व नही रह जाता है ,इसलिए आयु के विचार के उपरांत ही अन्य शुभाशुभ का विचार किया जाना आवश्यक है अरिष्ट योगों एवं अरिष्ट भंग योगों का विचार करके के उपरांत ही आयु का सही तरीके से निर्धारण कर सकते है अल्पायु योग मुख्यतः २४ वर्ष से ३२ वर्ष की आयु तक ही आचार्यो ने माना है परन्तु कही कही पर यह भी देखने में प्राप्त होता की २० वर्ष से कुछ आचार्यो का अपना मत है ,परन्तु प्रायः २४ वर्ष से ही अल्पायु योग को आचार्यो ने स्वीकार किया है

मोटे तौर पर वृष तुला मकर व कुंभ लगन वाले जातक यदि अन्य शुभ योग न हो तो अल्पायु होते है। यदि लग्नेश चर मेष कर्क तुला मकर राशि में हो तो अष्टमेश द्विस्वभाव मिथुन कन्या धनु मीन राशि में हो तो अल्पायु समझना चाहिये। लगनेश पापग्रह के साथ यदि ६ ८ १२ भाव में हो तो जातक अल्पायु होता है। यदि लगनेश व अष्टमेश दोनो नीच राशिगत अस्त निर्बल यो तो अल्पायु योग होता है। दूसरे और बारहवे भाव में पापग्रह हो केन्द्र में पापग्रह हो लगनेश निर्बल हो उन पर शुभ ग्रहों की द्रिष्टि नही हो तो जातक को अल्पायु समझना चाहिये। इसी प्रकार यदि जन्म लगनेश सूर्य का शत्रु हो जातक अल्पायु माना जाता है।

यदि लग्नेश तथा अष्टमेश दोनो ही स्थिर राशि में हो तो जातक अल्पायु होता है। इसी प्रकार शनि और चन्द्रमा दोनो स्थिर राशि में हो अथवा एक चर और दूसरा द्विस्वभाव राशि में हो तो जातक अल्पायु होता है। यदि जन्म लगन तथा होरा लगन दोनो ही स्थिर राशि की हों अथवा एक चर व दूसरे द्विस्वभाव राशि की हो तो जातक अल्पायु होता है। यदि चन्द्रमा लग्न द्रिष्काण दोनो ही स्थिर राशि हो तो जातक अल्पायु होता है। यदि चन्द्रमा लगन द्रिषकाण में एक की चर और दूसरे की द्विस्वभाव राशि तो भी जातक अल्पायु होता है। शुभ ग्रह तथा लग्नेश यदि आपोक्लिम ३ ६ ८ १२ में हो तो जातक अल्पायु होता है। जिस जातक की अल्पायु हो वह विपत तारा में मृत्यु को पाता है।

जातक पारिजात ग्रन्थ में अल्पायु योग का वर्णन इस प्रकार से किया गया है

षष्ठाष्टमे व्यये पापे लग्नेशे दुर्बले सति ।
अल्पायुरनपत्यो वा शुभदृग्योगवर्जिते ॥
क्रूरषष्ट्यंशके वाऽपि रन्ध्रेशे भानुजेऽपि वा ।
पापान्विते पापखेटे चाल्पमायुर्विनिर्दिशेत् ॥
व्ययार्थी पापसंयुक्तौ शुभदृष्टिविवर्जितौ ।
क्रूरषष्ट्यंशसंयुक्तौ वाऽल्पमायुर्विनिर्दिशेत् ॥

छठे, आठवें और बारहवें भाव में पापग्रह तथा लग्नेश निर्बल हों और शुभग्रह से युत-दृष्ट न हो तो जातक अल्पायु और निःसन्तान होता है ॥

रन्ध्रेश (अष्टमभावाधिपति) अथवा भानुज अर्थात् शनि यदि क्रूरषष्ट्यंश में स्थित हों और पापग्रह से संयुक्त हों तो जातक अल्पायु होता है ॥

क्रूरषष्ट्यंशस्थ पापग्रह यदि द्वितीय और द्वादश भावों में शुभग्रहों से युत दृष्ट न हों तो जातक अल्पायु होता है ॥

'अल्पायुर्व्ययगेऽथवा रिपुगते पापान्विते रन्ध्रपे ।
रन्धेशेन युते तु तत्र विबले जातोऽल्पजीवी नरः' ॥

पापग्रहों से युत अष्टमाधिपति यदि छठे या बारहवें भाव में स्थित हो तो जातक अल्पायु होता है। इन्हीं भावों में यदि निर्बल होकर अष्टमेश स्थित हो तो भी जातक को अल्पायु देता है-

'केन्द्रत्रिकोणपापस्थाः षष्ठाष्टेषु शुभा यदि। लग्ने रन्धेशनीचस्थे जातः सद्यो मृतो भवेत्' ॥

केन्द्र और त्रिकोण में पापग्रह स्थित हों, षष्ठ और अष्टम भाव शुभग्रहों से युत हो तथा नीचराशिगत अष्टमेश लग्न में स्थित हो तो जातक की मृत्यु शीघ्र ही होती है।

जैमिनी मतानुसार आयु सम्बन्धी निर्णय -

लग्नेश चर राशि में हो	लग्नेश स्थिर राशि में हो	लग्नेश द्विस्वभाव राशि में हो
अष्टमेश द्विस्वभाव राशि में हो	अष्टमेश स्थिर राशि में हो	अष्टमेश चर राशि में हो

यवन जातकानुसार अल्पायु योगों का वर्णन किया जा रहा है –

लग्नेश और राशीश (चन्द्रराशीश) में स्फुट योग (अंश, कला और विकला में साम्यता) हो और वे केन्द्र अथवा अष्टम भाव में पापग्रह से युत हों तो सत्ताईसवें वर्ष में मृत्युदायक होता है।

सूर्य, चन्द्रमा और राहु लग्न तथा व्ययभाव में स्थित हों तो अट्ठाईस वर्ष में जातक की मृत्यु होती है।

द्वितीय एवं द्वादश भाव में पापग्रह स्थित हों, बृहस्पति राहु से युत होकर सप्तम या अष्टम भाव में स्थित हो तो तीस वर्ष के बाद मृत्यु होती है।

क्षीण चन्द्रमा अपनी राशि में, अष्टमेश केन्द्र में तथा पापग्रह अष्टम भाव में स्थित हों और यदि लग्नेश निर्बल हो तो तीस वर्ष के अनन्तर जातक की मृत्यु होती है।

लग्नेश षष्ठभाव में, पापग्रहों के साथ चन्द्रमा और शुक्र पंचम भाव में स्थित हों तथा अष्टमेश केन्द्र में स्थित हो तो जातक की आयु तीस वर्ष होती है।

लग्नेश के साथ चन्द्रमा आपोक्लिम (३।६।९।१२वें) भाव में पापग्रहों से दृष्ट हो तो जातक बत्तीस वर्ष तक जीवित रहता

चन्द्रराशि, लग्न और अष्टम भाव के स्वामी केन्द्र में स्थित हों, अष्टम भाव में कोई ग्रह स्थित हो और केन्द्र में यदि कोई शुभग्रह न हो तो जातक बत्तीस वर्ष तक जीवित रहता है।

दक्षिण भारत के सुप्रसिद्ध ग्रन्थ प्रश्न मार्ग के अनुसार अल्पायु योग का वर्णन निम्नलिखित प्रकार से किया गया है

१ - लग्न व चन्द्रमा का निर्बल होना

२ – लग्न और चन्द्रमा पर पाप ग्रहों की दृष्टि होना

३ – लग्न व चन्द्रमा की पाप ग्रहोंसे युति होना

४- लग्नेश का व चन्द्र राशीश का अस्त होना

५- जन्म राशीश तथा लग्नेश का ६,८,१२,भाव में स्थित होना

६- लग्नेश व राशीश का बलहीन होना

७- जन्म के समय सूर्य व चन्द्रमा का ग्रहण या परिवेष होना

८- संध्या के समय जन्म होने पर दिग्दाह होना

९- अपशकुनों के समय (धूमकेतु का उदय, आँधी, तूफान, गीदड़, कौओं व कुत्तों का रुदन आदि) जन्म होना

१०- राशियों के मृत्युभागांशो में या राशि सन्धि में जन्म होना

११- मृत्युभागांश में चन्द्रमा यदि केन्द्र या अष्टम में हो

१२- मृत्युभागांश गत चन्द्रमा यदि केन्द्र या अष्टम में पापग्रहों से युति करता हो

१३- पापग्रह से दृष्ट चन्द्रमा की षष्ठ अष्टम में स्थिति

१४- केन्द्र, त्रिकोण व अष्टम स्थान में पापग्रहों की स्थिति

ये दोष आयु को घटाने वाले है, जितने अधिक योग आयु क्षीण करने वाले होंगे ,उतनी ही आयु का अनुपात कम समझना चाहिए

तथा आचार्य मुकुन्द दैवज्ञ ने अपने ग्रन्थ आयुर्निर्णयः में अल्पायु सम्बन्धी अनेक योगों का वर्णन करते हुये बताया है की किस-किस प्रकार से अल्पायु का विचार किया जाना चाहिये

द्रव्यान्त्यगौ खलखगौ विमलेक्षणोनौ, क्रुराम्बरंगलवगौ जननेऽल्पमायुः
पुण्येऽर्थपोऽर्च्चितसितौ फल आर्किरस्ते, वेज्यो भये यमकुजौ तनुभे लयेऽब्जे १
वास्ते कुजे खरकरे नियतौ कलौ भेऽथांगान्मदे मृदुगतौ भवने भगेऽथो
पन्कान्विते प्रलयपे प्रलये सपंकेक्रूरे सुतेऽथ सखले कलहे स्वनीचे २
दिष्टान्तपे धनविभौ विबलेऽथ भव्यादृष्टाश्चतुष्टयगता मलिना धनेशः
सारोनितोऽथ सुकृतेक्षणयोगमुक्तेब्यूर्ज्जेऽन्गपे त्रिकगते कलुषग्रहे वा ३
याम्येश्वरेऽघभवने सखले त्रिकस्थआहो खलेक्षितयुतौ यमयाम्यनाथौ
क्रूराभ्ररागलवगावुत दुष्टभावेदेहाधिपे गतबले मलिनेऽल्पमायुः ४

जन्म समय में यदि द्वितीय व द्वादश स्थानों में क्रूरषष्ट्यंशगत पापग्रह हों तथा उन पर शुभग्रहों की दृष्टि न हो अल्पायु होती है

द्वितीय स्थान का स्वामी नवें स्थान में बैठा हो, ग्यारहवें स्थान में गुरु व शुक्र तथा सातवें स्थान में शनि हो तो आल्पयु योग होता है

षष्ठ स्थान में बृहस्पति,लग्न में शनि, मंगल और मृत्यु स्थान (अष्टम) में चन्द्रमा विरजमान हो तो अल्पायु योग होता है

सातवें स्थान में मंगल, नवें भाव में सूर्य, आठवे भाव में शुक्र स्थित हो

सप्तम स्थान में शनि हो तथा चतुर्थ स्थान में सूर्य हो
अष्टम स्थान का स्वामी यदि पापग्रहों से युक्त हो, अष्टम स्थान में भी पापग्रह हो तथा पंचम स्थान में भी पापग्रह हो तो भी अल्पायु योग होता है
अष्टम स्थान में पापग्रह हो, अष्टम स्थानाधिपति अपनी नीच राशि में हो और लग्नेश निर्बल हो
केन्द्र में पापग्रह हों और उन पर शुभ ग्रहों की दृष्टि न हो तथा लग्नेश निर्बल हो
निर्बल लग्नेश पर शुभग्रहों की दृष्टि न हो या शुभग्रहों से युक्त न हो और त्रिक्स्थानों में पापग्रह हों
त्रिक्स्थानों में पापग्रह की राशि में अष्टमेश हो तथा पापग्रहोंसे युक्त हो
शनि तथा अष्टमेश क्रूरषष्ट्यंश में हो तथा पापग्रहों से युति या दृष्टि हो
त्रिक में पापी लग्नेश हो तथा वह निर्बल हो
उपरोक्त सभी योगों में उत्पन्न जातक अल्पायु होते है ऐसा आचार्य का मत है

लग्नेशे सौम्ययुक्ते वपुषि च लयपे रन्ध्रगे नान्यदृष्टे

विंशत्केन्द्रे लयेशे बलवियुजि तथा लग्नपे त्रिंशदायुः

शुभग्रह से युक्त लग्नेश लग्न में ही रहे और अष्टमेश अष्टम स्थान का होकर अन्यग्रहों की दृष्टि से रहित हो तो २० वर्ष की आयु होती है। लग्नेश और अष्टमेश बलहीन होकर यदि केन्द्र (१०-७-४-१) ३०रहें तो स्थानों में

इन्दावापोक्लिमस्थे तदनु तनुपतौ निर्बले पापदृष्टे

दन्तैस्तुल्यं ततोऽर्कः खलखगविवरे लग्नगोऽब्जस्त्रिसंख्यम्।

रिष्फे केन्द्रे सुरेज्ये गुरुरिपुसहजे स्यात्सपापेऽङ्गनाथे

रामाब्दं कर्कलग्ने कुजतुहिनकारौ केन्द्रगन्वं ग्रहोनम्॥

बलहीन होकर चन्द्र और लग्नेश आपोक्लिम १ -९-६-३)२स्थान में हों और पापग्रह से दृष्ट हों तो (वर्ष की आयु होती है। ३०वर्ष की आयु होती है। लग्नेश यदि दो पापग्रहों के बीच में रहे तो ३२ बृहस्पति द्वादश भाव में या केन्द्र स्थान में हो, पापग्रह से युत होकर लग्नेश तृतीयभाव षष्ठ या नवम- में हो तो अथवा कर्क लग्न हो उसमें चन्द्र व भौम स्थित हों और केन्द्रस्थान तथा अष्टमस्थान शुभ या पाप ग्रह से रहित हो तो ३ वर्ष की आयु होती है॥

जातकतत्वम् ग्रन्थ के अनुसार

सपापे रन्ध्रेशेऽन्त्ये षष्ठे वा अल्पायुः ।
पापा आपोक्लिमस्थाऽल्पायुः ॥
लग्नाष्टमेशौ व्ययारिगौ वाऽल्पायुः ॥
धनेशेऽङ्गेऽस्तेऽर्कजे लाभे इज्याच्छौ अल्पायुः ॥
लग्नेऽर्कजारौ चन्द्रो रन्ध्रगः षष्ठे जीवेऽल्पायुः ॥
लग्नेशेऽष्टमेऽल्पायुः ॥
त्रिके पापेऽङ्गेशेऽबलेऽल्पायुः ॥
क्रूरषष्ठवंशे मन्दरन्धेशौ सपापौ पापदृष्टौ वाऽल्पायुः ॥
पापे केन्द्रे शुभदृग्धीनेऽङ्गेशेऽबलेऽल्पायुः ॥
प्रकीर्णतत्त्वान्तर्गताष्टमविवेकः
व्ययार्थगौ पापौ शुभदृग्धीनौ अल्पायुः ॥
अङ्गगौ शुक्रेज्यौ सुतगौ भौमपापौ चन्द्रेऽल्पायुः ॥
सार्काङ्गेशेऽङ्गे खलशुभयुतेक्षिते चन्द्रेऽल्पायुः ॥

पापग्रहों के साथ अष्टमभावाधिपति यदि छठे या बारहवें भाव में स्थित हो|
पापग्रह यदि आपोक्लिमस्थ (३।६।९।१०वें) भाव में स्थित हों |
लग्नेश और अष्टमेश यदि छठे या बारहवें भाव में स्थित हों |
धनभाव (द्वितीयभाव) का स्वामी नवें भाव में, शनि सप्तमभाव में तथा आय (एकादश) भाव में बृहस्पति और शुक्र स्थित हों |
लग्न में सूर्य और मंगल, अष्टमभाव में चन्द्रमा और छठे भाव में बृहस्पति स्थित हो|
लग्न का स्वामी यदि अष्टमभावगत हो |
सभी पापग्रह त्रिक में स्थित हों और लग्नेश निर्बल हो|
क्रूरषष्ठयंशस्थ शनि और अष्टमभाव का स्वामी संयुक्त हों और पापग्रहों से युत अथवा दृष्ट हों |
शुभग्रह की दृष्टि से हीन पापग्रह यदि केन्द्रस्थ हों और लग्नेश निर्बल हो |
द्विर्द्वादश भावों में स्थित पापग्रह शुभग्रहों से अदृष्ट हों |
शुक्र और बृहस्पति लग्न में, पापग्रह से युक्त मंगल पंचमभाव में स्थित हों और चन्द्रमा क्षीण हो अथवा पापयुक्त हो |
सूर्यसहित लग्नेश लग्नस्थ होकर पाप और शुभ ग्रहों से युत और चन्द्रमा पापग्रहों से दृष्ट हो|
उपर्युक्त परिस्थितियों में जातक अल्पायु होता है ॥

अष्टमाधिपतौ केन्द्रे लग्नेशे बलवर्जित । विंशद्वर्षाण्यसौ जीवेद्वात्रिंशत्परमायुषम्' ॥

अष्टमभाव के स्वामी यदि केन्द्रस्थ हों और लग्नेश बलहीन हो तो २० अथवा ३२ वर्ष की आयु होती है।

'रन्ध्रेशे नीचराशिस्थे रन्ध्रे पापग्रहैर्युते। लग्नेशे दुर्बले यस्य अल्पायुर्भवति ध्रुवम्' ॥
अष्टमेश नीचराशिगत हो, अष्टमभाव पापान्वित और लग्नेश दुर्बल हो तो जातक अल्पायु होता है।

'केन्द्रत्रिकोणपापस्थाः षष्ठाष्टेषु शुभा यदि। लग्ने रन्धेशनीचस्थे जातः सद्यो मृतो भवेत्' ॥
केन्द्र और त्रिकोण में पापग्रह स्थित हों, षष्ठ और अष्टम भाव शुभग्रहों से युत हो तथा नीचराशिगत अष्टमेश लग्न में स्थित हो तो जातक की मृत्यु शीघ्र ही होती है।

1.4 वर्षों के आधार पर अल्पायु योग के भेद

इक्कीस वर्ष की आयु में अल्पायु योग –

कन्योक्षकुम्भेष्वरुणेऽसितेऽजे वृषे बुधे पाप्मनि नैधनेऽथो
चतुष्टये चारुकवि च संध्याकाले सपंके पुरपेऽनुजेऽके
तीर्थे भये वा दुरिताभ्रगामिमध्योपगोऽम्भोजवनप्रकाशी
प्रग्लाग्नयातो रिपुधाम्नि संस्थो विशां शशांकान्ततुल्यमायुः

अर्थात् वृष, कन्या या कुम्भ में सूर्य हो, मेष में शनि हो, वृषभ में बुध हो और आठवे स्थान में पापग्रह हो
संध्याकाल में जन्म हो, केन्द्र में गुरु शुक्र हों और तीसरे, बारहवें उया नवें स्थान में पापग्रह से युक्त लग्नेश हों
लग्न या षष्ठ स्थान में पापग्रह में अन्तराल में सूर्य हों तो इन योगों में जातक की आयु इक्कीस वर्ष की होती है

बाईस वर्ष में अल्पायु योग

साचार्य्योऽङ्गे पावको भेशदृष्टो याम्यागारे कश्चनाथोग्रखेटः
छिद्रे क्षीणः पर्वरि पंकभस्थोऽसद्द्रेष्काणेऽन्ये समस्ताः खगा वा
कलीश्वरे केन्द्रगते पतंगे सार्य्ये पुरे षोडशपादभस्थे
आयुर्भवेज्जातिसमाननवाषमर्य्यास्तनौ सेंदुरहिर्लयेऽस्थे

लग्न में बृहस्पति के साथ कोई पापग्रह हो तथा उस पर चन्द्रमा की दृष्टि हों और आठवें स्थान में किए ग्रह हों
अष्टम में पापग्रह हों, क्षीण चन्द्रमा पापराशि में हों तथा शेष ग्रह पाप द्रेष्काण में हों
अष्टमेश केन्द्र में हो, लग्न में कर्क राशिस्थ गुरु व सूर्य हो
लग्न में गुरु हो, सप्तम या अष्टम में राहु युक्त चन्द्रमा हो
इन योगों में उत्पन्न जातक की बाईस वर्ष की आयु होती है

चन्द्रदृष्टौ कूरेज्यौ तनौ रन्ध्रगः कोऽपि चेत् द्वाविंशतिः ।।

पापग्रहों से युक्त बृहस्पति यदि लग्र में चन्द्रमा से दृष्ट हो तथा अष्टमभाव ग्रह- विहीन न हो तो २२ वर्ष की आयु होती है।

'जीवेन सहितः सूर्यो लग्नस्थः कीटराशिगः । अष्टमाधिपतौ केन्द्रे द्वाविंशत्यब्दके मृतिः' ।।

कीटराशि (वृश्चिक) का सूर्य बृहस्पति के साथ लग्न में स्थित हो और अष्टमेश केन्द्रस्थ हो तो जातक की आयु २२ वर्ष होती है।
षष्ठ, सप्तम और अष्टम भावों में क्रमशः बृहस्पति, शनि और पापग्रह तथा चतुर्थभाव में चन्द्रमा स्थित हों तो जातक २३ वर्ष की वय प्राप्त करता है।

चौबीस वर्ष की आयु के योग -

दृष्टेऽधैर्विबलेऽन्गपे च हिमगावापोक्लिमेऽथो खलै-
दृष्टेऽन्गेशी लये फले कलहपेऽथार्थाङ्कशांताधिपैः
एकक्षोपगतैर्म्रितौ घनविभावग्नेयदृष्टान्विते
नो कल्याणविलोकिते यदि मृतिः सिद्धोन्मिते वत्सरे

निर्बल लग्नेश व निर्बल चन्द्रमा यदि आपोकिल्म स्थानों में हो तथा उन पर पापग्रहों की दृष्टि हो
अष्टम स्थान में पापदृष्ट लग्नेश हो और अष्टमेश एकादश में हो
धनेश, नवमेश व अष्टमेश एक ही राशि में हों, लग्नेश अष्टम में हों और उस पर पापग्रहों की दृष्टि या युति हों और शुभ ग्रह की दृष्टि ण हो तो व्यक्ति की आयु चौबीस वर्ष की होती है

धर्मग रन्धेशे क्रूरे क्षिताङ्गपे रन्ध्रगे चेच्चतुर्विंशतिः ।।

नवमभाव में अष्टमाधिपति तथा पापदृष्ट लग्नेश यदि अष्टमभावगत हो तो जातक २४ वर्ष पर्यन्त जीवन को भोगता है।

नवम, द्वितीय अथवा लग्न में अष्टमेश और पापग्रहों से दृष्ट अथवा युत लग्नेश अष्टम- भावगत हो तो जातक २४वें वर्ष में मृत्यु को प्राप्त करता है।

पच्चीस वर्ष की आयु का योग-

प्रान्त्याजीशौ प्राणहीनौ द्विदेह-
लग्ने पंगौ पञ्चवगब्दिमायुः
ग्लावि क्षीणे साधरांशे विनाशे
संज्ञासूनुक्षोणिपुत्रेक्षिते वा !!
पापन्तःस्थेऽङ्गेशि नो पुण्ययुक्ते
यो ना जातस्तातजन्मोदये सः
नाशं गच्छेत्तत्त्ववर्षे यमांश-
आश्लेषोत्थेऽङ्गेऽस्थिघातात्तथैव !!

व्ययेश व अष्टमेशनिर्बल हो और द्विस्वभाव राशि के लग्न में शनि हो
अष्टम स्थान में नवांश गत क्षीण चन्द्रमा हो तथा उस पर शनि व मंगल की दृष्टि हो
लग्नेश यदि पापग्रहों के अन्तराल में हो और शुभग्रहसे युक्त न हो तथा पिता के जन्म लग्न में ही जन्म हो तो पच्चीसवें वर्ष की आयु का विधान है
यदि लग्न में शनि के नीच नवांश में केतु हो तो पच्चीसवेंवर्ष में हड्डी टूटने से मृत्यु होने का योग होता है

द्विदेहाङ्गे शनौ व्ययाष्टेशौ निर्बलौ चेत्पञ्चविंशतिः ।।

लग्न में द्विस्वभावराशि का शनि स्थित हो तथा अष्टमेश और व्ययेश निर्बल हों तो जातक २५ वर्ष की आयु का भोग करता है।
२५ वर्ष आयु के अन्य योग निम्नलिखित हैं-
पिता-पुत्र का एक ही लग्न हो और लग्नेश पापग्रहों के मध्य स्थित हो तो जातक २५ वर्ष की आयु भोगता है।

छब्बीस वर्ष की आयु का योग –

नेमौ त्रिकास्तघनगेऽशुभयुक्तदृष्टे-
ऽथारोऽहिरुदयाहवमंगलेऽरौ,

सूरिः सिते चरमगेऽथ मृतौ मृगांके-
ऽङ्गे त्रयन्शके भुजगसूकरगृध्रकाणम्

लग्न सप्तम या त्रिक्स्थानो में चन्द्रमा हो तथा वह पापग्रहों से युक्त या दृष्ट हो
मंगल दशवें स्थान में हो, लग्न, अष्टम व नवम स्थान में राहु हो, छठे स्थान में गुरु और व्यय भाव में शुक्र हो
जन्म समय में अष्टम में चन्द्रमा हो, लग्न में सर्प, शूकर व गृध द्रेष्काण हों तो छब्बीसवें वर्ष की आयु का प्रमाण होता है

सताईस वर्ष की आयु प्रमाण –

सूरौ स्वर्क्षे स्वत्रिभागेऽथ सोग्राङ्गायुर्नाथौ नाशगौ वा निशेशे ,
क्रुरैर्युकते दिक्षणेऽके मदेऽङ्गाजावायुः सप्तहस्तोन्मिताब्दम्|

यदि गुरु अपनी ही राशि द्रेष्काणमें हों, अष्टम में पापयुक्त लग्नेश हो,तथा अष्टमेश भी वही पर हो
लग्न, सप्तम, अष्टम, नवम, द्वादश स्थानों में पापयुक्त चन्द्रमा हो तो सत्ताईस वर्ष की आयु का प्रमाण बताया गया है
लग्न में शत्रु राशिगत शनि हों और आपोक्लिम में शुभग्रह हों तो सत्ताईस वर्ष आयु का प्रमाण माना गया है
लग्नेश और अष्टमेश के स्पष्ट राशियादि का योग करने से जो राशि आए, यदि वह लग्न से केन्द्र या अष्टम स्थान में हो और उस राशि में पापग्रह हो तो सत्ताईस वर्ष की आयु होती है

जैसे –

उदाहरण के द्वारा समझाने का प्रयास करते हैं

माना यदि किसी का जन्म धनु लग्न में हुआ हो तो लग्नेश बृहस्पति व अष्टमेश चन्द्रमा राशयादि का योग किया ! गुरु की स्पष्ट राशि ४/१५/०२/०० है, तथा अष्टमेश चन्द्रमा की राशियादि योग ६/२०/५८/०० है तो इनका योग करने पर-

४/१५/०२/०० + ६/२०/५८/०० = ११/०६/००/०० प्राप्त हुआ अर्थात् मीन राशि हुई,यह राशि धनु लग्न से केन्द्र में है, यदि चतुर्थ स्थान मीन राशि में कोई पापग्रह भी हो तो सत्ताईस वर्ष की आयु प्रमाण समझना चाहिय

जातकपारिजात ग्रन्थ के अनुसार

मन्दोदये शत्रुराशौ सौम्यैरापोक्लिमोपगैः।
षड्विंशत्यब्दके वा स्यात् सप्तविंशतिवत्सरे॥

शत्रुराशि का शनि लग्नस्थ हो तथा शुभग्रह आपोक्लिम में स्थित हों तो २६ या २७ वर्ष की आयु होती है ॥

स्वर्क्षस्वयशंस्थेज्ये सप्तविंशाब्दायुः ॥
रन्धेशाङ्गपौ रन्ध्र चेत्सप्तविंशतिः ॥

अपनी राशि अथवा अपने द्रेष्काण में यदि बृहस्पति स्थित हो तथा अष्टमेश और लग्नेश दोनों अष्टमभाव में संयुक्त हों तो २७ वर्ष की अवस्था होती है।

लग्नेश और अष्टमेश के भोगों के योग से उत्पन्न राशि में स्थित पापग्रह यदि केन्द्रस्थ हो तो जातक २७ वर्ष पर्यन्त आयुभोग करता है।

पापग्रह से संयुक्त होकर यदि चन्द्रमा १।७।८।९।१२वें भाव में स्थित हो तो २७वें वर्ष में मृत्यु होती है।

अट्ठाईस वर्ष की आयु के योग :

याम्ये जनीशि मृतिपे मलिनेऽमरेज्य-
पङ्केक्षिते किमु गुरौ चरमे घनस्थैः ।
नागेंद्वीनैरुत घनेऽत्रिसुतार्कीयोगो
योगो व्ययेऽर्ककुजयोर्न शुभेक्षितेऽङ्गे ॥
वांगग्लावोः कण्टकेऽके कलीशे यद्वा पङ्कः पञ्चतास्तोदयेषु ।
पुण्यैः प्रान्त्यार्था तुजार्य्यायकोणदिष्टान्तस्थैर्दन्ति दृवतुल्यमायुः ॥

यदि लग्नेश अष्टम स्थान में हो तथा अष्टमेश पापग्रह हो और उस पर गुरु व किसी अन्य पापग्रह की दृष्टि हो ।

बृहस्पति बारहवें स्थान में हो और जन्म लग्न में राहु, चन्द्र व सूर्य हों ।

लग्न में चन्द्र व शनि का योग (सम्बन्ध चतुष्टय) हो, व्यय स्थान में सूर्य व मंगल का योग हो और लग्न पर शुभ ग्रहों की दृष्टि न हो ।

लग्न या चन्द्रमा से केन्द्र में या व्यय स्थान में अष्टमेश हो ।

लग्न, सप्तम व अष्टम में पापग्रह हों तथा २, ३, ५, ६, ८, ६, ११, १२ स्थानों में शुभ ग्रह हों। इन योगों में अट्ठाईस वर्ष की आयु होती है

जातकपारिजात ग्रन्थ के अनुसार

रन्ध्रेशे जीवसन्दृष्टे पापे पापनिरीक्षिते ।
रन्ध्रस्थे जन्मपे मृत्युरष्टाविंशतिवत्सरे ॥

अष्टमेश पापग्रह हो और बृहस्पति तथा पापग्रह से दृष्ट हों तथा जन्मराशीश अष्टम भावगत हो तो २८वें वर्ष में मृत्युद होता है ॥

लग्नचन्द्राच्च रन्ध्रपे रि:फे केन्द्रे चेदष्टविंशति: ॥

लग्न अथवा चन्द्रमा से अष्टमभाव का स्वामी यदि केन्द्र या द्वादशभावगत हो तो जातक की आयु २८ वर्ष होती है।

लग्न, सप्तम और अष्टम भाव में पापग्रह तथा पणफर (२।५।८।११वें) और आपोक्लिम (३।६।९।१२वें) भावों में शुभग्रह स्थित हों, द्वादश भाव में सूर्य और मंगल, लग्न में चन्द्र और शनि के युगल स्थित हों तथा लग्न शुभग्रहों से दृष्ट हो,

लग्न में सूर्य, चन्द्रमा और राहु की युति हो, धनभाव में बृहस्पति स्थित हो; उपर्युक्त तीनों योगों में जातक २८ वर्ष की आयु प्राप्त करता है।

उनतीस वर्ष की आयु के योग :

नक्षत्रनाथोऽर्कजने: सहाय: पञ्चत्वयति यदि पद्मिनीशे ।
गोदृवप्रमान्दैर्मरणं रवौ रवेऽखिलोग्रदृष्टेऽशनिना च तद्वत् ॥

चन्द्रमा व शनि का परस्पर सम्बन्ध हो और सूर्य लग्न से आठवें स्थान में हो तो उनतीसवें वर्ष में मृत्यु होती है।

यदि सूर्य दशम स्थान में हो तथा उस पर समस्त पापग्रहों की दृष्टि हो तो उनतीसवें वर्ष में वज्र (बिजली गिरने) से मृत्यु होती है ।

जातकपारिजात ग्रन्थ के अनुसार

चन्द्रो मन्दसहायस्तु सूर्यश्चाष्टमसंस्थित: ।
एकोनत्रिंशके वर्षे जातो यमपुरं व्रजेत् ॥

चन्द्रमा शनि से युत हो और सूर्य के साथ अष्टम भाव में स्थित हो तो २९वें वर्ष में जातक यमपुर को प्राप्त होता है ॥

तीस वर्ष की आयु के योग

सखलो गलितोऽबल: कलेशश्चरमेऽङ्गेशि खलेक्षिते किमिन्दौ ।

घनपे च नवाकानुजेषु खलदृष्टे विबलेऽष्टमेश्वरे वा ||

बलरहित, क्षीण चन्द्रमा यदि पापग्रहों से युक्त होकर बारहवें स्थान में हो और लग्नेश पर पापग्रह की दृष्टि हो।

तृतीय, षष्ठ, नवम व द्वादश स्थान में चन्द्रमा व अष्टमेश हो और निर्बल अष्टमेश यदि पापग्रह से दृष्ट हो। इन योगों में मनुष्य की आयु तीस या बत्तीस वर्ष की होती है।

घननैधननाथयोर्यको विबलोन्यो वधगस्तथा कृशाङ्गः ।

लग्नेश और अष्टमेश में एक निर्बल हो तथा दूसरा अष्टम स्थान में हो तो तीस वर्ष की आयु का योग होता है।

यदि अष्टम स्थान की नवांश राशि में शनि हो और लग्न में कोई बली ग्रह हो, शुभग्रह केन्द्र के अतिरिक्त स्थानों में हो तो तीस या बत्तीसवें वर्ष में मृत्यु होती है।

चतुर्थ स्थान में यदि शुक्र से युक्त बृहस्पति हो और चन्द्रमा सातवें स्थान में हो तो तीस या चालीस वर्ष की आयु में मरण होता है।

अतिबले ज्ञे केन्द्रे ग्रहरहितेऽष्टमे चेत्त्रिंशदायुः ।।
निर्बलौ रन्धेशाङ्गपौ केन्द्रे चेत्त्रिंशदब्दायुः ।।
शुभांशराशिगाः शुभग्रहाश्चेत्त्रिंशत् ।।

जातकतत्त्वे

शुभरहिते केन्द्रे रन्ध्रगः कोऽपि चेत्त्रिंशत् ।।

बलवान बुध केन्द्रस्थ हो और अष्टमभाव ग्रहरहित हो: बलहीन अष्टमेश और सप्रेश यदि केन्द्रस्थ हों: सभी शुभग्रह केवल शुभग्रह की राशि में और शुभग्रह के नवांश में स्थित हो अथवा केन्द्र शुभग्रहों से रहित हो और अष्टमभाव ग्रहयुक्त हो तो उक्त सभी स्थितियों में जातक ३० वर्ष की आयु प्राप्त करता है।

जातकपारिजात ग्रन्थ के अनुसार

जन्मरन्ध्रपयोर्मध्ये निशानाथे व्यये गुरौ ।
सप्तविंशतिवर्षे वा त्रिंशद्वयसि वा मृतिः ॥

जन्मराशि और अष्टमेश के बीच यदि चन्द्रमा स्थित हो तथा बृहस्पति व्ययभावगत हो तो जातक २७वें या ३० वें वर्ष में मृत्यु को प्राप्त होता है ||

पापयोर्मध्ये लग्नगोऽर्कश्चेदेकत्रिंशत् ।।

लग्नस्थ सूर्य यदि पापग्रहों के मध्यगत हो तो इकतीस वर्ष की आयु होती है।

द्वादशभाव में क्षीण चन्द्रमा शुभदृष्टियों से हीन हो तथा लग्न और अष्टमभाव पापग्रहों से संयुक्त हों तो इकतीसवें वर्ष में जातक की मृत्यु होती है।

बत्तीस वर्ष की आयु के योग :

तिमिरे हरिजे विकल्पकेन्द्रे हिमगौ वा हरिजे भपेऽकआ ।
पथि पिङ्गल आयुषि क्षमाजे सदृष्टे किमिने फले घनेऽब्जे ॥
रविजे चरमेन चारुदृष्टे सखलेऽथेनसुते विनाशभांशे ।
दुरिते सबले पुरे न केन्द्रे सति वाऽन्योन्यभगौ खलौ तनुस्थौ ॥
खलदृष्टिपथं गतौ व्ययेऽब्जे किमु कश्चित्कलहे शुभो न केन्द्रे ।
यदि कण्टक उद्गमापुरीशौ मनुजानां रदतुल्यहायनेऽन्तः ॥

लग्न में यदि राहु हो और लग्न को छोड़कर शेष केन्द्र स्थानों में चन्द्रमा हो ।

लग्न में चन्द्रमा, बारहवें स्थान में शनि, नवम में सूर्य और आठवें स्थान में मंगल हो और उस पर शुभ ग्रह की दृष्टि न हो ।

लाभ स्थान में सूर्य, लग्न में चन्द्रमा, बारहवें स्थान में पापयुक्त शनि हो और उस पर शुभग्रह की दृष्टि न हो।

शनि यदि अष्टम स्थान में हो या अष्टम स्थान में विद्यमान नवांश राशि में हो, लग्न में कोई बली पापग्रह हो और केन्द्र में कोई शुभ ग्रह न हो।

लग्न में कोई दो पापग्रह हों, या दो पापग्रह परस्पर राशि सम्बन्ध करते हों, उन पर पापग्रह की दृष्टि हो और चन्द्रमा बारहवें स्थान में हो ।

आठवें स्थान में कोई ग्रह हो, केन्द्र में कोई शुभ ग्रह न हो, लग्नेश व अष्टमेश केन्द्र में हो तो इन योगों में उत्पन्न मनुष्यों की आयु बत्तीस वर्ष की होती है ।

मरणेशि चतुष्टये विनाशे गलिते ग्लावि खलग्रहेण युक्ते ।
उदयेऽघयुते सहोविमुक्ते मरणं जन्मभृतां रदोन्मितेऽब्दे ॥

यदि अष्टमेश केन्द्र या अष्टम स्थान में हो, क्षीण चन्द्रमा यदि पापयुक्त हो और निर्बल लग्न भी पापयुक्त हो तो बत्तीसवें वर्ष में प्राणियों का मरण हो जाता है।

जातकपारिजात ग्रन्थ के अनुसार

अष्टमाधिपतौ केन्द्रे लग्नेशे बलवर्जिते।
त्रिंशद्वर्षमितायुष्मान् द्वात्रिंशद्वत्सरे मृतिः ॥

क्षीणे शशाङ्के यदि पापयुक्ते रन्ध्राधिपे केन्द्रगतेऽष्टमे वा।
पापान्विते हीनबले विलग्ने द्वात्रिंशदब्दे निधनं प्रयाति ॥

अष्टमेश केन्द्रस्थ हो तथा लग्नेश बलहीन हो तो न्यूनतम तीस वर्ष की आयुष्य का भोग कर बत्तीसवें वर्ष में मृत्यु को प्राप्त होता है।

क्षीण चन्द्रमा यदि पापान्वित हो और अष्टमेश केन्द्र या अष्टम भाव में स्थित हो, लग्न निर्बल हो और पापग्रह से युक्त हो तो जातक बत्तीस वर्ष में को प्राप्त होता है ॥

निर्बलौ क्रूरदृष्टौ लग्नेशचन्द्रावापोक्लिमगौ चेद्वात्रिंशत् ॥

निर्बल लग्नेश अथवा चन्द्रमा आपोक्लिम में पापग्रहों से दृष्ट हों तो ३२ वर्ष की आयु होती है।

1.5 बोध प्रश्न-

1. अष्टम भाव के स्वामी को कहा जाता है?
2. राशि के किस भाव को नवांश कहते है
3. तृतीय भाव के स्वामी को कहते है
4. कितने वर्ष तक अल्पायु योग होता है

1.6 सारांश-

सामान्यतः अल्पानु के वर्ष बत्तीस माने जाते हैं, लेकिन व्यवहार में यदा कदा इसमें कुछ न्यूनाधिक्य भी देखा जाता है। यही स्थिति ऊपर बताए गए अल्पायु योगों के विषय में भी समझनी चाहिए। वास्तव में ये आयु योग जितनी जितनी निश्चित वर्ष संख्या बताते हैं, उनमें या किञ्चिन्मात्र न्यूनाधिक वर्षों में मृत्यु होगी या नहीं ? इस विषय पर विचार करते समय विद्वान् दैवज्ञ को शास्त्र चिन्तन के आधार पर योग कारक या मारक ग्रहों के बलाबल पर विचार करके ही यथास्थिति फलादेश का निर्धारण करना चाहिए। अल्पायु याग होने पर भी सैकड़ों लोगों को हमने व्यवहारतः ३२ वर्ष से अधिक आयु पाते देखा है। लेकिन परिस्थितिवशात् उन्हें उपरिनिर्दिष्ट वर्षों में मृत्यु तुल्य कष्ट होता हुआ देखा गया है। अतः समस्त साधक-बाधक प्रमाणों का निर्णय करते हुए ही किसी निश्चय पर पहुंचना श्रेयस्कर होगा।

1.7 बोध प्रश्नों के उत्तर-

1. अष्टमेश
2. नवे भाग को
3. तृतीयेश
4. बत्तीस वर्ष तक

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

वृहज्जातकम् - चौखम्भा प्रकाशन
वृहत्पराशरहोराशास्त्र - चौखम्भा प्रकाशन
ज्योतिष सर्वस्व – चौखम्भा प्रकाशन
चमत्कार चिंतामणि- चौखम्भा प्रकाशन
भावप्रकाश - चौखम्भा प्रकाशन
सरावली- चौखम्भा प्रकाशन
मानसागरी- चौखम्भा प्रकाशन
जातक पारिजात
फलदीपिका
आयुर्निर्णयः

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न –

1. अल्पायु योग क्या है इसका विस्तृत वर्णन कीजिये
2. अट्ठाईस वर्ष से तीस वर्ष तक अल्पायु योग का वर्णन ग्रन्थ के अनुसार कीजिये

इकाई - 2 मध्यमायु योग

इकाई की संरचना –

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 मध्यमायु योग का परिचय
2.4 मध्यमायु योग के भेद वर्षों के आधार पर
2.5 सारांश
2.6 बोध प्रश्नों के उत्तर
2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
2.8 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

मानव जीवन में आयु का सर्वश्रेष्ठ स्थान है | मनुष्य के जीवन में आयु से जीवन व मृत्यु निर्धारित होती हैं। सत्य ये हैं, कि मृत्यु के विषय में जानकारी देना अत्यंत दुर्लभ हैं, परन्तु फिर भी एक अनुमान द्वारा हम जानने की प्रयत्न करते हैं। हर कोई व्यक्ति चाहता है कि में अधिक से अधिक आयु का भोग करके भौतिक सुख –साधनों का लाभ अपने जीवन में प्राप्त कर सकूं, आयु के होने पर ही कोई भी जातक अपने शुभाशुभ को अपने जीवन में भोगने में सफल हो सकता है |इसलिये आयु का निर्धारण करते समय सूक्ष्म से सूक्ष्म चीजों का अध्ययन करके किसी भी निर्णय पर पहुच कर ही फलादेश करना चाहिये| आयु हीन जातक के लिये सारे सुख साधन वैसे ही व्यर्थ हैं जिस प्रकार से आत्मा रहित शरीर | इससे पहले कि इकाई में आपने पड़ा होगा कि अल्पायु योग के बारे में ,इस इकाई में हम मध्यमायु कि चर्चा करेंगे |

2.2 उद्देश्य

- ❖ मध्यमायु क्या है यह जान पायेंगें |
- ❖ मध्यमायु का वर्गीकरण करने में समर्थ हो सकेंगें |
- ❖ मध्यमायु को वर्षों के अनुसार जानने में सफल रहेंगें |
- ❖ विभिन्न मतों के अनुसार मध्यमायु को जान सकेंगे|

2.3 मध्यमायु योग परिचय

ज्योतिष शास्त्र भूत- भविष्य व वर्तमान में घटित होने वाली सम्पूर्ण घटनाओं को जानने व समझने का विज्ञान है | इसके द्वारा जातक के जीवन में शुभाशुभ का ज्ञान होरा शाश्त्र के अंतर्गत किया जाता है। इस शुभाशुभत्व को प्राप्त करने के लिये जातक कि आयु का होना बड़ा ही महत्वपूर्ण है | मानव जीवन में आयु का सर्वश्रेष्ठ स्थान है | आयु हीन जातक के लिये सारे सुख साधन वैसे ही व्यर्थ हैं जिस प्रकार से आत्मा रहित शरीर | सामान्यतः मध्यमायु ३२ से ६४ वर्षों तक मानी गई है, लेकिन यह अधिकतम सीमा है ।वस्तुतः ६०-६५ वर्ष की आयु का भोग करने वाले भी मध्यायु हैं, अब इसका निर्णय किस तरह किया जाए ? इस विषय में प्रश्नमार्ग में कहा गया है कि आयु निर्णय के पांच साधनों (लग्न, लग्नेश, अष्टम, अष्टमेश व चन्द्र) के गुण दोषों का निरूपण करके तथा दीर्घायु कारक व अल्पायुकारक योगों का तुलनात्मक परीक्षण करने पर यदि मिश्रित योगों की स्थिति हो तो अनुपात से वर्ष से लेकर ६४ वर्ष तक आयु के वर्षों का निर्धारण कर लेना चाहिए। जितने अधिक गुण होंगे, आयु आनुपातिक ढंग से बढ़ती जाएगी।

लग्नेश व अष्टमेश के आधार पर आयु निर्णय

लग्नेश चर राशि में हो	लग्नेश स्थिर राशि में हो	लग्नेश द्विस्वभाव राशि में हो
अष्टमेश स्थिर राशि में हो	अष्टमेश चर राशि में हो	अष्टमेश द्विस्वभाव राशि में हो

आयु के सम्बन्ध में विचारणीय कुछ गुण व दोष

दीर्घायुषो गुणेषु स्युः, सत्सु दोषेष्वनायुषः कल्प्य मायुर्विमिश्रेषु तेषामल्पाधिकत्वतः ॥

लग्न व अष्टम के गुण दोष

पापकर्त्तरी, पापग्रहों की दृष्टि पाप योग तथा शुभकर्त्तरी, शुभदृष्टि व योग क्रमशः अष्टम व लग्न दोष व गुण हैं। अपने स्वामी की दृष्टि व स्थिति भी गुण होता है।

लग्नेश के गुण दोष

पापयोग, पापदृष्टि, पापमध्यत्व, अस्त, शत्रुगत नीच ये दोष हैं। स्व, मित्रोच्च राशिगतत्व, शुभयोग, शुभ दृष्टि, शुभमध्यत्व व वक्री होना ये गुण हैं।

अष्टमेश के जो गुण व दोष भी लग्नेश की तरह ही होते हैं, लेकिन लग्नेश की केन्द्र स्थिति गुण है व अष्टमेश की केन्द्र स्थिति दोष है।

चन्द्रमा के गुण व दोष

षष्ठ,अष्टम व द्वादश में स्थिति, पाप मध्य व पापदृष्टि, पापयोग, क्षीणत्व और लग्न में नीच राशि में होना ये दोष कारक हैं।

पूर्ण, शुभमध्यत्व, शुभदृष्टि, शुभयोग, बृहस्पति के साथ केन्द्र में स्थिति, स्वराशि, स्वोच्च में होना (विशेषतया लग्न भाव में) विशेष गुण हैं।

केन्द्र त्रिकोण में शुभग्रह व दुष्टस्थान ६,८,१२ व ३,६,११ में अशुभ ग्रह आयु को बढाने वाले होते हैं।

एकर्क्षगौ गुरुकवी हिमगुर्व्ययेऽर्के शान्ते शुभैः सुतखगैरुत पौरनेम्योः।
याम्याम्बुगैः खलखगैः सददृष्टयुक्तै- मध्यायुरह्नि जनिरङ्गभृतां तदानीम् ॥

गुरु और शुक्र एक राशि में हों, व्यय स्थान में चन्द्रमा, अष्टम स्थान में सूर्य और पंचम व दशम स्थान में शुभग्रहों की स्थिति हो।

दिन में जन्म होने पर लग्न या चन्द्रमा से चतुर्थ व अष्टम स्थानों में पापग्रह हों तथा उन पर शुभग्रहों की दृष्टि न हो। इन योगों में उत्पन्न मनुष्यों की आयु मध्यम होती है।

षड्कोऽहिते निपतने विमलास्त्रिकोणकेन्द्र मृदौ बलिनि रोगरणेऽथ मिश्रः ।
केन्द्र त्रिकोणभवनेऽप्युत पौरपाले पप्यः समेऽथ समभे हरिजेशि तद्वत् ॥

छठें व आठवें स्थान में पापग्रह, त्रिकोण व केन्द्र में शुभग्रह तथा छठे व आठवें में बलवान शनि हो। केन्द्र व त्रिकोण में शुभाशुभ ग्रह होना। लग्नेश व सूर्य की निसर्ग व तात्कालिक मैत्री होना। लग्नेश का सम राशि में होना। इन सब योगों में मध्यायु होती है।

पापैः फलार्थमृतिमत्यमृतानुजस्थैवेन्दोरघैनिधनग दिवसेऽथ केन्द्र ।
कोणे गुरुर्हरिजपो विबलस्त्रिकस्थैराग्नेयपुष्करच रैर्यदि मध्यमायुः ॥

द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, पंचम, अष्टम व एकादश स्थानों में पाप ग्रहों का होना।
दिन या जन्म होने पर चन्द्रमा से अष्टम में पापग्रह हो। केन्द्र या त्रिकोण में गुरु हो, लग्नेश निर्बल हो और विक में पाप-ग्रह हो तो मध्यायु होती है।

भव्यै भंगस्थैः कलुषांशयातैविकेन्द्रगैः कण्टकगैरभष्यैः ।
मध्यायुरङ्गाम्बररन्ध्रपानां मध्ये ग्रहौ द्वौ बलिनौ तथैव ॥

शुभग्रह यदि पापग्रह के नवांश में, केन्द्र से बाहर स्थित हों और पापग्रह केन्द्र स्थानों में हों ता मध्यायु होती है।
लग्नेश, अष्टमेश व दशमेश इन तीनों में से केवल दो ही बली हों तो मध्यायु होती है।

अन्य ग्रन्थों के आधार पर मध्यमायु योग

पापग्रह के नवांशगत पापग्रह यदि कर्क राशि में स्थित हों और पापग्रह केन्द्रस्थ हों तो जातक की मध्यम आयु होती है।
पापग्रह यदि लग्न से अथवा चन्द्रमा से केन्द्रवर्ती हो और शुभग्रहों से युत दृष्ट न हों तो मध्यम आयु देते हैं।
पंचम और दशम भावों में शुभग्रह, अष्टम भाव में सूर्य, व्ययभाव में चन्द्रमा तथा बृहस्पति और शुक्र एक राशि में स्थित हों तो जातक की मध्यम आयु होती है।

मेष या वृश्चिक राशि में चन्द्रमा और लग्न में पापग्रह स्थित हों और शुभग्रह केन्द्रतर भावों में स्थित हों तो तैंतीस वर्ष में जातक मृत्यु को प्राप्त होता है।

पापग्रह और चन्द्रमा के साथ यदि अष्टमेश केन्द्र या त्रिकोण में स्थित होकर दशम भावगत पापग्रहों से दृष्ट हो तो जातक तैंतीस वर्ष की आयु प्राप्त करता है।

शनि से युक्त चन्द्रमा हो, कुम्भ राशि में मंगल स्थित हो तो जातक की तैंतीस वर्ष की आयु होती है।

बृहस्पति और शुक्र केन्द्र में स्थित हो और लग्नेश पापग्रहों से युक्त होकर आपोक्लिम में और भावसन्धि में प्राप्त हो तो जातक की छत्तीस वर्ष की आयु होती है।

शत्रुराशि का सूर्य पापग्रहों के मध्य लग्न में स्थित हो तो जातक रोगार्त होकर छत्तीस वर्ष जीवित रहता है।

जिसके लग्न में मङ्गल के साथ चन्द्रमा स्थित हो, केन्द्र और अष्टम भावों को छोड़कर अन्य भावों में शुभग्रह स्थित हों और गुलिककाल का जन्म हो तो जातक की आयु छत्तीस वर्ष होती है।

अष्टम भाव का अधिपति केन्द्र में, लग्न में मंगल स्थित हो तथा सूर्य और शनि तृतीय अथवा छठे भाव में स्थित हों तो चौवालिस वर्ष की आयु होती है।

उच्च राशिगत मंगल लग्न में स्थित हो, बृहस्पति सप्तम भाव में तथा दशम भाव में शनि स्थित हो तो जातक धनाढ्य, अनेक शास्त्रों का मर्मज्ञ होता है तथा चौवालीस वर्ष के को प्राप्त होता है। अनन्तर मृत्यु

पापग्रह से युक्त जन्मराशीश अष्टम भाव में, पापग्रहों से युक्त लग्नेश छठे भाव में बलवान् होकर अथवा शुभदृष्टि से हीन हो तो पैतालीसवें वर्ष में जातक का निधन होता है।

मेष राशि का पूर्ण चन्द्रमा लग्न में यदि शुभग्रहों से दृष्ट हो, पापग्रहों की दृष्टि से मुक्त हो तो जातक राजा होता है और सैंतालीस वर्ष में मृत्यु को प्राप्त होता है।

चन्द्रमा वर्गोत्तमांश में स्थित होकर लग्न में पापग्रहों से देखा जाता हो तथा शुभग्रह निर्बल हो तो अड़तालीस वर्ष की आयु होती है।

लग्नेश अष्टमभावस्थ राशि के नवांश में और अष्टमेश लग्नराशि के नवांश में स्थित हों तथा दोनों पापग्रहों से संयुक्त हो तो जातक की आयु पचास वर्ष होती है।

द्विस्वभाव राशि के लग्न में शनि, बारहवें या आठवें भाव में चन्द्रमा स्थित हो तो जातक बावन वर्ष तक जीवित रहता है।

धनुराशि का बृहस्पति लग्न में तथा राहु के साथ मंगल अष्टम स्थान में स्थित हो तो सत्तावन वर्ष तथा अष्टमेश सप्तम भाव में और चन्द्रमा पापग्रहों से युक्त हो तो अट्ठावन वर्ष की आयु होती है।

यदि लग्नेश शनि के नवमांश में स्थित होकर अष्टमेश से युक्त हो तथा चन्द्रमा त्रिकस्थ हो तो जातक अट्ठावन वर्ष जीवित रहता है।

जिसके केन्द्र में पापग्रह संयुक्त हों, लग्न क्रूरग्रहों से मुक्त हो तथा पंचम भाव में क्रूरग्रह न हों तो जातक साठ वर्ष पर्यन्त जीवित रहता है।

लग्नेश व्यय (द्वादश) भाव में निर्बल या पापग्रह से संयुक्त हो तथा लग्न बृहस्पति से रहित हो तो साठ वर्ष की आयु होती है।

लग्नेश से छठे, आठवें और बारहवें भाव में पापग्रह तथा शुभग्रह आठवें भाव के अतिरिक्त अन्य भावों में स्थित हों तो ऐसे योग में उत्पन्न जातक की आयु साठ वर्ष होती है।

2.4 वर्षों के आधार पर मध्यमायु योग

'पापग्रहे रन्ध्रपती सचन्द्रे केन्द्रस्थिते वा यदि वा त्रिकोणे।
निरीक्षिते पापखगैर्नभस्थैर्जातस्त्रयस्त्रिंशदुपैति वर्षम्' ।।

अष्टमभावाधिपति पापग्रह हो तथा वह चन्द्रमा के साथ केन्द्र अथवा त्रिकोण में स्थित हो और दशमभावगत पापग्रहों से दृष्ट हो तो ३३ वर्ष की आयु देता है।

'चन्द्रे कुजर्धे तनुगे प्रदृष्टे क्रूरग्रहैः शोभनखेचरेन्द्रैः।
केन्द्राद्बहिस्थैर्निधनं प्रयाति वर्षेस्त्रयस्त्रिंशसमानकैस्तु' ।।

मंगल की राशि का चन्द्रमा लग्न में पापदृष्ट हो तथा शुभग्रह केन्द्र से इतर भावों में स्थित हों तो ३३वें वर्ष में जातक का निधन होता है।

'गुरुशुक्रौ च केन्द्रस्थौ लग्नेशे पापसंयुते।
आपोक्लिमस्थे सन्ध्यायां जातस्यायू रवित्रयम्' ।।

बृहस्पति और शुक्र संयुक्त होकर केन्द्रगत हों, लग्नेश पापग्रहों से युत होकर आपोक्लिम में स्थित हो और सन्ध्याकाल में जन्म हो तो जातक की ३३ वर्ष की आयु होती है।

'पापमध्यगते सूर्ये लग्नस्थे शत्रुवेश्मनि। जातश्च रोगपीडार्त्तः परमायू रवित्रयम्' ।।

शत्रुराशि का सूर्य पापग्रहों के मध्य लग्नगत हो तो जातक रोगी होता है और उसे ३३ वर्ष की आयु प्राप्त होती है।

चौतीस वर्ष की आयु के योग-

वृषे वा वधे मङ्गले ज्ञे रुजीज्येऽनुजे भामिनीमन्दिरे भार्गवे वा।
जलेऽब्जे कुजे मन्मथे पापमध्येयुगाग्निप्रमे हायने मृत्युमेति ॥

वृष राशि या अष्टम स्थान में मंगल हो, षष्ठ में बुध हो, सहज स्थान में गुरु और सातवें स्थान में शक्र हो। चतुर्थ स्थान में चन्द्रमा हो, सातवें स्थान में पापग्रहों से घिरा हुआ मंगल हो। इन योगों में उत्पन्न मनुष्य चौंतीसवें वर्ष में मृत्यु को प्राप्त होता है।

कृशेऽब्ज ऐनिभागगे स्मरे सतां दृशोनिते।
घनेऽपि भानुभूलवे जनुष्मतां मृतिस्तथा॥

सातवें स्थान में शनि नवांश गत चन्द्रमा क्षीण हो और लग्न में भी शनि का नवांश हो तो इस योग में प्राणियों की मृत्यु चौंतीसवें वर्ष में होती है।

पैंतीस वर्ष की आयु के योग

कुजे साधरे प्रान्त्यमृत्योः फणीन्द्रऽङ्गजेऽथारिराशि गतेऽर्क निधाने।
धरायाः कुमारे युधि द्वादशे वाविशः पञ्चता पञ्चविशन्मितेऽब्दे॥

अष्टम या द्वादश स्थान में नीचराशि का मंगल हो और पंचम स्थान में राहु हो।
द्वितीय स्थान में शत्रु राशिगत सूर्य हो और व्ययाष्टम में मंगल हो तो मनुष्य की पैंतीस वर्ष की आयु होती है।

छत्तीस वर्ष की आयु के योग-

चत्वारो वा पञ्चखेटा विवस्वन्मार्ग प्राप्ता एकभेचैकराशौ।
वाऽऽयेऽङ्गेशे वंशभावे भवेशआयुः प्रोक्तं तर्करामोन्मिताब्दम्॥

एक नक्षत्र व एक ही राशि में चार या पाच ग्रह अस्तंगत और नीच राशिगत हों।
लाभ स्थान में लग्नेश हो और दशम में लाभेश हो तो इन योगों में छत्तीस वर्ष की आयु होती है।

अड़तीस वर्ष की आयु के योग -

मनोभवे महोनिधौ खलानचारिणी क्षते। निमीलने नभोगृहेऽत्ययोऽहिरामवत्सरे॥

सातवें स्थान में सूर्य हो और छठे, आठवें व दसवें स्थान में पाप ग्रह हों तो उक्त योग में अड़तीसवें वर्ष में मृत्यु होती है
यदि सारे पापग्रहों की दृष्टि, सूर्य पर हो और सूर्य राहु के साथ हो तो उनतालीस वर्ष में मृत्यु होती है।

षष्ठाष्टम और दशमभाव पापान्वित हों और सूर्य सप्तमस्थ हो तो जातक ३८ वर्ष; लग्नाष्टम या नवमभाव में राहु, दशमभाव में मंगल तथा षष्ठ और द्वादश भावों में क्रमशः बृहस्पति और शुक्र स्थित हों तो भी जातक ३८ वर्ष की आयु का भोग करता है।

उनतालीस वर्ष की आयु का योग-

'क्रूरान्तरे लग्नगते तदीशे युग्मस्थिते देवगुरौ रिपुस्थे।
जातस्तु मृत्युं मुनिवह्निवर्षैः प्रजाति शास्त्रज्ञपरैः प्रदिष्टम्' ॥

लग्नेश पापग्रहों के मध्य लग्न में स्थित हो, मिथुन राशि का बृहस्पति षष्ठभावस्थ हो तो ३९वें वर्ष में जातक की मृत्यु होती है, ऐसा शास्त्रज्ञों का कथन है।

सूर्य राहु से युत होकर सभी पापग्रहों से दृष्ट हो तो विष अथवा शस्त्राघात से अथवा जलने से ३९वें वर्ष में मृत्यु होती है।

चालीस वर्ष की आयु के योग -

बुधे केन्द्रागारेऽतिबलवति दृष्टं गतमलेग्रहोनं गुह्यं वा स्थिरभ उदये छिद्रपयुते।
शुभोने दिष्टान्ते किमुदयदये पङ्ककलिते पराभूतौ केन्द्रे विमलविहगोनेऽथ सहजे ॥
भवे वाग्मी काव्यश्चिति नियति तौ खलयूशा समेतौ वर्षेऽन्तोऽम्बयकृतमिते देत्यसचिवे।
स्मरेऽर्थे वक्रेऽब्दे हरिपवसरियामकमिते नराणां निर्याणं वव बुधजन स्त्री जनवशात् ॥

बलवान् बुध यदि केन्द्र स्थान में स्थित हो और शुभ ग्रहों से दृष्ट आठवें स्थान में कोई भी ग्रह न हो।

स्थिर राशिगत अष्टमेश यदि लग्न भाव में हो और अष्टम स्थान में कोई शुभ ग्रह न हो

पापग्रहों से युक्त लग्नेश अष्टम स्थान में हो और केन्द्र कोई शुभ ग्रह न हो।

तृतीय या एकादश स्थान में गुरू हो, त्रिकोण स्थानों में शुक्र हो तथा दोनों पर पापग्रहों की दृष्टि हो तो इन सब योगों में मनुष्य चालीसवें वर्ष में मृत्यु को प्राप्त होता है।

यदि सातवें स्थान में शुक्र हो और दूसरे स्थान में मंगल हो तो चालीसवें वर्ष में स्त्री जाति के कारण मृत्यु होती है।

अपनी राशि में स्थित शुभग्रह यदि आठवें स्थान को देखता हो तो दसवें या चालीसवें वर्ष में मृत्यु होती है

प्राग्योगे रन्धं शुभेक्षितं चेच्चत्वारिंशदायुः ॥
लग्नगे रन्धेशे रन्धं शुभो न चेच्चत्वारिंशत् ॥

केन्द्र में बलवान् बुध स्थित हो और अष्टमभाव शुभदृष्टियुत किन्तु ग्रहशून्य हो तो ४० वर्ष की अवस्था होती है।

अष्टमेश लग्नगत हो, अष्टमभाव शुभग्रह से हीन हो तो ४० वर्ष की आयु होती है। यही योग अन्यत्र इस प्रकार मिलता है।

'अष्टमपती विलग्ने स्थिरराशी जायते नरो यस्तु।
चत्वारिंशद्वर्षैः मरणं रन्धे न शुभसंयुक्ते ॥

इस वचन में अष्टमेश का स्थिरराशिस्थ होकर लग्नगत होने की बात विशेष रूप से कही गई है।

'लग्नेश्वरे केन्द्रगते सपापे केन्द्राद्बहिस्थे शुभसौम्यलेटे।
चत्वारिंशत्वत्सरे मृत्युमेति जातः पुत्रो नान्यथा शास्त्रमेतत्' ।।

लग्नेश पापग्रहों से युक्त होकर केन्द्रगत हो तथा केन्द्र से इतर भावों में शुभग्रह स्थित हों तो जातक की मृत्यु ४० वर्ष की अवस्था में होती है।

इकतालीस वर्ष की आयु के योग-

प्राग्लग्ने खलमध्ये प्रान्त्ये वर्ष्मणि पङ्काः।
रूपाम्भोधिमितेऽब्दे पञ्चत्वं मनुजानाम् ॥

लग्न के द्वितीय व द्वादश दोनों स्थानों में यदि पापग्रह स्थित हों, अर्थात् लग्न पापकर्त्तरी में हो, और लग्न में भी कोई पापग्रह हो तो इकतालीसवें वर्ष में मृत्यु समझनी चाहिए।

बयालीस वर्ष की आयु के योग-

माहेये हरिजगृहे हरालयेश संयुक्ते किमुत वसुन्धरातनूजे।
सागर्क्ष क्षतिगृहगे किमु क्षयस्थे पञ्चत्वं कथयति दोर्युगोन्मितेऽब्वे ॥

क्षीण चन्द्रमा यदि लग्न में हो और केन्द्र और अष्टम स्थान में पापग्रह हों।

सिंह के नवांश में (नवांश कुण्डली में सिंह गत) राहु हो, चन्द्रमा पर पापग्रहों की दृष्टि हो और केन्द्र में शुभ ग्रह न हो। इन योगों में बयालीस वर्ष की आयु होती है।

लग्न में अष्टमेश यदि मंगल के साथ हो अथवा व्यय और अष्टम में स्थिर राशि में मंगल हो तो भी बयालीसवें वर्ष में मृत्यु समझनी चाहिए।

'सभूमिजे रन्ध्रपतौ विलग्ने राशौ स्थिरे वा यदि वा घराजे।
रिष्फेऽष्टमे मृत्युमुपैति जातस्त्वब्दैर्द्विचत्वारिसमानकैर्वा' ।।

मंगल के साथ अष्टमेश यदि लग्न में स्थित हो अथवा स्थिरराशिस्थ मंगल अष्टमभाव अथवा द्वादशभाव में स्थित हो तो जातक ४२ वर्ष में मृत्यु को प्राप्त होता है।

तितालीस वर्ष की आयु के योग

भगेऽङ्गगे गुरौ हरे तुलालिराशिगे भृगौ ।नरस्य पञ्चतां वदेद्गुणाब्धितुल्यहायने ॥

लग्न में सूर्य हो, अष्टम स्थान में बृहस्पति हो और तुला या वृश्चिक राशि में शुक्र हो तो तितालीस वर्ष की आयु में मनुष्य का मरण समझना चाहिए।

चौवालीस वर्ष की आयु प्रमाण-

रन्धेशे केन्द्रे मकरस्थौ शनिरवित्र्यारिगौ चेच्चतुश्चत्वारिंशत् ।।

अष्टमेश केन्द्रस्थ हो, मकरराशिगत सूर्य और शनि तृतीय अथवा षष्ठ भावगत हो तो ४४वें वर्ष में मृत्यु होती है।

'केन्द्रे गुरौ कर्मणि सूर्यपुत्रे लग्ने चरे वेदयुगैः समानैः' ।।

केन्द्र में बृहस्पति और दशमभाव में शनि और चरराशि लग्न में हो तो ४४ वर्ष की अवस्था होती है।

'अष्टमाधिपतौ केन्द्रे भौमे लग्नसमाश्रिते।
अर्काकजौ त्रिषष्ठौ स्युर्जविद्रुद्रचतुष्टयम्' ।।

लग्न में मंगल और अष्टमेश केन्द्रस्थ हो तथा सूर्य और शनि तृतीय या षष्ठ भाव में स्थित हों तो ४४ वर्ष की आयु होती है।

पैंतालीस,छियालीस वर्ष आयु प्रमाण-

'जन्माधिपे रन्ध्रगते सपापे पापान्विते लग्नपतौ रिपुस्थे।
बलान्विते वा शुभदृग्विमुक्ते पञ्चाब्धिवर्षैः निधनं प्रयाति' ।।

पापयुक्त लग्नेश अष्टमभावगत हो अथवा पापयुक्त लग्नेश बलवान् होकर षष्ठभाव में स्थित हो तथा शुभदृष्टि से हीन हो तो जातक की ४५ वर्ष की आयु में मृत्यु होती है। शनि, मंगल और चन्द्रमा क्रमशः लग्न, अष्टम और द्वादश भावों में स्थित हों तथा केतु पापान्वित हो तो जातक ४६ वर्ष की आयु का भोग करता है।

केन्द्रस्थ बृहस्पति यदि १।३/४/७/१० तथा ११वें भावगत शुक्र को देखता हो तो जातक ४६ वर्षों तक जीवनसुख का भोग करता है।

सैंतालीस वर्ष की आयु के योग

अखण्डकण्टकाश्रितैरखण्डकल्मषग्रहैः। निशाकरे सदुष्कृतेऽत्ययोऽगवेदवत्सरे ॥

सारे केन्द्र स्थानों में यदि सभी पापग्रह हों तथा चन्द्रमा भी पापग्रहों से युक्त हो तो मनुष्य सैंतालीस वर्ष की आयु में मृत्यु को प्राप्त होता है।

अडतालीस वर्ष आयु प्रमाण-

'मेषे शशाङ्के तनुगे सुपूर्ण सौम्येक्षिते भूपतिरत्र जातः ।
पापग्रहाणां च दशाविहीने नागान्धिवनिधनं प्रयाति' ।।

मेषराशिगत चन्द्रमा (पूर्ण) यदि लग्नस्थ होकर शुभग्रहों से दृष्ट हो और पत्रवाहों की दशा न हो तो ४८वें वर्ष में मृत्यु होती है।

'वर्गोत्तमांशगे चन्द्रे लग्नस्थे पापावीक्षिते । सौम्यैर्बलहीनैश्च द्वादशाब्दचतुष्टयम्' ।।

वर्गोत्तमांशस्थ चन्द्रमा लग्न में पापग्रहों से दृष्ट हो और शुभग्रह निर्बल हों तो जातक की आयु ४८ वर्ष होती है।

ऊनचास वर्ष की आयु के योग

इलाहेलिजौ गोगतौ धैर्य्यमत्योर्वने वाक्पतौ दानवेज्येन युक्ते ।
उपान्त्ये पदे शीतभासा समेते नवाम्भोधिसंख्यैमृ तिर्वत्सरैः स्यात् ॥

तीसरे या पांचवें स्थान में वृष राशि का शनि या मंगल हो, चतुर्थ स्थान में शुक्र व बृहस्पति हो और दसवें या ग्यारहवें स्थान में चन्द्रमा हो तो मनुष्य ऊनचासवें वर्ष में पंचत्व को प्राप्त होता है।

पचास वर्ष की आयु के योग :

यदैकस्मिन्केद्रे बलिनि विमले कण्टक इलाविभास्वर्दोच्चस्थे हितभवनगेऽस्ते हिमकरः ।
सुरेज्येक्षायुक्तः किमु हरनवांशे हरिजपे लयेशेऽङ्गाङ्कांशे दुरितयुतयोश्चेद्यदितयोः ॥

यदि केन्द्र में कोई एक पूर्णबली शुभग्रह हो और साथ ही केन्द्र में बुध अपनी राशि, मित्र की राशि या अपनी उच्चराशि में हो तथा सातवें स्थान में चन्द्रमा बृहस्पति से दृष्ट हो ।
अष्टम भाव में स्थित नवांश राशि में लग्नेश हो और लग्न में स्थित नवांश राशि में अष्टमेश हो और वे दोनों पापग्रहों से दृष्ट हों तो पचास वर्ष की आयु होती है।

अथाभ्रेमिवेज्ञे व्ययवधपुरेऽब्जे गुरुभयोर्यकक्षे किंवा दिवि दिनपतौ ग्लावि भवगे ।
जले जीवे भे शेऽथ दिवि हृदि भव्येऽन्त्यनिधने निशानाथे गुर्ध्वोः सुरदनुजयोर्देहगतयोः ॥

यदि चतुर्थ या दशम स्थान में बुध हो; लग्न, अष्टम या द्वादश स्थान में चन्द्रमा हो और गुरू व शुक्र एक ही राशि में स्थित हों।

दशम स्थान में सूर्य हो, ग्यारहवें चन्द्रमा स्थित हो, चतुर्थ स्थान में बृहस्पति व नवम स्थान में शुक्र हो।

चतुर्थ या दशम स्थान में शुभग्रह हों, चन्द्रमा आठवें या बारहवें स्थान में हो, गुरू व शुक्र लग्न में हों। इन योगों में मनुष्य की आयु पचास वर्ष होती है।

किमिन्दौ साङ्गेशे त्रिकभवनगे लग्नरमणे यमांशेऽन्तो वर्षे खविषयमिते सोत्थफलयोः।
गुरौ मार्गे सूनावुशनसि तथा साधर भयो- स्तयोरुक्तागारेष्वसुकृतिमितायुर्निगदितम्॥

त्रिकस्थानों में लग्नेश से युक्त चन्द्रमा हो और लग्नेश नवांश में हो तो पचासवें वर्ष में मृत्यु समझनी चाहिए।

शनि के तीसरे या ग्यारहवें स्थान में नीचगत बृहस्पति हो और त्रिकोण स्थानों में नीचगत शुक्र हो तो पच्चीसवें वर्ष में मरण होता है।

बन्धुकर्मग ज्ञे व्यये रन्धेऽङ्गे चेन्दौ एकर्धे शुक्रेज्यौ क्वापि चेत्पञ्चाशत्॥

चतुर्थ अथवा दशम भाव में बुध, अष्टम या लग्न या द्वादशभाव में चन्द्रमा, बृहस्पति या शुक्र एक ही राशि में एकत्र हों तो ५० वर्ष की आयु होती है।

'लग्नेशे निधनांशस्थे लग्नांशस्थे रन्धेश्वरः।
पापयुक्तौ तदा जातः पञ्चाशद्वर्षवान् जीवति'॥

लग्नेश अष्टमेश के नवांश में और अष्टमेश लग्नेश के नवांश में स्थित हों तो जातक ५० वर्ष आयुभोग करता है।

चतुर्थभाव में बृहस्पति, दशमभाव में सूर्य, नवमभाव में शुक्र और एकादशभाव में चन्द्रमा स्थित हों; तृतीय अथवा एकादशभाव में बृहस्पति तथा त्रिकोण में शुक्र स्थित हो; उच्चस्थ बुध अन्य ग्रहों के साथ केन्द्रगत हो तथा बृहस्पति से दृष्ट चन्द्रमा सप्तमभाव में हो तो ५० वर्ष की आयु होती है।

बावन वर्ष की आयु के योग -

हरिजनभसोहॅलो साहौ व्यये रविनन्दनेद्विषति रुधिरे वाङ्गे पङ्गावगर्क्षगते व्यये।
युधिसितरुच वा काये विधौ व्यथने वधेभवभवनगैरन्यैर्मृत्युःकरेषुभितेऽब्दके॥

लग्न या दशम स्थान में राहु से युक्त सूर्य हो, शनि बारहवें स्थान में हो और मंगल छठे स्थान में हो।

लग्न में स्थिर राशि हो और शनि भी लग्न में ही स्थित हो तथा चन्द्रमा आठवें या बारहवें स्थान में हो।

लग्न में शनि, अष्टम या व्यय में चन्द्रमा और लाभस्थान में और कोई ग्रह हो तो बावन वर्ष की आयु में व्यक्ति की मृत्यु होती है।

मन्दौ यदि मूर्त्तावन्येन सनाथे। प्रान्त्ये निधनेऽबजे तद्वन्मरणं स्यात्॥

लग्न में शनि के साथ और कोई ग्रह भी हो और व्यय या अष्टम स्थान में चन्द्रमा हो तो बावनवें (५२) वर्ष में मृत्यु होती है।

'द्विराशिरोदयजाते मन्दे चन्द्रे व्ययेऽष्टमे वाऽपि।
जातस्तत्र मनुष्यो जीवेद्वर्षाणि द्विपञ्चाशत्'॥

द्विस्वभावराशि के लग्न में शनि हो और चन्द्रमा द्वादश या अष्टम भावगत हो तो मनुष्य ५२ वर्ष जीवित रहता है।

'शनैश्चरो लग्नगतः सहायस्त्वन्येन चन्द्रो व्ययगेऽष्टमाः स्युः।
वेदान्तविज्ञानसुशीलवृत्तिर्जातस्तु मृत्युं नयनेषु वर्षे॥

अन्य ग्रह के साथ शनि यदि लग्नस्थ हो, चन्द्रमा व्यय अथवा अष्टमभावगत हो तो जातक वेदान्त और विज्ञान में कुशल व सुशील होता है और उसकी आयु ५२ वर्ष होती है।

तिरेपन वर्ष की आयु के योग

छायेशे छगलस्थे छायाङ्के वृषयाते। पौरे पूज्यसमेतेऽन्तस्त्यक्षोन्मितवर्षैः॥

सूर्य और चन्द्रमा अपनी उच्च राशियों में हों और लग्न बृहस्पति हो तो तिरेपनवें वर्ष में मृत्यु होती है। में

चौवन वर्ष की आयु के योग

जीवे कर्कटयाते खस्थे साण्डज इन्दो। संयुक्ते कविनान्तो वेदाक्षप्रमिताब्दः॥

कर्क राशि में उच्चराशिस्थ बृहस्पति और दशम स्थान में मीन राशि में चन्द्रमा हो, अर्थात् मिथुन लग्न में जन्म हो तथा दशमस्थ चन्द्रमा शुक्र से युक्त हो तो इस योग में चौवन (५४) वर्ष की आयु

होती है।

पचपन वर्ष की आयु के योग :

रवौ सोग्रे कर्कोदयवति जडांशौ जनकगे, सुरामात्ये केन्द्रेऽथ वपुषि समीने भृगुजनौ।
सककेँ वागीशे तदनु वपुषीने सकलुषे, पदेऽब्जे के द्रे मृतिरसुशराब्दे जनिमताम्॥

कर्क लग्न में जन्म हो और पापग्रह से युक्त सूर्य लग्न में हो, दसवें स्थान में चन्द्रमा हो और केन्द्र स्थानों में गुरू हो।

मीन लग्न में शुक्र हो और कर्क राशि में बृहस्पति हो।

लग्न में पापग्रहों से युक्त सूर्य हो, दशम स्थान में चन्द्रमा हो और बृहस्पति केन्द्र में हो तो इन योगों में पचपन वर्ष की आयु समझनी चाहिए।

द्वयङ्गाङ्गे मृदुयुक्ते मृत्युस्थेऽन्तिमनाथे। वीर्य्योने शरबाणैस्तुल्यं जन्मिन आयुः॥

यदि द्विस्वभाव राशि के लग्न में जन्म हो और शनि से युक्त लग्नस्थान हो, अष्टम स्थान में निर्बल द्वादशेश हो तो इस योग में भी पचपन वर्ष की आयु समझनी चाहिए।

सत्तावन वर्ष की आयु के योग

पापी सपातः प्रलयालयोपगः सारङ्गलग्नेऽङ्गिरसाऽन्वितेऽथवा।
केन्द्रोद्गमेषूदयपेऽमलेक्षिते सप्तेषु वर्षैरसुभिवियुज्यते॥

अष्टम स्थान में यदि राहु से युक्त मंगल हो, धनु लग्न में जन्म हो और बृहस्पति लग्न में ही स्थित हो। लग्न या अन्य केन्द्र स्थानों में शुभग्रहों से दृष्ट लग्नेश स्थित हो तो इन दोनों योगों में मनुष्य सत्तावनवें वर्ष में प्राणों से विमुक्त हो जाता है।

अठावन वर्ष आयु प्रमाण-

'शन्यंशे लग्नेशे निधनेशसमन्विते निशानाथे।
षष्ठेऽष्टमे व्यये वा जीवेज्जातोऽष्टपञ्चाशत्'॥

शनि के नवांशस्थ लग्नेश अष्टमेश और चन्द्रमा के साथ त्रिक में स्थित हो तो जातक ५८ वर्ष की आयु का भोग करता है।

अष्टमभावेश सप्तमभाव में, पापान्वित चन्द्रमा छठे या आठवें भाव में स्थित हो तो ५८ वर्ष की आयु होती है।

शत्रुराशि में बुध पापग्रहों से अथवा चन्द्रमा से पीड़ित हो तो ५८वें वर्ष में जातक की मृत्यु होती है। कृष्णपक्ष का जन्म हो और षष्ठभावगत बुध और शुक्र को चन्द्रमा देखता हो, अथवा शून्यांशस्थ चन्द्रमा लग्न या त्रिकस्थान में स्थित हो तो जातक ५८ वर्ष की आयु भोग करता है।

साठ वर्ष की आयु के योग

स्वोच्च चन्दे विमलचरैः स्वर्क्षगैः केन्द्रगैर्वा सोज्जे शिरसि यदि वास्तेऽमले स्वोयमेऽवजे
वाङ्गप्राप्त शशिनि वर्ष जोद्गमे स्वोयमस्थैःकुत्स्नैः सौम्यैरुत सुबचरा व्यष्टभावेषु संस्थाः ॥
आयाधीशे सदहनखगेरौ विरामे व्यये वासाङ्गाधीशोद्भवपरिवृढे पिङ्गले पञ्चतास्थे ।
केन्द्रस्थानेऽङ्गिरस नहि कि सर्वखेटैः प्रबन्धे किंवा केन्द्र सकलुषरागे देवतासण्णमस्ये ॥
सायुर्नाथे घटधरपुरेऽयो विवस्वत्सुतेऽङ्गनङ्गेङ्गारे वयसि सितगौ पद्मिनीशे पदस्थे ।
दैत्याचार्य्यविदशसचिवज्ञेषु तैःसंयुतेषु कालागारं व्रजतु मनुजः शून्यरागोन्मितेऽब्दे ॥

चन्द्रमा अपनी उच्चराशि या स्वराशि में स्थित हो, या केन्द्र में शुभग्रह हों और लग्न में बलवान् लग्नेश हो।

सातवें स्थान में कोई शुभग्रह हो और चन्द्रमा अपनी राशि में या लग्न में स्थित हो।

चन्द्रमा अपनी उच्चराशि में या लग्न में स्थित हो और सभी शुभ ग्रह स्वक्षेत्री हों ।

शुभग्रह अष्टम रहित भावों में हों और षष्ठ, अष्टम या द्वादश स्थान में पापग्रहों से युक्त लग्नेश हो ।

अष्टम स्थान में सूर्य यदि जन्म लग्नेश या जन्म राशीश से युक्त हो और बृहस्पति केन्द्र से बाहर हो ।

पंचम स्थान में ही सभी ग्रहों की स्थिति हो । केन्द्र में पापग्रह हों और तुला लग्न में अष्टमेश से युक्त बृहस्पति हो ।इन योगों में मनुष्य की आयु साठ वर्ष की होती है।

लग्न में शनि, सातवें स्थान में मंगल, चतुर्थ स्थान में चन्द्रमा तथा दशम स्थान में सूर्य हो और ये सब ग्रह शुक्र, गुरू व बुध से युक्त हों तो साठवें वर्ष में मनुष्य की मृत्यु होती है ।

कश्चनोदके कवीज्ययोविलग्न चतुष्टयेततोऽमलेक्षिते सशौर्थ्य
कष्टकेऽङ्गपेऽथ कण्टके खलेऽत्र घटे घने निमीलने गुरौ तथा स्यात् ॥

चतुर्थ स्थान में कोई ग्रह हो, लग्न या केन्द्र में शुक्र व गुरू स्थित हों।

केन्द्र में बलवान् लग्नेश हो और उसे शुभग्रह देखते हों ।

कुम्भ लग्न में जन्म हो और केन्द्र में पापग्रह हों और अष्टम स्थान में बृहस्पति हो ।

इन योगों में साठवें वर्ष में मरण होता है ।

सोज्जऽङ्गेशः प्रथमभवने षोडशी षोडशांघ्रौ किं स्वोच्चेऽथो युगमुखखगाः पुत्रभावाच्चतुर्षु
स्थानेषु स्युः किमु कलुषभांशोपगैः कण्टकेषु पुण्यापुण्यैर्जनुषि मनुजः पञ्चतां याति षष्ट्या

बलवान लग्नेश यदि लग्न में ही स्थित हो और चन्द्रमा अपनी राशि या अपने उच्च स्थान में हो।
पंचम स्थान से आगे के चार स्थानों में (५,६,७,८) में चार ग्रह लगातार स्थित हों।
केन्द्रों में पापराशि हो या पाप नवांश हो तथा उनमें शुभ व अशुभ मिश्रित ग्रह हों। इन योगों में साठवें वर्ष में मृत्यु होती है।

'यस्य केन्द्रे पापयुक्ते लग्ने क्रूरविवर्जिते।
षष्टिवर्षात्परं नास्ति पापैः पञ्चमसंस्थितैः' ॥

जिसके जन्माङ्ग में केन्द्र पापान्वित हो तथा लग्न पापग्रहों से विहीन हो तो ऐसा जातक ६० वर्ष के बाद नहीं रहता है।

'लग्नेशे व्ययसंस्थे च क्षीणे पापयुतेऽपि वा।
षष्टिवर्षात्परं नास्ति न लग्ने च बृहस्पतिः' ॥

निर्बल लग्नेश पापयुक्त होकर व्यय (द्वादश) भाव में स्थित हो और लग्न बृहस्पति से हीन हो तो जातक ६० वर्ष के उपरान्त मृत्यु को प्राप्त होता है।

'लग्नाधीशान्मृत्युषष्ठव्ययस्थाः पापाः सन्तो नैधनं वर्ज्यसंस्थाः।
अस्मिन्योगे जायते मनुष्यस्तस्यायुः स्यात्षष्टिवर्षप्रदिष्टम्' ॥

समस्त पापग्रह त्रिकस्थानगत हों, लग्नेश भी उनके साथ हो तथा शुभग्रह अष्टमभावेतर भावों में स्थित हों तो जातक की ६० वर्ष आयु होती है।

इकसठ वर्ष की आयु के योग

खोकोभिश्चतुराद्य लग्नार्थानुजमित्रे संयुक्तेऽब्जरसाब्दैर्मृत्युः स्यान्मनुजानाम् ॥

लग्न से चतुर्थ स्थान पर्यन्त, किसी एक स्थान में यदि चार ग्रह स्थित हों तो इकसठवें वर्ष में मृत्यु हो जाती है।

बासठ वर्ष की आयु के योग

हरिजे सहये सक्षवे किमु सकटके सुरमंत्रिणि वाऽनुजे।
भगभार्गव भाग्यसमागमे सति मृतिर्द्विरसोन्मितवत्सरे ॥

लग्न में कर्क, धनु या मीन राशि का बृहस्पति हो।
तृतीय स्थान में यदि सूर्य, शनि व शुक्र की युति हो तो बासठवें वर्ष में मृत्यु होती है।

तिरेसठ वर्ष की आयु के योग :

सितगौ सभगेऽलिगते भृगौ तुरगगेऽनिमिषे धिषणे बुधे।
कलशे किमु केन्द्रगते मृतिर्जनिमतां विरसप्रमहायने॥

यदि चन्द्रमा अपनी नीच राशि में सूर्य से युक्त हो, धनुराशि में शुक्र हो, मीन में गुरू हो और कुम्भ राशि या केन्द्र स्थानों में बुध हो। इन योगों में तिरेसठवें वर्ष में मृत्यु होती है।

चौंसठ वर्ष की आयु के योग

केन्द्रे गुरौ भृगुभ वपुषीनसूनावाचार्य्यगेऽथदनुजेन्द्रगुरौ झषेऽके।
ज्ञेऽङ्गेरवौ हिमकरे द्रविणेऽनुजेऽत्र गच्छेत्कृतान्तनगरं युगतर्कवर्षैः॥

केन्द्र में बृहस्पति, लग्न स्थान में शुक्र और नवम स्थान में शनि हो। मीन में शुक्र, व्यय में बुध, लग्न में सूर्य, धन स्थान में चन्द्र, और तृतीय में मंगल हो तो चौंसठ वर्ष की आयु होती है।

शुभवर्गगतेऽमृतदीधितौ मृतिगृहेऽथ दिवा जनिरङ्गगे।
द्वितनौ सयमे विधुतो बधेऽसति लयोऽब्ध्यरिसम्मितहायने॥

अष्टम स्थान में शुभवर्ग में चन्द्रमा हो। दिन में जन्म हो और लग्न में द्विस्वभाव राशि में शनि हो और चन्द्रमा से अष्टम स्थान में पापग्रह हो। उक्त दोनों योगों में चौंसठ वर्ष की आयु होती है।

बोध प्रश्न

1 मध्यमायु योग कितने वर्ष तक होता है |

2 अष्टमेश व लग्नेश द्विस्वभाव राशि में रहने पर होता है|

3 केन्द्र में बृहस्पति, लग्न स्थान में शुक्र और नवम स्थान में शनि हो तो कोन से वर्ष कि आयु होती है |

4 लग्न से चतुर्थ स्थान पर्यन्त, किसी एक स्थान में यदि चार ग्रह स्थित हों तो कोन से वर्ष कि आयु होती है|

5 त्रिकस्थानों में लग्नेश से युक्त चन्द्रमा हो और लग्नेश नवांश में हो तो कोन से वर्ष कि आयु होती है|

6 अष्टम या द्वादश स्थान में नीचराशि का मंगल हो और पंचम स्थान में राहु हो तो कोन से वर्ष कि आयु होती है|

2.5 सारांश-

इस इकाई के द्वारा आपको यह समझने में सरलता रही होगी कि मध्यमायु कितने से कितने वर्षों तक होती है| और किन-किन वर्षों में आयु कि हानि हो सकती है , । वास्तव में ये आयु योग जितनी जितनी निश्चित वर्ष संख्या बताते हैं, उनमें या किञ्चिन्मात्र न्यूनाधिक वर्षों में मृत्यु होगी या नहीं ? इस विषय पर विचार करते समय विद्वान् दैवज्ञ को शास्त्र चिन्तन के आधार पर योग कारक या मारक ग्रहों के बलाबल पर विचार करके ही यथास्थिति फलादेश का निर्धारण करना चाहिए। क्यूंकि आयु के रहने पर ही व्यक्ति अपने जीवन के शुभाशुभत्व को भोगने में सफल हो सकता है

2.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. 64
2. मध्यमायु
3. 64
4. 61
5. 50
6. 35

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

वृहज्जातकम् - चौखम्भा प्रकाशन
वृहत्पराशरहोराशास्त्र - चौखम्भा प्रकाशन
ज्योतिष सर्वस्व – चौखम्भा प्रकाशन
चमत्कार चिंतामणि- चौखम्भा प्रकाशन

भावप्रकाश - चौखम्भा प्रकाशन

सरावली- चौखम्भा प्रकाशन

मानसागरी- चौखम्भा प्रकाशन

जातक पारिजात

फलदीपिका

आयुर्निर्णयः

2.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. मध्यम आयु पर विस्तारपूर्वक वर्णन करें|
2. स्वकल्पित उदाहरण द्वारा किन्ही चार वर्षों का विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिये|

इकाई - 3 दीर्घायु योग

इकाई की संरचना –

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 दीर्घायु योग का परिचय
3.4 दीर्घायु योग के भेद
3.5 सारांश
3.6 बोध प्रश्नों के उत्तर
3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
3.8 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

जिस जातक का जन्म हुआ है, तो उसकी मृत्यु भी होनी निश्चित है, इया संसार में अमरत्व को लेकर कोई भी जन्म नही लेता है| यदि किसी जातक का जन्म हुआ है तो उसकी मृत्यु कब होगी इसका सही से अनुमान केवल ज्योतिष के द्वारा ही लगाया जा सकता है, कि उस जातक की कितनी आयु होगी, क्या वह अल्पायु होगा ,या मध्यमायु या फिर दीर्घायु उसकी आयु का सही निर्धारण ज्योतिषीय विश्लेषण के द्वारा ही पता कर सकते है| इससे पहले की इकाइयों में हमने जाना की अल्पायु व मध्यमायु किन-किन वर्षों तक निर्धारित की गयी है| इस इकाई में हम यह जानने का प्रयास करेंगे की दीर्घायु योग कितने से कितने वर्षों तक होता है| और यह किन-किन योगों के द्वारा ज्योतिषीय विश्लेषण के माध्यम से इसे समझ सकते है|

3.2 उदेश्य

- दीर्घायु योग क्या है; इसे समझ सकेंगे|
- दीर्घायु योग कितने वर्ष तक होता है, इसे जान सकेंगे|
- किन-किन योगों के द्वारा दीर्घायु योग होता है, इसे सरलता से समझ सकेंगे|

3.3 दीर्घायु योग का परिचय-

आचार्यों ने आयु योगों में मुख्यतः तीन खण्ड माने हैं-- अल्प. मध्य व दीर्घ। यों गूढ़तर विचार की दृष्टि से इनके अल्प, अल्पतर, अल्पतन आदि प्रकार से उपभेद या खण्ड भी माने जाते हैं। आयु योगों का विचार बीस वर्ष की अवस्था के उपरान्त करना अधिक व्यावहारिक है। अरिष्ट विचार के बाद यह देखा जाता है कि कुण्डली में योगों के आधार पर जातक आयु के किस खण्ड में आता है। यह खण्ड एक आधारभूत अनुमान होता है तथा इसके आधार पर निश्चित परिणाम पर पहुंचा जा सकता है। जब मध्य या दीर्घ आयु खण्ड आए तो गणित द्वारा आयु की निश्चित अवधि जानी जा सकती है । व्यवहार में यह आवश्यक नही है कि जो सूक्ष्म अवधि आपकी आयु की आयी है वह यथावत् ही जीवन में फलित हो तथापि आयु वर्षों का निर्धारण किसी सीमा तक सफलतापूर्वक किया जा सकता है।

दीर्घायु का विस्तार ६४ वर्ष से १०० वर्षों तक माना जा सकता है। एतदधिक मान वाली आयु को आचार्यों ने १२० वर्षों तक पूर्णायु व तदनन्तर अमितायु माना है। अनुपात विधि से दीर्घायु के विस्तार का सामंजस्य किया जाना चाहिए । आयुवृद्धि कारक योग जितने अल्प होते जाएंगे, आयु भी

आनुपातिक ढंग से कम होती जाएगी। इसीलिए दीर्घ व अल्प आयु गुणदोषों की उपस्थिति में मध्यमायु मानी गई है। यदि दोषरहित आयु योग हैं तो दीर्घायु होगी। सदोष आयु वृद्धि योग हैं तो मध्यमायु तथा आयु हीनकारक दोषों की स्थिति में अल्पायु या हीनायु समझनी चाहिए। अन्य आचार्यों के मत से मध्यायु ३३ वर्ष से ६४ वर्ष पर्यन्त होती है। इन वर्षों से कम अल्पायु व अधिक दीर्घायु मानी जाती है। आयु की सीमा निर्धारण में मारक ग्रह का भी एक निर्णायक स्थान होता है। मारक ग्रहों के निर्णय के उपरान्त उनमें बल के तारतम्य से क्रम का निर्धारण किया जाता है और बली मारकेश की दशा-अन्तर्दशा एवं योगायु अथवा मध्य-दीर्घायु के वर्षों का समन्वय जब होता हो तभी तक वास्तव में आयु मानी जाती है।

केन्द्र कवो षोडशपादपौरे र्वामण्डलाखण्डलपूजितांघ्योः
गुह्ये ग्रहोनेऽय गुरौ भगुथ्वों- नॅऽङ्गे कुजेऽस्ते यदि दीर्घमायुः ॥

शुक्र केन्द्र में स्थित हो, कर्क लग्न में जन्म हो और चन्द्रमा लग्नस्थ हो, बृहस्पति उच्चगत हो और अष्टम स्थान में कोई ग्रह न हो। शुक्र व बृहस्पति नवम स्थान में हो, लग्न में बुध हो और सप्तम में मंगल हो,इन योगों में दीर्घायु होती है।

हरपे हरिजे गुरुभाभ्यां दृष्टयुते घनपे यदि केन्द्रं।
किमुतोच्चगतास्त्रिविहङ्गा मृत्युपतावुदये युधि नाघे ॥

अष्टमभावाधिपति यदि लग्न में हो और उस पर गुरू व शुक्र की दृष्टि या युति हो तथा लग्नेश स्वयं केन्द्र स्थानों में विद्यमान हो। यदि तीन ग्रह अपनी उच्चराशि में हों, अष्टमेश लग्न में हो और अष्टम स्थान में कोई भी पापग्रह न हो।
उक्त योगों में दीर्घायु होती है।

तत उद्गमपो बलयुक्तश्चेत्त्रिखगैः स्वगृहे निजतुङ्गे।
सखिभे किमु नैधनगैर्वा पौरपदाष्टमपारुणपुत्रैः ॥
निजतुङ्गगृहे निजभे कि कोणगृहेऽथ विधौ भव इज्ये।
युधि तुङ्गगते तनुपेऽथो पौरविभौ हितभे विपुलायुः ॥

यदि जन्म लग्नेश बलवान हो तथा कोई भी तीन ग्रह अपने उच्च, मित्न या स्वगृह में हों या अष्टम स्थान में तीन ग्रह हों।

यदि लग्नेश, अष्टमेश, दशमेश व शनि, स्वोच्च, स्वगृह या मूल त्रिकोण राशियों में हों। चन्द्रमा एकादश स्थान में हो, बृहस्पति अष्टम स्थान में हो और लग्नेश उच्च राशिगत हो । होती है। लग्नेश यदि मित्रराशि में हो। उक्त सभी योगों में दीर्घायु

पुरपे पुरगे मृतिपे मृतौ वा हरिजे सकुलीरभ इन्दौ।
इतरैः शुभराशिगतैस्ततः सद्भवने मृतिपे मृतिगेहे ॥
शुभदृष्टयुतेऽथ निजोच्चगौ धीगुरुकण्टकगौ शुभयुक्तौ ।
हरिजेशहराधिपती ततस्त्र्यम्बुलयेष्वखिलैश्चिरजीवी ॥

लग्नेश लग्न में हो और अष्टमेश अष्टम स्थान में स्थित हो । कर्क लग्न में लग्नस्थ चन्द्रमा हो और शेषग्रह शुभराशियों में

दृष्टि हो। अष्टमेश शुभराशि में हो और अष्टम स्थान पर शुभग्रहों को हो ।द्रिगत या त्रिकोणगत लग्नेश व अष्टमेश शुभग्रहों से युक्त हो। सभी ग्रह तृतीय, चतुर्थ व अष्टम स्थान में स्थित हों तो दीर्घायु होती है।

कर्मतनू कलहालयपालैः पथि चिति कण्टकभे भवभेऽयो ।
आस्पदरोऽसृजि कोणगतेऽच्यें धियि हिमगावथ नेधननाथे ॥
चारुखगे भवगे किमु कृष्णे कलिग उताष्टमपे मृतिगेऽथो ।
पूर्णविधुहितभे मिहिरोत्थे नियतिपतौ सबलेऽङ्गफले वा ॥

लग्नेश, अष्टमेश व दशमेश यदि केन्द्र, त्रिकोण या एकादश स्थानों में हों । मंगल दशम स्थान में, बृहस्पति त्रिकोण में व चन्द्रमा पंचम स्थान में हो। यदि अष्टमेश शुभग्रह हो और वह एकादश स्थान में स्थित हो। शनि अष्टम स्थान में हो। अष्टमेश अष्टम स्थान में हो। पूर्ण चन्द्रमा यदि मित्रराशि में हो, बलवान भाग्येश शनि (वृष या मिथुन लग्न में सम्भव) लग्न या एकादश स्थान में स्थित हो। इन सब योगों में दीर्घायु समझनी चाहिए।

धीनबसे धिषणे घनगे ज्ञे भृगुतनये मदनेऽथ निजांशे ।
स्वीयगृहे सखिमन्दिरभागेऽङ्गवधपयोरथ कर्मगृहेशे ॥
स्वोच्चगृहे स्वगृहे हितभे वा पतितगृहे दुरितैर्यदि केन्द्रे ।
कायपतावथ खेशि निजोच्चे युधि दुरितैरथ साष्टमनाथे ॥

बृहस्पति पंचम या नवम स्थान में हो, बुध लग्न में हो तथा शुक्र सातवें स्थान में हो। स्वराशि या मित्र

राशि अथवा स्वमित्त नवांश में लग्नेश व अष्टमेश हों। दशमेश स्वराशि, मित्रराशि या स्वोच्चराशि में हो।

पतित स्थानों (६, १२) में पापग्रह हों और केन्द्र में लग्नेश हो। दशमेश स्वोच्चराशि में हो और अष्टम स्थान में पापग्रह हों। इन योगों में दीर्घायु होती है।

बेहपतौ पतितेऽथ विलग्ने द्वितनुगृहे यदि कण्टकयातौ।
मूत्तिपद्विखलावथ दृष्टौ विमलखगैः पुरगौ पतितेशौ॥
वोद्गतभर्तरि भास्करमित्रेऽथ गतमलो बहुवीर्य्ययुगेकः।
पूर्णमयूखयुतोऽथ धियीनंभुवि मृतिपे मनुजस्य चिरायुः॥

लग्नेश व अष्टमेश एक ही स्थान में पतितभावस्थ हों। द्विस्वभाव लग्न में जन्म हो तथा लग्नेश जिस स्थान में हो, वहां से केन्द्र स्थानों में यदि दो पापग्रह हों।

षष्ठेश व व्ययेश लग्न में हों और उन पर शुभग्रहों की दृष्टि हो। लग्नेश यदि सूर्य का मित्र हो। पूर्ण राशियों से युक्त कोई एक शुभग्रह बलवान हो। अष्टमेश शनि यदि पंचम स्थान में हो। इन सब योगों में उत्पन्न मनुष्य लम्बी आयु वाला होता है।

उच्चस्थखगेन केनचिच्चेन्मार्त्तण्डौ किमु नैधनेशि युक्ते।
यद्वा जनकाङ्गकामपालैः षड्वीय्यै सहितैर्विमन्दयोगैः॥
किंवा हरिजेशि मृत्युगेहनाथाधिष्ठितभाधिपे च केन्द्रे।
यद्वा परमोच्चगाः कवीन्दुक्षोणीजाः क्रियविदार्य्यसुरैः॥
सेष्वासलवैर्गुरौ घनेऽथो केन्द्रस्थौ भगुरू शुभेक्षितौ वा।
भाय्यौं घनगौ समक्षगो वित्कामे केन्द्रफलेषु पर्वरौ वा॥

शनि या अष्टमेश किसी उच्चराशिगत ग्रह से युक्त हो। लग्नेश, सप्तमेश व दशमेश ये तीनों षड्बल से युक्त हों और शनि से इनका योग (पूर्वोक्त चतुर्विध स्थानादि योग) न हो। लग्नेश व अष्टमेश जिस राशि में स्थित हों, उनका स्वामी यदि केन्द्रगत हो।

शुक्र, चन्द्रमा व मंगल यदि अपने परमोच्च में हों और मेष में धनु नवांशगत बुध, गुरू व सूर्य और लग्न में बृहस्पति हो।

शुक्र व बहस्पति यदि केन्द्र स्थानों में हो और उन पर शुभग्रहों की दृष्टि हो।

शुक्र व गुरु लग्न स्थान में हों, सप्तम स्थान में समराशि में बुध हो और चन्द्रमा केन्द्र या लाभ स्थान में हो। इन सब योगों में दीर्घायु होती है।

पौराष्टमपावुपान्त्यमृत्योर्वाको स्वोच्चगृहे स्वभे हितों।
किवोपचयाष्टमेऽथ केन्द्र गावायुर्गगनाधिपैः समन्देः ॥

अष्टम या लाभ स्थान में लग्नेश व अष्टमेश हों । स्वोच्च, मित्रया स्वराशि में या उपचय स्थानों में अथवा अष्टम स्थान में शनि हो ।

यदि लग्नेश, अष्टमेश व दशमेश केन्द्र में शनि से युक्त हों। इन योगों में दीर्घायु होती है।

वाभ्राङ्गपयोर्यवैकखेटः केन्द्रेऽङ्ग व्ययवैरिनाथयोर्वा ।
स्वोच्चस्थखपे सुतेऽष्टमेश केन्द्र पुष्यखगैहिते हरेऽथो ॥
भव्या मतिभाग्यकण्टकस्थाः सोत्थारातिभवेषु पावकैर्वा ।
सौम्याः क्षतकामकालयाताः सर्वेऽघा अनुजारिलाभगा वा ॥

दशमेश व लग्नेश के बीच में यदि केन्द्र में कोई ग्रह हो और षष्ठेश, व्ययेश लग्न में हों।

दशमेश, उच्चराशिगत होकर पंचम स्थान में स्थित हो, अष्टमेश केन्द्र में हो, अष्टम व चतुर्थ स्थान में शुभ ग्रह हों।

पंचम, नवम व केन्द्र स्थानों में शुभग्रह हों तथा तृतीय, षष्ठ व एकादश स्थानों में पापग्रह हों।

षष्ठ, सप्तम व अष्टम में शुभ ग्रह हों, (लग्नाधि योग) तथा (३,६,११) स्थानों में सब पाप ग्रह हों। इन सब योगों में दीर्घायु होती है।

काये कलिपे कवीज्यदृष्डे कि पारावतभागगैरसौम्यैः ।
पुण्यैः पथिपुत्रकण्टकस्यैः किं दृश्येतरगैः समैश्चिरायुः ॥

अष्टमेश यदि लग्न में स्थित हो और उस पर शुक्र व बृहस्पति की दृष्टि हो।

पापग्रह पारावतांश में हों और नवम, पंचम व केन्द्र में शुभग्रह हो|सभी ग्रह दृश्य भाग में हों। इन सभी योगों में दीर्घायु होती है।

गदे व्यये गदेश्वरे व्ययेश्वरे पुरे रिपौ । उतान्त्यभे निमोलने चिरायुरीरितं विशाम् ॥

षष्ठेश, षष्ठ या द्वादश स्थान में हो और व्ययस्थानाधिप लग्न या षष्ठ स्थान, अष्टम स्थान या व्यय स्थान में हो तो मनुष्यों की दीर्घायु बताई गई है।

पौराननसोत्थबान्धवेषु खेटैस्तुर्य्यमुखैः समन्वितेषु ।
ज्ञानेन युतश्च हाटकेन जातोऽसौ विपुलायुरेति जन्तुः ॥

लग्न से लेकर चतुर्थ स्थान तक लगातार प्रत्येक स्थान में एक- एक ग्रह (कुल चार ग्रह) हों तो मनुष्य दीर्घायु सम्पन्न होकर धन, सम्पत्ति व ज्ञान से युक्त होता है।
लग्न से चतुर्थ तक सूर्यादि सातों ग्रहों के होने पर यूप नामक योग होता है। यह योग सत्याचार्य के प्रिय योगों में से एक है।

सकलगगनगा यदौजभे निखिलतनौ यदि तत्र शीतगौ ।
अपि हरिजनं ओजभे परं नियतिमुपैति चिरायुरुद्भवी ।।
यदि सभी ग्रह विषम राशि में स्थित हों, पूर्ण चन्द्रमा विषम राशि में हो और लग्न भी विषम राशि हो तो इस योग में उत्पन्न पुरुष परम भाग्यशाली व दीर्घायु होता है।

बलिनि हरिजपे विलोकिते सुकृतखगैः खपुराम्बुकामगैः ।
भवति विपुलजीवितो जन-उदधितनूभवया समन्वितः ।।
लग्नेश बलवान हो तथा उस पर ऐसे शुभ ग्रहों की दृष्टि हो जो लग्न, चतुर्थ, सप्तम व दशम (केन्द्र स्थान) में विद्यमान हों तो इस योग में उत्पन्न व्यक्ति लक्ष्मी से युक्त होकर दीर्घायु होता है।

मिहिकाकिरणं कविः प्रपश्येद्भृगुतनयं परिलोकयेत्पतङ्गः ।
धनवान् गुणवान् विभूतिमांश्च विपुलायुस्तनुतोऽरिनैधनस्थाः ॥
अनघा नहि पङ्कयुक्तदृष्टा विगदभयं बहुजीविनं प्रकुर्युः ।
सकुजेन्द्रगुरुवधुरुच्चगः कुरुते मंत्रविदं गुणार्थयुक्तम् ।।

चन्द्रमा पर शुक्र की दृष्टि हो और शुक्र पर सूर्य की दृष्टि हो तो मनुष्य धनवान्, गुणवान्, ऐश्वर्यवान् व लम्बी आयु वाला होता है।
षष्ठ या अष्टम स्थान में शुभग्रह हों और उन पर पाप ग्रहों की दृष्टि या युति न हो तो रोग व भय से मुक्त होकर मनुष्य दीर्घायु प्राप्त करता है।
यदि चन्द्रमा स्वोच्च राशि में मंगल व बृहस्पति से युक्त हो तो मनुष्य मन्त्रवेत्ता, गुणी, धनी व लम्बे जीवन वाला होता है|

बहुजीविनमङ्गपः सवीर्यो न खलविलोकित उत्तमप्रदृष्टः ।
यदि केन्द्रगतो वसुन्धेरशं कुरुते प्राणभृतं चिरायुषं वै ॥

लग्नेश वलवान होकर केन्द्र स्थानों में स्थित हो और उस पर पाप ग्रहों की दृष्टि न हो तथा शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो मनुष्य पृथ्वी- पति होकर लम्बी आयु भोगता है।

सुरसचिवे तनुतस्त्रिकोणकेन्द्रे दुरिते बन्धुनिकेतने चिरायुः ।
जनितः स्यादुभयान्ववायमुत्कृत् पौरेशो बलवांश्चतुष्टयस्थः ॥
भुजभवगो विरुजं च दीर्घमायुः कुरुते सर्वशुभाः सहःसमेताः ।
परिपश्यन्ति तनुं प्रकुर्वते ते जन्तुं वीतभयं चिरायुषं च ॥

बृहस्पति लग्न से केन्द्र या त्रिकोण स्थानों में हो और कोई पापग्रह चतुर्थ स्थान में स्थित हो तो मनुष्य मातृकुल व पितृकुल दोनों ही कुलों की उन्नति करने वाला होता है तथा चिरायुभागी होता है।
बलवान् लग्नेश यदि केन्द्र, तृतीय या लाभ स्थान में हो तो मनुष्य को नीरोग व लम्बी आयु वाला बनाता है।
यदि शुभग्रह वलवान् हों और लग्न को देखते हों तो मनुष्य निर्भय होकर लम्बी आयु का भोग करता है।

मित्रे भृगुजे पुरे गिरीशे ससुधांशौ रविजे पदे न पापे ।
विद्यां च यशश्चिरायुरेति जन्मर्भात्तनये जनुविलग्ने ॥
काव्यज सुरेज्यदृष्टयुक्ते विपुलायुर्गतरुक् तदा मनुष्यः ।
देहाद् व्ययपे स्वभे सवीयें दीर्घायुश्च सुखी भवेत्प्रजातः ॥

चतुर्थ स्थान में शुक्र, लग्न में बृहस्पति और शनि हों और ये दोनों चन्द्रमा से युक्त हों, दशम स्थान में कोई पापग्रह न हो तो इस योग में उत्पन्न मनुष्य यश, विद्या व चिरायु को प्राप्त करता है।
जन्म राशि से पंचम में जन्म लग्न राशि हो, अर्थात् नवम स्थान में चन्द्रमा स्थित हो तथा लग्न को शुक्र, बुध व बृहस्पति देखते हों या वहां स्थित हों तो मनुष्य स्वस्थ, नीरोग व दीर्घायु होता है।
जन्म लग्न का व्ययेश यदि बलवान हो तथा स्वराशि में हो तो मनुष्य सुखी व दीर्घायु होता है।

केन्द्रेचितिं दोक्षणे ज्ञभेज्या बहुलायुनूं पवल्लभोऽशुभाख्याः ।
सोत्थारिफले भपेऽरिमृत्योः केन्द्रेऽच्यें बहुजीवितः प्रजातः ॥
त्रिशच्छतग्रामपतिद्विदेहभे देहे तदय्यें यदि केन्द्रसंश्रिते ।
मूलत्रिकोणे निजतुङ्गभे युतस्तावद् विमुत्या बहुजीवितो जनः ॥

केन्द्र या त्रिकोण स्थानों में बुध, गुरु व शुक्र हो तो मनुष्य राजमान्य व दीर्घायु होता है।

तृतीय, पष्ठ व एकादश में पापग्रह हों, षष्ठ या अष्टम में चन्द्रमा हो और बृहस्पति केन्द्र स्थानों में हो तो मनुष्य तीन हजार गांवों का अधिपति (जिलाधीश, मुख्याधिकारी आदि) और दीर्घायु वाला होता है। लग्न में यदि द्विस्वभाव राशि हो और उसका स्वामी (लग्नेश) मूल त्रिकोण या उच्चराशि में स्थित होकर केन्द्रगत हो तो मनुष्य आजीवन ऐश्वर्य से युक्त व दीर्घजीवी होता है।

3.4 दीर्घायु योग के भेद

पैंसठ वर्ष की आयु के योग

कोंदये शशिनि नीचगृहे यमेऽकें- ऽस्ते वा तनूजननपो सपराभवेशौ।
केन्द्रे गुरौ वितनुकेन्द्र उतारभान्योः सिहारुणांश इषुतर्कमितेऽब्दकेऽन्तः ॥

कर्क लग्न में जन्म हो और स्वक्षेत्री चन्द्रमा लग्नस्थ हो, शनि नीच राशि में गया हो और सप्तम स्थान में सूर्य स्थित हो।
केन्द्र में जन्म लग्नेश तथा जन्मराशीश हो और (इनमें से कोई एक या दोनों) अष्टमेश से युक्त हों। द्वादशांश कुण्डली में सिंह राशिगत सूर्य व मंगल हों। उपर्युक्त योगों में पैसठवें वर्ष में मृत्यु होती है।

छियासठ वर्ष की आयु के योग

मीने मन्दे शशिनि चरमेऽङ्गे गुरौ ज्ञे सभानौ
किं कर्काशेऽखिलदिविचरैस्तर्कषड्वत्सरेऽन्तः।
जन्माङ्गेशौ निपतनगतौ कण्टके कालपाले
षष्ट्या मृत्युं व्रजति मनुजो वा रसाङ्गोन्मिताब्दैः ॥

शनि मीन राशि में हो, चन्द्रमा व्ययस्थान में हो, बृहस्पति लग्न में हो और बुध सूर्य से युक्त हो। कर्क के नवांश में सभी ग्रह हों तो छियासठ वर्ष की आयु होती है।
यदि जन्मराशीश व जन्मलग्नेश अष्टम स्थान में हों और अष्ट- मेश केन्द्र में हो तो साठ वर्ष या छियासठ वर्ष की आयु होती है।

सड़सठ वर्ष की आयु के योग

विलग्नगे बृहस्पतावनूनकाभ्रचारिभिः। समीक्षिते नरो मृति समेत्यगाङ्ग वत्सरे ॥

यदि लग्नगत बृहस्पति को सभी ग्रह देखते हों तो इस योग में उत्पन्न व्यक्ति की मृत्यु सड़सठ वर्ष में होती है।

अड़सठ वर्ष की आयु के योग

सर्वैः खेटैस्त्रिकनिलयगतैः कि स्वभस्थो महीजः
पश्येन्मध्यं बुधसितयुतौ कि यमे मेषयाते ।
कर्क पूज्ये कुवलयपतौ सारुणे कर्मसंस्थे
पुसामन्तं करिरसमिते वर्ष आहुर्बुधेन्द्राः ॥

सभी ग्रह त्रिकस्थानों में स्थित हों। यदि स्वराशिगत मंगल दशम स्थान पर दृष्टि रखता हो और बुध शुक्र का योग हो।
शनि नीच राशि मेष में हो, कर्क में गुरू और दसवें स्थान में सूर्य युक्त चन्द्रमा हो । इन योगों में अड़सठवें वर्ष में मृत्यु हो जाती है।

उनहत्तर वर्ष की आयु के योग

यदाऽऽस्पदे महामतौ विदङ्गन। समन्विते । तदा भवेत्ततूभृतां नवांगहायनेऽत्ययः ॥

गुरू दशम स्थान में हो और वह स्त्री ग्रहों (चन्द्र, शुक्र, बुध) से युक्त हो तो मनुष्यों की मृत्यु उनहत्तरवें वर्ष में होती है।

सत्तर वर्ष की आयु के योग

विखेचरे रणे गुरौ पुरे चतुष्टयेऽमले लयोदयामृतांशुभिर्न पङ्कखेचरेक्षितैः ।
किमुच्चभे स्वभे सुहृद्गृहे सिते सकण्टके ऽथमन्द उच्चभे स्वभे वयस्यभेऽखिलेक्षिते ॥
अथाङ्गःशीतगू व्यघौ वधे ग्रहेण वजिते निलिम्पराजपूजिते पुरे चतुष्टयेऽमले ।
ततोऽङ्गचन्द्रतो लये न केनचिद्य तेक्षिते घने गुरौ शुभैः सकण्टकैरथोर्जवाञ्च्छुभः ॥
चतुष्टये ग्रहोनिते निमीलने विलग्नपे न पापलोकिते किमष्टमे न कश्चनोत्तमः ।
चतुष्टयेऽन कश्चिदंसलो घनेशब्दोकित- स्तदाम्बर।गसम्मिताब्दके भवी मृति व्रजेत् ॥

अष्टम स्थान में कोई ग्रह स्थित न हो, लग्न में बृहस्पति हो, केन्द्र में शुभग्रह हो, अष्टस, लग्न व चन्द्रमा पर पापग्रहों की दृष्टि न हो।

केन्द्र में उच्च राशिगत, स्वराशिगत, या मित्रराशिगत शुक्र हो। यदि शनि स्वोच्च, मित्त्रराशि या स्वराशि में स्थित हो तथा उस पर सब ग्रहों की दृष्टि हो।
लग्न व चन्द्रमा पापग्रहों से युक्त न हो, अष्टम स्थान में कोई ग्रह न हो, लग्न में बृहस्पति हो और केन्द्र में शुभग्रह हों।
लग्न व चन्द्रमा से अष्टम स्थान यदि किसी ग्रह से युक्त या दृष्ट न हो, लग्न में बृहस्पति हो और केन्द्र में शुभग्रह हों।
केन्द्र में बलवान् शुभग्रह हो, अष्टम स्थान ग्रहरहित हो और लग्नेश पर पापग्रहों की दृष्टि न हो।
अष्टम में कोई शुभग्रह न हो तथा केन्द्र में कोई बलवान ग्रह हो तथा उस पर लग्नेश की दृष्टि हो । इन योगों में सत्तरवें वर्ष में मृत्यु होती है।

अदृश्यभागे किमु दृश्यभागे सर्वे विहङ्गा उत केवलोऽर्च्यः ।
कायेशतः केन्द्रगतोऽथ सर्वे कुलीररव्यंशगतास्तथैव ॥

यदि सभी ग्रह दृश्य चक्रार्द्ध या अदृश्य चक्रार्द्ध में हों। लग्नेश से केन्द्र स्थान में बृहस्पति ही हो।
सभी ग्रह कर्क राशि के द्वादशांश में हों तो सत्तरवें वर्ष में मृत्यु होती है।

विबले गुरौ शशिनि पुत्रे प्रान्त्यगृहे रखौ रुधिरयुक्ते । शनिना सितेन किमुपेते मूतिगते मृतिः खनगवर्षे ॥

बृहस्पति निर्बल हो, चन्द्रमा बारहवें स्थान में या पांचवें स्थान में हो, लग्न में सूर्य हो तथा वह मंगल, शनि या शुक्र से युक्त हो तो सत्तरखें वर्ष में मरण होता है।

निम्ने पतङ्गसम्भवे जायागृहे जगज्जनौ । सन्तानगे धरात्मजे शूग्या गहायने मृतिः ॥

शनि यदि तीच राशि में हो, सप्तम में सूर्य और पंचम में गन हो तो मनुष्य की सत्तरवें वर्ष में मृत्यु होती है।

इकहत्तर वर्ष की आयु का योग

महीभवे मनोभवे कलेवरे खलेक्षिते। कुसप्तसम्मिताब्दकैर्नरोऽसुर्भार्विियुज्यते॥

यदि मंगल जन्म लग्न में सातवें स्थान में स्थित हो और लग्न पर पाप ग्रहों की दृष्टि हो तो इकहत्तरवें वर्ष में प्राणी प्राणों से वियुक्त हो जाता है।

बहत्तर वर्ष की आयु का योग

यदोद्भवे शिखावति पपीजनेर्नवांशगे। कलवरे ह्यगप्रमाब्दकैति लभेत ना॥

जन्म समय में लग्न में यदि शनि का नवांश हो और केतु लग्न में स्थित हो तो मनुष्य बहत्तरवें वर्ष में मृत्यु को प्राप्त होता है।

तिहत्तर वर्ष की आयु का योग

क्रूरैदृष्टः कायपो वीर्य्यवन्तो भव्याः खेटा शीतगौ सद्गणे वा।
वैरिक्षेत्रे बोधने पङ्कयुक्ते नीहारांशौ व्यद्रितुल्यं नरायुः॥

लग्नेश पर यदि पाप ग्रहों की दृष्टि हो, शुभ ग्रह बलवान हों और चन्द्रमा शुभवर्ग में स्थित हो। बुध शत्रु क्षेत्रगत हो और चन्द्रमा यदि पापग्रहों से युक्त हो तो इन योगों में तिहत्तर वर्ष की आयु होती है।

पचहत्तर वर्ष की आयु के योग

अखण्डमण्डलो विधुः शुभग्रहैविलोकितः। पुरोपगः स जीवति शरागतुत्यवत्सरैः॥

लग्न में परिपूर्ण मण्डल वाला चन्द्रमा हो तथा उस पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो पचहत्तर वर्ष तक व्यक्ति जीवित रहता है।

उनासी वर्ष की आयु का योग

निजोच्चगाश्चतुर्थ हाश्चतुष्टयं गता यदा। वदाङ्गिनां मृति कृतित् ! खगाश्चतुल्यवत्सरे ॥

केन्द्र स्थानों में स्वोच्च राशिगत चार ग्रह हों तो बुद्धिमान लोगों को प्राणियों की मृत्यु उनासीवें वर्ष में कहनी चाहिए।

अस्सी वर्ष की आयु के योग

शशिगुरू सविसद्यसमाश्रितो बलयुते हरिजेशि मनोरथे।
मजनिना जनकेऽथ शुभग्रहैः स्वलवगैः सकलैर्यदि कण्टके ॥

चन्द्रमा और बृहस्पति यदि मित्र ग्रहों की राशि में हों, लग्नेश बलवान होकर यदि एकादश स्थान में हो और बुध दशम स्थान में हो।
केन्द्र में सभी शुभ ग्रह अपने नवांश में स्थित हों तो उक्त योगों में अस्सी वर्ष की आयु समझनी चाहिए।

उत चतुष्टयगे सविधौ गुरौ शुभविहङ्गदृशा सहितेऽपरैः ।
उडुपथात्परतः सहितैरुताऽऽङ्गिरस उच्चगते सबलेऽङ्गपे ॥
मूलदि कोणे विमलै विहङ्गमैर्वा कण्टकेषूग्रलवोपगैः समैः ।
वाऽस्ते सितेऽङ्गेऽङ्गिरसीनजे फलेऽशीतिस्तदायुः शरदां जनुष्मताम् ॥

केन्द्र में चन्द्रमा से युक्त बृहस्पति हो और उस पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो और शेष ग्रह दशम भाव से आगे हों।
गुरु स्वोच्च राशि में हो, लग्नेश वलवान हो और सभी शुभ ग्रह मूल त्रिकोण राशि में हों।
सभी ग्रह केन्द्र में पाप ग्रह के नवांश में हों। लग्न में बृहस्पति, सप्तम में शुक्र, लाभ स्थान में शनि हो।
उक्त योगों में उत्पन्न प्राणियों की आयु अस्सी वर्ष होती है।

कर्काङ्गेऽङ्गिरसि त्रिकोणभवनेभव्यैरुतातूनकै-
र्मेषार्काशगतैरवौ शिशिरगौ सोज्जेंऽथवाऽदृश्यगैः ।
सौम्यैः शौर्ययुतैश्च दृश्यदलगैः षड्कर्तभश्चारिभि-
रायुः शास्त्रविदो वदन्ति शरदां पुंसामशीति तदा ॥

कर्क लग्न में उच्चराशिस्थ वृहस्पति हो और त्रिकोण स्थानों में शुभ ग्रह हों।

मेष राशि के द्वादशांश में सभी ग्रह हों और मेष में बलवान् चन्द्रमा हो।
बलवान शुभ ग्रह अदृश्य भाग में हों और पाप ग्रह दृश्य भाग में हों। इन योगों में मनुष्यों की आयु अस्सी वर्ष होती है।

पिचासी वर्ष की आयु के योग

केन्द्रे गुरोर्गोलवगाः पतङ्गपातङ्गिवक्राः पुरइन्द्रपूज्यः ।
शेविनाशोनगृहेषु यातैरायुर्नु णां स्याद्विषयेभसंख्यम् ॥

केन्द्र में गुरु के नवांश में सूर्य, शनि व मंगल हों, लग्न में बृहस्पति हो और अन्य ग्रह अष्टम के अतिरिक्त स्थानों में हों तो मनुष्यों की आयु पिचासी वर्ष होती है।

नब्बे वर्ष पर्यन्त आयु योग

कृत्स्नैः खगैमिथुनभानुलवेऽथ केन्द्रे विश्वे शुभा विमृतिगा अखिला असौम्याः ।
रोगे विधावुत चतुष्टय इन्द्रवन्ध सौम्येक्षिते ससितगा वितरैरपाये ।
प्राप्तौ नरस्य शरदां षडशीतिरायु- ज्ञेऽङ्ग विधौ चिति विधाविनजेऽयनेऽब्दे ।
मृत्युर्नगेभतुलिते धनुरर्कभागे सर्वैर्य हैर्मरणमम्बरखेचराब्दैः ॥

यदि सभी ग्रह मिथुन के द्वादशांश में हों, सभी शुभ ग्रह केन्द्र स्थानों में हों, पाप ग्रह अष्टमेतर स्थानों में हों और चन्द्रमा षष्ठ स्थान में हो।
केन्द्र में चन्द्रमा से युक्त गुरु हो, उस पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो, शेष ग्रह एकादश व द्वादश स्थानों में हों।
इन योगों में मनुष्यों की आयु छियासी वर्ष की होती है। लग्न में बुध स्थित हो, नवम या पंचम स्थान में चन्द्रमा और नवम स्थान में शनि हो तो सत्तासी वर्ष की आयु होती है।
सभी ग्रह यदि धनु राशि के द्वादशांश में हों तो नब्बे वर्ष की आयु होती है।

सौ वर्ष की आयु के योग :

दनुजविबुधवन्द्यौ केन्द्रसंस्थौ शताब्दं दनुजपतिपुरोधाः केन्द्रवत्री सककें ।
उदयति सुरपूज्ये हायनानां शतं मे चरमनवमधाम्नोरं शुजे शाङ्गयोर्वा ॥

शुक्र और बृहस्पति यदि केन्द्र स्थानों में स्थित हों तो सौ वर्ष की आयु होती है।
केन्द्र में शुक्र हो और कर्क लग्न में जन्म होने पर गुरु लग्नस्थ हो तो भी सौ वर्ष की आयु होती है।
नवम या द्वादश स्थान में चन्द्रमा और नवम या लग्न में शनि स्थित हो तो सौ वर्ष की आयु होती है।

मृतिमतिपथिकेन्द्रे नाशुभा जीवभेऽङ्ग सुरुगुरुरुत काव्यः कण्टके चारुदृष्टम्।
रणमपि तप आहो मूत्तिपो मृत्युगोऽब्जो नभसि तपसि शेषाः प्राणभारु पूजितो वा॥

धनु या मीन लग्न में जन्म हो, अष्टम, त्रिकोण व केन्द्र स्थानों में पापग्रह स्थित न हों, केन्द्र में बृहस्पति या शुक्र हों तथा अष्टम, नवम स्थानों पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो।
लग्नेश अष्टम स्थान में हो, दशम स्थान में चन्द्रमा हो, शेष ग्रह नवम स्थान में हों और वृहस्पति बलवान हो तो सौ वर्षों की आयु होती है।

उशनसि झवलग्ने पर्वरौ पुष्यदृष्टे युधि सुरपतिपूज्ये केन्द्रर्वात्तव्यथाघाः।
निजनिलयगता नाङ्गाष्टवैरीन्युयुषता बलकलितखगो द्वौ राज्यगौ तद्ववायुः॥

मीन लग्न में जन्म हो, शुक्र लग्नस्थ हो, अष्टम में शुभ ग्रहों से दृष्ट चन्द्रमा विद्यमान हो और बृहस्पति केन्द्रगत हो।
पाप ग्रह यदि अपनी राशियों में स्थित हों तथा वे पाप ग्रह षष्ठ या अष्टम स्थान में न हों, चन्द्रमा पापग्रहों से युत न हो तथा दशम स्थान में दो बलवान ग्रह हों। उक्त दोनों योगों में सौ वर्ष की आयु होती है।

पुण्याम्बुगाः सुखेचराः पङ्गुखगाः सूय्यैशसंस्थाः समभांशगाः किसु।
प्रान्त्यार्थगाः पूर्णनिशाकरे तना आयुः शतं स्याच्छरदां समस्य नुः॥

चतुर्थ व नवम स्थान में पापग्रह स्थित हों; समराशि में, बृहस्पति के नवांश में या समराशि नवांश में या व्यय व द्वितीय स्थान में शुभ ग्रह स्थित हों, लग्न में पूर्ण चन्द्रमा विद्यमान हो तो व्यक्ति परम धन सम्पत्तिमान् होकर सौ वर्ष की आयु प्राप्त करता है।

प्राग्लग्नयाते धनुरन्त्यभागे केन्द्रस्थभाद्याङ्कलवे शुभैर्वा।
कर्काङ्ग आयव्यरिगौ भपाच्यौं सद्वित्तिसतौ केन्द्रगतौ शतायुः॥

धनु लग्न में अन्तिम नवांश में जन्म हो, केन्द्रगत राशियों के प्रथम नवांश में शुभ ग्रह स्थित हों।

तीसरे, छठे, ग्यारहवें स्थान में चन्द्रमा व वृहस्पति हों केन्द्र स्थानों में बुध व शुक्र हों और कर्क लग्न में जन्म हो तो व्यक्ति की आयु सौ वर्ष की होती है।

अगांशगावाङ्गिरसासु रेज्यौ चरांशगाश्चण्डकरारकालाः
शेषौ द्विदेहांशगती ततोऽस्ते बुधे त्रिकोणे धिषणे भविध्वोः ॥
कायेऽथ कोत्तों कुसुते त्रिकोणे पूज्ये परिज्ञे तनयेऽथवेज्ये ।
केन्द्र मनोजे भृगुजे तनौ ज्ञ आयुः समानां शतमङ्गिनां स्यात् ॥

गुरु व शुक्र स्थिर नवांश में हो, सूर्य, मंगल व शनि चर नवांश में हों तथा शेष ग्रह द्विस्वभाव नवांश में हों तो सौ वर्ष की आयु होती है।
बुध सप्तम स्थान में, वृहस्पति त्रिकोण स्थानों में और शुक्र तथा चन्द्रमा लग्न में हों।
मंगल दशम स्थान में हो, बृहस्पति त्रिकोण में और चन्द्रमा पंचम स्थान में हो।
बृहस्पति केन्द्र स्थानों में हो, शुक्र सप्तम स्थान में, बुध लग्न में हो तो उक्त सभी योगों में सौ वर्ष की आयु होती है।

देहाधिपाद्देवगुरौ चतुष्टये त्रिकोणकेन्द्रेतरगैरशोभनैः
किं मातुले मृत्युगृहे निशाकरे केन्द्रेऽमरेज्येऽथ मघाजवाग्मिनोः ॥

लग्नेश जिस राशि में स्थित हो, उससे केन्द्र स्थानों में यदि वृहस्पति हो, केन्द्र व त्रिकोण स्थानों को छोड़कर शेष स्थानों में पाप- ग्रह हो।
चन्द्रमा पष्ठ या अष्टम स्थान में हो और बृहस्पति केन्द्र स्थानों में हो। इन योगों में सौ वर्ष की आयु समझनी चाहिए।

अङ्ग जुधे रन्ध्रगते न लोकिते खलैः समग्रैस्तदनूशना यदि ।
त्याये त्रिकोणे सचिवे स्मरे ततःकर्कालिलग्ने ग्रहपे सर्गाहते ॥
स्वे पक्षजे कण्टक इन्द्रयाजके- ऽथ रोहिते सोष्णकरे रणे किम् ।
घनेऽचिते कण्टक संश्रितेऽथवा कुरङ्गववत्रोत्तरभागविग्रहे॥

लग्न में शुक्र व गुरु हों, बुध अष्टम स्थान में हो तथा बुध पर किसी भी पापग्रह की दृष्टि न हो।
तृतीय, एकादश या त्रिकोण में शुक्र हो और बृहस्पति सप्तम स्थान में हो।
कर्क या वृश्चिक लग्न में जन्म हो, सूर्य पाप युक्त होकर लग्नस्थ हो, चन्द्रमा द्वितीय स्थान में हो और बृहस्पति केन्द्रगत हो ।

लग्न या अष्टम में मंगल सूर्य साथ हों और गुरु केन्द्र में हो। मकर लग्न के उत्तरार्ध में जन्म हो तो सौ वर्ष की आयु होती है|

कलाधरासृग्वति केन्द्रगेऽचते ऽयानेल येऽङ्ग बलिनि क्षपाकरे।
सूरौ स्वराशा वितरैरपि स्वभे यद्वाऽमले मृत्युगृहेऽमलेक्षिते ॥
चतुष्टये देव पुरोहिते चे- दनिष्टयातेऽपि निशाधिनाथे।
उतास्फुजिद्बोधनवाग्मिचन्द्रे- मेषूरणज्ञम्निगतैः शतायुः ॥

मकर लग्न के उत्तरार्ध में चन्द्रमा व मंगल हों, बृहस्पति केन्द्र में हो|
लग्न, अष्टम या दशम स्थान में बलवान चन्द्रमा हो, बृहस्पति स्वक्षेत्री हो और शेष ग्रह भी अपने क्षेत्र में हों।
शुभ ग्रह अष्टम स्थान में शुभ दृष्ट हों, बृहस्पति केन्द्र में हो तो चन्द्रमा षष्ठाष्टमद्वादश स्थानों में होने पर भी सौ वर्ष की आयु प्रदान करता है।
गुरु, शुक्र व बुध दशम या पंचम स्थान में हों तथा चन्द्रमा भी इनके साथ हो तो सौ वर्ष की आयु होती है।

असाधवश्चित्क लिकेन्द्रशस्था आलिङ्गिताङ्गे वृषभेण चन्द्रे।
सद्दृष्टयोः शान्तशयोः शकायकेन्द्रेषु नार्थ्यास्फुजितोः शतायुः ॥

केन्द्र, त्रिकोण व अष्टम स्थान में यदि पापग्रह हों, चन्द्रमा वृष राशि में हो और अष्टम या नवम स्थानों में शुभ ग्रहों से दृष्ट हो, गुरु व शुक्र लग्न, केन्द्र या नवम स्थानों में न हों तो सौ वर्ष की आयु होती है।

आस्पदेऽब्जवति जन्यमन्दिरे मूत्तिनाथवति कि महोगृहे।
शीतभानुवति नैधने घने- ऽनन्तपान्थरहितेऽचते स्वभे ॥
दीक्षणेऽन्यवति वा चतुष्टये देववन्द्यवति विग्रहे युधि।
भास्करास्त्रवति किं चतुष्टये गात्रनाथगुरुभाजि हितैः ॥

चन्द्रमा दशम स्थान में और लग्नेश अष्टम स्थान में हो। तृतीय स्थान में चन्द्रमा हो, लग्न व अष्टम स्थान ग्रहरहित हो, गुरु स्वराशि में हो और नवम में भी कोई अन्य ग्रह हो।
केन्द्र में बृहस्पति हो और लग्न तथा अष्टम में सूर्य मंगल हों। केन्द्र में लग्नेश बृहस्पति हो, पंचम, नवम व केन्द्र स्थानों में पाप ग्रह न हों तो सौ वर्ष की आयु होती है।

जितेषु मतिकेन्द्रपथेषु कि त्यो दिविचराः पथि पुत्रे।

कण्टके निपतने किमु पञ्च खेचरा यदि चतुष्टयगा वा ॥
केन्द्रकोणनिधनेषु न पापा कण्टके कविगिरीश्वरभाजि ।
कि तनूपतिमहामतिभाजि पञ्चता निगदिता शतवर्षेः ॥

केन्द्र, त्रिकोण या अष्टम स्थान में तीन ग्रह हों। केन्द्र में पांच ग्रह हों तो सौ वर्ष की आयु होती है। केन्द्र, त्रिकोण और अष्टम में पाप ग्रह न हों और केन्द्र में शुक्र गुरु हों, अथवा लग्नेश व शुक्र हों, अर्थात् बृहस्पति शुक्र या लग्नेश शुक्र यदि केन्द्र में हों तो सौ वर्षों में मनुष्यों की मृत्यु आचायों ने कही है।

बोध प्रश्न

1 दीर्घायु योग कितने वर्षों तक होता है|

2 दीर्घायु योग कितने वर्ष से शुरू होता है|

3 यदि लग्नगत बृहस्पति को सभी ग्रह देखते हों तो इस योग में उत्पन्न व्यक्ति की आयु होती है।

4 यदि लग्नेश, अष्टमेश व दशमेश केन्द्र में शनि से युक्त हों।

5 आयु योगों में मुख्यतःकितने खण्ड माने हैं|

6 जन्म लग्न का व्ययेश यदि बलवान हो तथा स्वराशि में हो तो मनुष्य होता है|

3.5 सारांश

इस इकाई केअध्ययन के द्वारा आप यह समझने में सक्षम हो सके होंगे कि कुण्डली में दीर्घायु योग कब से कब तक होता है| तथा कुण्डली में किन-किन ग्रहों के द्वारा कौन सी स्तिथि में दीर्घायु योग का निर्माण होता है| क्योकि आयु हीन जातक के लिये कोई भी सुख,एश्वर्य सब निराधार है| ज्योतिष शास्त्र के द्वारा ग्रहों कि स्तिथि आपसी सामन्जस्य, उनकी उदय-अस्त स्तिथि, उनकी डिग्री, भावों में आपसी तारतम्य ,उनके नवांशो कि परिस्तिथि को ध्यान में रखकर ही आयु का निर्धारण करके उसका फलादेश करने से सही जानकारी प्राप्त कि जा सकती है| इस इकाई को पड़ने के बाद प्रत्येक वर्षों के आधार पर आयु का निर्धारण करने में सफल हो सकेंगे|

3.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. 100
2. 65
3. 68
4. दीर्घायु
5. तीन खण्ड (अल्प. मध्य व दीर्घ)
6. सुखी व दीर्घायु होता है।

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची –

वृहज्जातकम् - चौखम्भा प्रकाशन
वृहत्पराशरहोराशास्त्र - चौखम्भा प्रकाशन
ज्योतिष सर्वस्व – चौखम्भा प्रकाशन
चमत्कार चिंतामणि- चौखम्भा प्रकाशन
भावप्रकाश - चौखम्भा प्रकाशन
सरावली- चौखम्भा प्रकाशन
मानसागरी- चौखम्भा प्रकाशन
जातक पारिजात
फलदीपिका
आयुर्निर्णयः

3.8 निबंधात्मक प्रश्न –

1. दीर्घायु योग का सविस्तार वर्णन करें|
2. स्वकल्पित उदाहरण द्वारा किन्ही तीन दीर्घायु योग का वर्णन कीजिये|

इकाई - 4 पूर्णायु योग

इकाई संरचना

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 पूर्णायु का सामान्य परिचय

4.4 ज्योतिष शास्त्र की दृष्टी से पूर्णायु

4.5 सारांश

4.6 अभ्यासप्रश्नों का उत्तर

4.7 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

4.8 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

भारतीय परम्परा में भारतीय दर्शन पर आधारित मनुष्य मात्र का मुख्य लक्ष्य दुःख की निवृति तथा सचिदानंद परमात्मा की प्राप्ति करना हैं| सुख की प्राप्ति हेतु मनुष्य चारों पुरुषार्थ धर्म -अर्थ -काम-मोक्ष ,की प्राप्ति के लिय प्रयत्नशील रहता हैं| इस मानव देह में आने का क्या उद्देश्य रहा होगा इन सभी का अध्ययन करने से ज्ञात होता है की अच्छे , बुरे कर्मों का माध्यम यह शरीर ही हैं जिस प्रकार संसार में सभी जीव तथा निर्जीव वस्तुओं की समयावधि निश्चित होती हैं उसी प्रकार पंच तत्वों से निर्मित भोतिक शरीर की समयावाधि भी निश्चित होती है| जो आयु के नाम से से जाना जाता हैं| जीवन काल पर आधारित शास्त्र को ज्योतिष शास्त्र कहते, `जो मनुष्यों के भूत, वर्तमान,भविष्य की गरना के आधार पर आयु का निर्धारण करता हैं |

4.2 उद्देश्य

- पूर्णायु क्या हैं समझ सकेगे |
- पूर्णायु योग केसे बनता हैं जान पायेंगे |
- पूर्णायु का फल क्या है , समझ सकेंगे|
- पूर्णायु के समय अवधि के बारे में जान पायेगे|

4.3 पूर्णायु का सामान्य परिचय

इस मृत्युलोक में मानव अपने कर्मके द्वारा जन्म प्राप्त करता है। तथा अपने जन्म-जन्मान्तरों में किये गये शुभाशुभ कर्म से अल्पायु, मध्यमायु दीर्घायु,पूर्णायु प्राप्त करता है। ज्योतिष शास्त्र प्रमुख रूप से आयु का निर्धारण करता हैं जातक के जन्म से लेकर मृत्यु पर्यंत ज्योतिष शास्त्र के द्वारा पूर्णायु के बारे में जाना जा सकता हैं। जातक के जन्म के समय अरिष्ट योग का विचार करना आवश्यक होता हैं।

जातक अपने कर्मों के अनुरूप इस जन्म में सुख-दुःख, लाम-हानि, व्यय-अपव्यय, राजयोग एवं दरिद्रयोग स्वयं के कर्मों से प्राप्त करता है। ठीक इसी प्रकार से व्यक्ति का दीर्घायु होना या अल्पायु होना भी जातक के जन्म-जन्मान्तरों में किये गये शुभाशुभ कर्मों का प्रतिफल माना जाता हैं। वास्तव

में अरिष्ट भी कुछ इसी प्रकार का ग्रहयोग है। अरिष्ट विचार के विषय में भिन्न-भिन्न ग्रन्थों में अलग-अलग वर्णन हमें प्राप्त होता हैं। बाल अरिष्ट योगों के विषय में कहा गया है कि माता-पिता द्वारा किया जाने वाला शुभाशुभ कर्म के अनुसार जातक को उसी प्रकार फल की प्राप्ति होती हैं। मिलने वाला प्रतिफल है। वस्तुतः शोध एवं अनुसंधान के बाद हमारे ज्योतिष शास्त्र जातक की मृत्यु प्रथम चार वर्ष (जन्म से प्रारम्भ कर के मध्य) में होती है तो उसमें उस जीव का कोई दोष नहीं होता है।उस जातक के माता के कर्मों के आधार पर तदनुसार फल प्राप्त होता है। क्योंकि जन्म से लेकर प्रथम चार वर्ष तक अथवा गर्भ में मृत्यु को प्राप्त होना इन सभी में माता के कर्मों की मुख्य भूमिका रहती है। क्योंकि ऐसे समय में जातक माता के द्वारा ग्रहण किये अन्न-जल के द्वारा अपने शरीर का पोषण करता है। अतः प्रथम चार वर्ष के मध्य बालक के अरिष्ट का विचार माता के जन्मांग चक्र से करना चाहिए। क्योंकि बालक का भरण-पोषण माता के द्वारा खाये गये अन्न-जल-दूध के द्वारा होता रहता है इसलिए प्रथम चार वर्ष तक बाल अरिष्ट हेतु माता के जन्मांग चक्र से विचार करना चाहिए।

मनुष्यों की आयु सम्बन्धी योगों का वर्णन फलित ग्रन्थों में में प्राप्त होता है। जातक परिजात ग्रन्थ में भी आयु से सम्बन्धित निम्नालिखित योगों का वर्णन प्राप्त होता हैं l मनुष्य की आयु के 7 प्रकार माने गए हैं। जिसके प्रभाव से जातक अपने जन्मांगचक्र के द्वारा शुभाशुभ योगादि के माध्यम से तथा क्रियमाण कर्मों के प्रभाव से उपरोक्त आयु को प्राप्त करता है जो निम्नालिखित हैं।

4.4 ज्योतिष शास्त्र की दृष्टि से पूर्णायु

भारतीय ज्योतिष शास्त्र में वेदों के नेत्र के रूप में ज्योतिष को प्रत्यक्ष शास्त्र माना गया हैं l ज्योतिष शास्त्र के आधार पर ही बाल्य अवस्था से वृद्धा अवस्था पर्यन्त ज्योतिष शास्त्र के द्वारा भविष्य फल कथन किया जाता हैं | मनुष्यों की आयु के जो 6 प्रकार है। उनमे से पूर्णायु के विषय से हम अवगत होंगे जो निम्नलिखित हैं|

कर्कटे समुदये गवि यद्वा तत्र निर्जर कदम्बकपूज्ये ।
उच्चगैस्त्रिखचरैर्यदि पुंसां पञ्चता रसदशोन्मित वर्षेः ।।

कर्क या वृष लग्न में जन्म हो एवं वृहस्पति लग्न में स्थित हो। साथ ही कोई तीन ग्रह स्वोच्च राशि में स्थित हों तो इस योग में उत्पन्न व्यक्ति की आयु १०६ वर्षों की होती है। वह १०६ वर्ष में मृत्यु को प्राप्त होता है।

मत्स्यान्त्याङ्गे केन्द्रसंस्थैश्चतुभिः खेटैर्वेन्दौ साण्डजे वा सकर्क।
स्वांशेऽङ्गस्थे खेचरोने चतुभिः खेटैः केन्द्रस्थैरुतेभारिलग्ने॥
प्रज्ञाचार्य्यस्थैर्नभोगैश्चतुभि- रायुर्वाच्यं दन्तिदिक्तुल्यवर्षम्।
नोग्रः कश्चित्कण्टका युस्त्रिकोणे केन्द्रस्थानेऽर्थ्यास्फुजिद्धाजि तद्वत्॥

यदि मीन के उत्तरार्ध में जन्म हो और केन्द्र में चार ग्रह स्थित हों। लग्न में या लग्न के नवांश में मीन राशि या कर्क राशि का चन्द्रमा हो तथा उसके साथ और कोई ग्रह न हो एवं केन्द्र में चार ग्रह स्थित हों।

सिंह लग्न में जन्म हो एवं त्रिकोण रथानों में चार ग्रह स्थित हों तो उवत सभी योगों में १०८ वर्ष की आयु कहनी चाहिए।

केन्द्र स्थान, त्रिकोण स्थान एवं अष्टम स्थान में कोई पापग्रह स्थित न हो और गुरु, शुक्र केन्द्र में ही स्थित हों तो भी एक सौ आठ वर्ष की आयु होती है।

कश्चित्खगो न रन्ध्रस्थो लग्ने नो पापखेचरः। केन्द्रे जीवे तदा जातो जीवेदष्टोत्तरं शतम्॥

अष्टम स्थान यदि ग्रह रहित हो और लग्न में कोई पापग्रह स्थित न हो और बृहस्पति केन्द्र में स्थित हो तो इस योग में मनुष्य की आयु १०८ वर्ष की होती है।

वृषोद्ङ्गमे तुङ्गगतैस्त्रिभिर्ग्रहैः सकर्क आर्य्यः किमु सैणभेऽसृजि।
सकर्कटे मंत्रिणि शेषखेचरैः केन्द्रस्थितैर्दन्तिदशाब्दकैमू तिः॥

वृषभ लग्न में जन्म हो एवं स्वोच्च राशि में कोई तीन ग्रह हों और विशेष रूप से बृहस्पति भी कर्क राशि में हो।

मकर राशि में मंगल हो, कर्क राशि में बृहस्पति हो और केन्द्र स्थानों में अन्य ग्रह हों तो इन योगों में उत्पन्न मनुष्यों की आयु १०८ वर्षों की होती है।

लग्नग्लावोः कालगा नो खगेन्द्राः काणाचाय्यौ वीर्य्यभाजौ स्त आहो।
मीनान्त्यांशे प्रावकुजे सर्वखेटाः स्वोच्चं प्राप्ता ज्ञे वृषे तत्त्वलिप्ते॥

लग्न या चन्द्रमा में जो अधिक बली हो, उससे अष्टम स्थान यदि ग्रहरहित हो और शुक्र व बृहस्पति दोनों बली हों। लग्न में मीन का अन्तिम नवांश हो, सभी ग्रह स्वोच्च राशि में हों और वृष राशि के पच्चीस अंश में बुध हो।

उक्त योगों में मनुष्य पूर्णायु (१२० वर्ष) को भोगता है।

वाऽऽ ताविन्दौ केन्द्र इज्ये सितेऽथ सद्ध सन्तोऽसद्गृहेऽसद्विहङ्गाः ।
वीर्योपेते सर्वैराहो विग्रहेशेऽथ शस्थैः सर्वैराहो कण्टके कल्पपाय्यौ ॥
आग्नेया नो शान्तचित्केन्द्रशेषु कि वा सौम्याः कण्टकस्था असौम्यैः ।
सद्धागस्थैः कातरै वृ द्धियातैः पूर्णायुर्नाऽऽयुःस्थयोर्मङ्गलावर्योः ॥

चन्द्रमा एकादश स्थान में स्थित हो, गुरु व शुक्र केन्द्र स्थानों में हों।
शुभ राशियों में शुभ ग्रह हों, पापग्रह पापराशियों में हों और लग्नेश बलवान् हो ।
नवम स्थान में सभी ग्रह विद्यमान हों।
लग्नेश व गुरु यदि केन्द्र स्थानों में हों, केन्द्र, त्रिकोण व अष्टम स्थानों में पापग्रह विद्यमान हों ।
केन्द्र में शुभ ग्रह स्थित हों, तीसरे, छठे, ग्यारहवें स्थानों में शुभ नवांश में पराजित पापग्रह हों तथा मंगल व शनि में से कोई भी मृत्यु स्थान में न हो तो मनुष्य की पूर्णायु होती है।

येषां जनौ पूर्णकलः कलावान् सुहृन्नभोगैरवलोक्यमानः
आये स्वतुङ्गे शुभमित्रवर्ग आयुः प्रपूर्ण प्रकरोतु तेषाम् ॥

जन्म समय जिन मनुष्यों की कुण्डली में पूर्णकलायुक्त चन्द्रमा मित्र ग्रहों से दृष्ट हो तथा तीसरे या ग्यारहवें स्थान में हो। अथवा पूर्णकलायुत चन्द्र स्वोच्च राशि, शुभ वर्ग या मित्न वर्ग में हो तो उन मनुष्यों को पूर्णायु प्रदान करता है।

चतुष्टये चारुयुतेऽङ्गनाये सशोभनेऽच्चेक्षणयोगभाजि
किकण्टके कायपतावुपेतदृष्टेंऽर्च्यभाभ्यां परिपूर्णमायुः|

केन्द्र स्थानों में शुभ ग्रह विद्यमान हों, लग्नेश भी शुभयुक्त हो तथा उस पर बृहस्पति की दृष्टि या युति हो।
लग्नेश केन्द्र में हो तथा उसके साथ बृहस्पति व शुक्र की युति या दृष्टि हो तो जातक पूर्णायु भोगता है।

दुष्टग्रहैस्त्यायदर। श्रितैर्दया चित्केन्द्रयातै विमलै विहङ्गःमै ।
सहःसमेते घननायके किनु सचारुखेटे चतुरस्रसद्मनि ॥

ससत्पुरेशेऽच्चत लोकितान्विते ततोऽङ्गपालादतिशौर्य्यशालिनि ।
गुह्य श्वरे हितपुष्करालयैः शान्तान्त्यगैः केन्द्रनिकेतगैरुत ॥

तीसरे, छठे व ग्यारहवें स्थानों में पापग्रह हों, नवम, पंचम व केन्द्र स्थानों में शुभग्रह हों और लग्नेश बलवान् हो। चतुर्थ व अष्टम स्थानों में शुभग्रह हों, लग्नेश शुभग्रहों से युक्त हो या बृहस्पति से युत दृष्ट हो।
लग्नेश की अपेक्षा अष्टमेश अधिक बलवान हो और केन्द्र, अष्टम व व्यय स्थानों में पापग्रह स्थित हों।
उक्त योगों में मनुष्य की पूर्णायु होती है।

काये कवौ कालगृहे न कल्मषे विराजमाने यदि कण्टकेर्डाच्चते ।
अथामरामात्यसिता उताब्रिज- गौरौ कुलीरोदयगौ निमीलने ॥
न कश्चिदाहो कलुषैर्न चिन्मृतिशकेन्द्रगैर्वाथ निजत्रिभागगे ।
सूरौ स्वराशौ किमु सेन्द्रवन्दितेकुलोरगोप्राक्कुज उच्चभाश्रितैः ॥

लग्न में शुक्र स्थित हो, अष्टम में पापग्रह स्थित न हों और केन्द्र में गुरु हो।
कर्क लग्न में गुरु और शुक्र हो या चन्द्रमा व वृहस्पति हों और अष्टम स्थान में कोई ग्रह न हो।
केन्द्र, त्रिकोण व अष्टम स्थान में पापग्रह न हों। बृहस्पति अपनी राशि में अपने ही द्रेष्काण में हो, अर्थात् प्रथम द्रेष्काण में हो।
कर्क या वृष लग्न में बृहस्पति हो और तीन ग्रह उच्च के हों। इन योगों में पूर्णायु होती है।

त्रिभिद्य वासैरथ कर्कटे गुरौ मृगे कुजेऽन्यैर्यदि कण्टका श्रितैः ।
पूर्णायुरुग्रैः परिवारवंशगैः साचार्य्यभागे भवगे बुधे तथा ॥

कर्क राशि में बृहस्पति, मकर राशि में मंगल हो, और शेष ग्रह केन्द्र स्थानों में हों तो पूर्णायु होती है।
यदि द्वितीय व दशम स्थान में पापग्रह हों और लाभ स्थान में बृहस्पति के नवांश में बुध हो तो भी पूर्णायु (१२० वर्ष) होती है।

पूर्णे मासे यदि वपुषि वा वृद्धिभावे ससौभ्यां- शे सद्युक्ते किमखिलतनौ चन्दिरे गात्त्रगेहे।
सद्वन्द्वांशे विधुभुविधने वाऽवसानेऽथ कन्यारत्यांशे लग्ने सुषिमकरजे कन्यकापूर्व भागे ॥

लग्न में या तृतीय, षष्ठ, एकादश स्थानों में शुभ नवांश में शुभ ग्रहों से युक्त चन्द्रमा हो। लग्न में पूर्ण चन्द्रमा हो और धन या व्यय स्थान में मिथुन के नवांश में बुध स्थित हो।
लग्न में कन्या का अन्तिम नवांश हो और कन्या के पूर्व भाग में बुध हो और तीन ग्रह उच्च के हों तो मनुष्य की पूर्णायु होती है।

स्वीये तुङ्गे त्रिगगनचरैर्वाङ्गतः केन्द्रशाम्नि- ज्ञप्त्यायुःस्थैः सुरसरणिगैस्व्यब्धिपञ्चोन्मितैर्वा ।
वोणाद्याद्धं धरणिभुवि तत्पश्चिमाद्धं विलग्ने तत्त्राचाय्यें करवमदघने सास्फुजिच्चन्द्रजे वा ॥

लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, अष्टम व एकादश स्थानों में तीन, चार या पांच ग्रह हों।
मिथुन के पूर्वार्ध में मंगल हो तथा लग्न में मिथुन का उत्तरार्ध हो, गुरु लग्नस्थ हो, केन्द्र में शुक्र से युत बुध हो। उक्त योग में मनुष्य पूर्णायु प्राप्त करता है।

चापाद्य। बेंङ्गिरसि च तदन्त्यार्द्धके प्राग्विलग्ने कृष्णे केन्द्रे विधुवति
सितेऽथैन्दवोऽङ्गान्त्यभागे ।
पङ्काः प्राप्तित्रिगदगृहगा मन्दगामी शरीरे केन्द्रे सूरौ किमुशनसि सम्पूर्णमायुस्तदानीम् ॥

धनु राशि के पूर्वार्ध में बृहस्पति हो, लग्न में धनु का उत्तरार्ध हो, केन्द्र में शनि हो और शुक्र चन्द्रमा से युक्त हो ।
लग्न के अन्तिम भाग में बुध स्थित हो, तृतीय पष्ठ व एकादश स्थानों में पापग्रह हों, लग्न में शनि हो और गुरु या शुक्र केन्द्र में हों। इन योगों में पूर्णायु होती है।

धनुरन्त्यदले कलेवरे विबुधे सिद्धलवै वृ षोपगे ।
निखिलैः खचरैनिजोच्चगैः परमायुर्मनुजस्य कीर्त्यते ॥

धनु राशि का उत्तरार्ध लग्न में स्थित हो, वृष के चौबीस अंशों पर बुध हो, सब ग्रह (शेष) स्वोच्च राशि में स्थित हों तो मनुष्य की परमायु (पूर्णायु) होती है।

क्रूरैः क्रूरक्षयातैः शुभभवनगतैः सौम्यखेटैः सवीर्ये लग्नेशे स्यात्परायुः

पापग्रह की राशि में पाप ग्रह शुभग्रह की राशि में शुभग्रह हों और लग्नेश पूर्णबली हो तो पूर्णायु (१२० वर्ष) होती है।

सारङ्गस्यान्त्यभागे यदि वपुषि गते चाद्यभागे च केन्द्रे
सौम्यैः खेटैः शतं स्याद्वसुसहजसुखे स्याच्चिरायुः समस्तैः ।

धनुराशि का अन्तिम नवांश (धनु) लग्न हो और शुभग्रह केन्द्र में हों तो १०० वर्ष की आयु होती है।

चतुष्टये शुभै युक्ते लग्नेशे शुभ संयुते। गुरुणा दृष्टि संयोगे पूर्णमायुविनिर्दिशेत् ।।

यदि किसी जातक के जन्मांग में केन्द्र भाव (1,4.7.10) स्थानों में शुभ ग्रह हो लग्नेश शुभग्रह से युक्त होगुरु ग्रह दृष्ट हो तो जातक का पूर्ण आयु योग बनता है।

केन्द्रान्विते विलग्नेशे गुरुशुक्रसमन्विते । ताभ्यां निरीक्षिते वाऽपि पूर्णमायुविनिर्दिशेत् ।।

जातक के जन्मांग कुंडली में केन्द्रस्थ लग्नेश गुरु तथा शुक्र से युत हो तथा शुक्र व गुरु ग्रह उसे देखते हों तो पूर्णायु योग बनता हैं ।

उच्चान्वितैस्त्रिभिः खेटैर्लग्नरन्ध्रेशसंयुतैः । रन्ध्र पापविहीने च दीर्घमायुविनिर्दिशेत् । ।

जातक के जन्मांग कुंडली में तीन ग्रह उच्च राशि के हों तथा लग्नेश व अष्टमेश से युक्त हों तथा अष्टम भाव पापग्रह से रहित हो तो पूर्णायु योग बनता है।

इसी क्रम में अन्य जातको का विचार किया जा रहा हैं

रन्धैस्थितैस्त्रिभिः खेटैः स्वोच्चमित्रस्ववर्गगैः । लग्नेशबलसंयुक्ते दीर्घमायुविनिर्दिशेत् ।।

जातक के जन्मांग में अष्टमभाव में तीन ग्रह हों तथा स्व राशि,उच्चराशि, या मित्र स्थान या अपने वर्ग के हों तथा लग्नेश बलवान् हो तो पूर्णायु योग बनता है।

स्वोच्चस्थितेन केनापि खेचरेण समन्वितः । शनिर्वा रन्ध्रनाथोर्वा दीर्घमायुविनिर्दिशेत्।।"

जातक के जन्मांग में उच्चराशिस्थ कोई ग्रह शनि या अष्टमेश से युक्त हो तो यह दीर्घायु योग कहलाता है।

त्रिषडायगताः पापाः शुभाः केन्द्रत्रिकोणगाः। लग्नेशो बलसंयुक्तः पूर्णमायु विनिर्दिशेत् ।।

यदि जातक की जन्म कुंडली में में पापग्रह त्रिषडाय (3,6,11,) स्थान में बेठा हो तथा शुभग्रह

केन्द्रस्थानों (1,4,7,10) या त्रिकोण (5,9) स्थानों में हों तथा लग्नेश बली हो तो जातक का पूर्णायु योग बनता हैं।

षट्सप्तरन्ध्रभावेषु शुभेषु सहितेषु च। त्रिषडायेषु पापेषु दीर्घमायुविनिर्दिशेत् ।।

इस कुंडली के द्वारा जातक के जन्मांग कुंडली में शुभग्रह षष्ठ, सप्तम, अष्टम भाव में स्थित हो, पापग्रह 3.6,11 छठे तथा एकादश भाव में हो तो जातक को पूर्णायु देते हैं।

रि:षफ शत्रुगता: पापा: लग्नेशो यदि केन्द्रगा। रन्ध्रस्थानगतापापा: कर्मेश: स्वोच्चराशिग: ।

योगोद्वयेऽपि दीर्घायुरुपैति बहुसम्मत् ।।

जातक के जन्म कुंडली में पापग्रह 12वें भाव या छठे भाव में, लग्नेश केन्द्रभावों में स्थित हो व अष्टम स्थान में पापग्रह तथा दशमेश अपनी उच्चराशि में हो तो जातक का पूर्णायु योग बनता हैं।

रन्प्रेशस्थग्रहाधीशो यस्मिन् राशौ व्यवस्थित: । तदीशो लग्ननाथश्च केन्द्रगो यदि तादृशम् ।।

यदि जातक के जन्मांग में अष्टमेश जिस भाव स्थित हो उस भाव का स्वामी, जिस राशि में स्थित हो उस राशि का स्वामी तथा लग्न का स्वामी लग्नेश, ये तीनों केन्द्र स्थानों (लग्न, चतुर्थ, सप्तम, दशम) भाव में हो तो जातक का पूर्णायु योग बनता है।

द्विस्वभावं गते लग्ने तदीशे केन्द्रगेपि वा। स्वोच्चेमूलत्रिकोणे वा चिरं जीवति भाग्यवान्।।

किसी जातक का यदि द्विस्वभाव लग्न में जन्म हुवा हो, लग्नेश केन्द्र स्थानों (1.4.7.10) में हो तथा अपनी उच्चराशि या मूलत्रिकोण राशि का हो तो वह जातक चिरकाल समय तक भाग्यशाली होता है।

द्विस्वभावं गते लग्ने लग्नेशात् केन्द्रगौ यदि। द्वौ पापी यस्य जनने तस्यायुर्दीर्घमादिशेत् ।।

यदि किसी जातक का जन्मद्विस्वभाव लग्न में मिथुन हो तथा लग्नेश से केन्द्र में दो पाप ग्रह हो तो वह जातक पूर्णायु प्राप्त करता है।

चरांशकस्था रविमन्दभौमाः स्थितरांशकस्थौ गुरुदानवेज्यौ ।

शेषाश्च युग्मांशगता यदि स्युस्तदा समुद्भूत नरः शतायुः॥

जातक के जन्मांग कुंडली में सूर्य, शनि और मंगल चर राशि के नवांश में बृहस्पति और शुक्र स्थित राशि के नवांश में हो तथा शेषग्रह (चन्द्र, बुध, राहु, व द्विस्वभाव राशि के नवांश में हो तो वह जातक सौ १०० वर्ष तक जीवित रहता है।

धीकेन्द्रायुर्नवस्था यदि खलखचरा नो गुरोर्भेविलग्ने
केन्द्रे काव्ये गुरौ वा शुभमपि निधनं सौम्यदृष्टं शतं स्यात् ।
लग्नादिन्दोर्न खेटा यदि निधनगता वीर्यभाजौ सितेज्यौ पूर्णायुः

पञ्चमभाव केन्द्रस्थान (१-४-७-१०) और नवमभाव पापग्रह से रहित हों, धनु या मीन लग्न हो, केन्द्र में बृहस्पति या शुक्र रहें, नवमभाव और अष्टमभाव शुभग्रह से दृष्ट हों, तो १०० वर्ष की आयु होती है। लग्न या चन्द्रमा से अष्टमस्थान में यदि कोई भी ग्रह नहीं हो और शुक्र-बृहस्पति बलवान हों तो जातक को पूर्णायु (१२०) होती है।

कोदण्डान्त्यार्धमङ्गं यदि सकलखगाः स्वोच्चगा ज्ञे जिनांशै-
र्गोस्वे पूर्णं च केन्द्रे सुरपतिभृगुजौ लाभगेऽब्जेपरायुः
शुक्रे मीने तनुस्खे निधनगृहगते सौम्यदृष्टे सुधांशौ
जीवे केन्द्रे शतं स्यादथ तनुगृहपे छिद्रगे पुष्करेऽब्जे ।।

धनुराशि के उत्तरार्द्ध (१५ अंश के बाद) में लग्न हो, बुध वृषराशि में २४ अंश पर हो, शेष (सू. चं. भौ. गु. शु. श.) ग्रह स्व स्व उच्च राशि में हों तो अथवा बृहस्पति शुक्र केन्द्र में हो और चन्द्र एकादश में हो तो पूर्णायु (१२० वर्ष) होती है। मीन लग्न हो उसमें शुक्र स्थित होकर शुभग्रह से दृष्ट हो, चन्द्र अष्टम भाव में हो और बृहस्पति केन्द्र (१-४-७-१०) में हो तो १०० वर्ष की आयु होती है ।।

क्रूराः सौम्यांशयाता उपचयगृहगाः कातराः कण्टकस्थाः
सौम्या व्योमार्कसंख्यं यदि तनुपकुजौ रन्ध्रगौ नो परायुः ।
केन्द्रे लग्नेशजीवौ नवसुतनिधने कण्टके नो खलाख्याः
सम्पूर्ण पापखेटा यदि गुरुजलगा जीवभावे च सौम्याः ।।

पापग्रह शुभग्रहों के नवांश में स्थित होकर लग्न से उपचय (३-६-१०-११) स्थानों में विराजमान हों

तथा कातर (पराजित) शुभग्रह केन्द्र (१-४-७-१०) में हों तो १२० वर्ष की आयु होती है। इस योग में यदि लग्नेश और भौम अष्टम भाव में रहें तो पूर्णायु (१२०) नहीं होती है। लग्नेश और बृहस्पति केन्द्र (१-४-७-१०) में हों और नवम-पञ्चम तथा अष्टम भाव में कोई भी पापग्रह नहीं हो तो सम्पूर्णायु (१२०) होती है ॥

लग्नाधीशोऽतिवीर्यो यदि शुभविहगैरीक्षितः केन्द्रयातै-
र्दद्यात् आयुः सुदीर्घ गुणगणसहितं श्रीयुतं मानवानाम् ।

लग्नेश यदि केन्द्रस्थित शुभग्रहों से दृष्ट होकर पूर्ण बली हो तो वह गुणसमूहों सहित लक्ष्मी और पूर्ण आयु को देता है।

सवीर्यो सितेज्यौ लग्नादिन्दोश्च रन्ध्रहीने ग्रहे चेद्विशाधिकशतायुः ॥
धनुर्द्वितीयहोराङ्गे स्वोच्चगा ग्रहाः जिनांशे वृषगे बुधे पूर्णायुः ॥
केन्द्रे शुक्रेज्यौ लाभगे चेन्दौ परायुः ॥
शुभांशस्थाः पराजिताः क्रूरोपचयस्थाः शुभाः केन्द्रे चेत्पूर्णायुः ॥
केन्द्रस्थौ अङ्गपेज्यौ रन्ध्रकेन्द्रत्रिकोणहीनाः क्रूराश्चेत्पूर्णायुः ॥
सर्वे ग्रहाः धर्मे चेत्परायुः ॥
क्रूरर्क्षगतः क्रूरैः शुभक्षगैः शुभैः सबलेऽङ्गपे चेत्पूर्णायुः ॥
पूर्णायुयोगेषु रन्ध्रगौ शनिकुजौ चेन्नो परायुः ॥

बृहस्पति और शुक्र बलवान् हों, लग्न और चन्द्रमा से अष्टमभाव शुद्ध (ग्रहविहीन) हो तो जातक की आयु १२० वर्ष होती है।

धनुराशि की अन्तिम होरा (धनुराशि के उत्तरार्ध) में लग्न हो, सभी ग्रह उच्चराशिगत हों तथा बुध वृषराशि के २४० अंश में स्थित हो तो जातक पूर्णायु होता है ॥

बृहस्पति और शुक्र केन्द्रस्थ हों और चन्द्रमा एकादशभावगत हो तो जातक पूर्णायु होता है ॥

पराजित' क्रूरग्रह शुभराशि के नवांशगत होकर उपचयभावों में स्थित हों, शुभग्रह

यदि केन्द्रगत हों तो जातक पूर्णायु भोग करता है ॥ लग्नेश बृहस्पति के साथ केन्द्रस्थ हो और केन्द्र त्रिकोण तथा अष्टमभावेतर भावों में पापग्रह स्थित हों तो जातक पूर्णायु होता है ॥

सभी ग्रह यदि नवमभाव में स्थित हों तो जातक पूर्णायु होता है ॥

क्रूर राशियों में क्रूरग्रह तथा शुभ राशियों में शुभग्रह स्थित हों, लग्नेश बलवान् हो तो जातक १२० वर्षायु का भोग करता है ॥

उपर्युक्त पूर्णायु-योगों में यदि शनि और मंगल अष्टमभाव में स्थित हों तो पूर्णायु नहीं होती है।

इनके अतिरिक्त भी यदि मंगल, शुक्र और शनि चरराशि के नवांश में तथा सूर्य और बृहस्पति

स्थिरराशि के नवांश में स्थित हों तो जातक पूर्णायु होता है।

अभ्यास प्रश्न

1. लग्न या चन्द्रमा से अष्टमस्थान में यदि कोई भी ग्रह नहीं हो और शुक्र-बृहस्पति बलवान हों तो जातक की आयु होती है |

2. पूर्णायु का काल निर्धारण होता है|

3. पापग्रह की राशि में पाप ग्रह शुभग्रह की राशि में शुभग्रह हों और लग्नेश पूर्णबली हो तो आयु होती है|

4. शुभ ग्रह केन्द्र मैं बैठें हो तो कोन सी आयु ग्रहण करनी चाहिए।

5.देवायु का समय क्या हैं।

4.5 सारांश

प्रस्तुत इकाई में मनुष्य के आयु के विषय में वर्णित हैं| ज्योतिष शास्त्र के अनुसार भारतीय परम्परा मैं वेदों को ही प्रमाणित ग्रंथ के रूप मैं स्वीकार किया गया हैं। वेद के छः अंगों के रूप मैं वेदाडंगो की उत्पत्ति हुई हैं जिससे कि भारतीय ज्ञान परम्परा सिद्ध हो सके। वेदाड्गो मैं ज्योतिष को नेत्र कहा गया हैं, "ज्योतिषं नेत्र उच्यते " ज्योतिष शास्त्र मनुष्य के सभी आयुओं जैसें मध्यायु, अल्पायु, पूर्णायु आदि का निर्धारण जातक के कर्मानुसार उसके जन्म समय के माध्यम से कुंडली के द्वारा निश्चित किया जाता हैं। जिससे पूर्णायु का ज्ञान किया जा सके ।

दीर्घायु के अनन्तर दैवयोग से प्रदत्त आयु दैवायु कही जाती है। इसका समय 120-130 वर्ष तक कही जा सकती है। ऋषि ,मुनि , साधु ,संत क्रियाओं, श्वास, प्रश्वास,योग , मन्त्रादि अनुष्ठानों द्वारा, संचित तथा क्रियमाण शुभ कर्मों द्वारा असंख्यायु को प्राप्त करते है।

4.6 अभ्यासप्रश्नों के उत्तर

1. 120 वर्ष

2. 100 से 120 वर्ष तक

3. पूर्णायु

4. पूर्णायु

5. 70 से 100 वर्ष

4.7 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

वृहज्जातकम् - चौखम्भा प्रकाशन
वृहत्पराशरहोराशास्त्र - चौखम्भा प्रकाशन
ज्योतिष सर्वस्व – चौखम्भा प्रकाशन
चमत्कार चिंतामणि- चौखम्भा प्रकाशन
भावप्रकाश - चौखम्भा प्रकाशन
सरावली- चौखम्भा प्रकाशन
मानसागरी- चौखम्भा प्रकाशन
जातक पारिजात
फलदीपिका
आयुर्निर्णयः

4.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पूर्णायु योग कैसे बनता है उदा.सहित स्पष्ट कीजिए।
2. जातक पारिजात के अनुसार आयुके विषय मैं उल्लेख कीजिए।
3. ज्योतिष शास्त्र के अनुसार आयु के महत्व पर प्रकाश डालिए।

इकाई – 5 अमितायु योग

इकाई की संरचना –

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 अमितायु योग का परिचय
5.4 अमितायु व अन्य योग
5.5 सारांश
5.6 बोध प्रश्नों के उत्तर
5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
5.8 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

इससे पहले की इकाईयों में आपने जाना अल्पायु, मध्यमायु, दीर्घायु, पूर्णायु योगों के बारे में इस इकाई के माध्यम से यह जानने के प्रयास करेंगे कि अमितायु योग क्या है| तथा इस योग के अन्तर्गत कौन – कौन से योगों के द्वारा इसका निर्माण होता है| व कौन से विशेष प्रकार के योग होते है, जो अमितायु के समान होते है| जिनको पड़ने के बाद आप यह सरलता से कुण्डली के माध्यम से समझने में सहायक हो सकेंगे

5.2 उद्देश्य

- अमितायु योग क्या हैं समझ सकेगे |
- अमितायु योग केसे बनता हैं जान पायेंगे |
- अमितायु योग के अलावा और कौन-कौन से योग हैं, उन्हें समझ सकेंगे|
- अमितायु के समय अवधि के बारे में जान पायेगे|

5.3 अमितायु योग परिचय

ज्योतिष शास्त्र के अनुसार मनुष्य कि ग्रह-दशा से उसकी आयु का गहरा सम्बन्ध है| भारतीय मनीषियों के अनुसार मनुष्य के किये गये कार्यों व कर्मो के अनुसार ही उसकी आयु का निर्धारण होता है| आयु प्रारब्ध कर्मो के प्रभाव से ही अल्पायु, मध्यमायु, दीर्घायु, पूर्णायु या अमितायु होती है| इसका सही-सही निर्धारण करना ज्योतिषीय दृष्टि से ही संभव है,

अमितायु व अन्य योग-

विधुगुरुवति कर्कप्राक्कुजे कण्टकस्थौ भृगुभदयितपुत्त्रौ व्यायरोगेषु शेषैः ।
अमितमुदितमायुः पूर्णराजामरेज्यौयदि सकुलिरराशी नीरहोराम्बरस्थौ ॥
अहिमकिरणराज्यौ जूकगौ शेषखेटेर्भयभवभुजयातैस्तद्वदुच्चक्षमाप्तौ
अमरनुतकुसुन् जूकभे षोडशाच्चिः शशभृति हयराशौ मत्त्यपोऽस्यामितायुः ॥

कर्क लग्न में चन्द्रमा व बृहस्पति स्थित हों, शुक्र व बुध दोनों केन्द्र स्थानों में स्थित हों एवं शेष ग्रहं तृतीय, षष्ठ एवं लाभ स्थानों में स्थित हों तो अमित आयु होती है।
चतुर्थ या दशम स्थान में कर्क राशि में चन्द्रमा व वृहस्पति की स्थिति हो अर्थात् मेष लग्न या तुला लग्न में जन्म हो और कर्क में चन्द्र- गुरु हों। सूर्य एवं बुध तुला राशि में स्थित हों एवं ३, ६, ११ स्थानों में शेष ग्रह हों।

बृहस्पति व मंगल अपनी उच्च राशि में स्थित हो, तुला राशि में शुक्र हो, चन्द्रमा धनु राशि में हो तो उक्त सभी योगों में अमितायु योग होता है एवं साथ ही राज योग भी होता है।

केन्द्र स्थानों में शुभ ग्रहों की स्थिति और ३, ६, ११ स्थानों में पापग्रहों की स्थिति सामान्यतः भाग्य, आयु एवं सांसारिक सुख की दृष्टि से अच्छी मानी जाती है। अकेला शुक्र या अकेला बुध यदि केन्द्र-गत हो तो आयुवर्धक होता है। बृहस्पति स्वोच्चस्थ हो, प्राणभूत चन्द्रमा लग्नेश होकर शुभग्रह के साथ कर्क में स्वक्षेत्री हो तथा ३, ६, ११ दुःस्थानों में दुष्टग्रह हों तो निश्चय ही आयु, मान-सम्मान एवं सुख की अभिवृद्धि होती है। अमितायु योगों या पूर्णायु योगों में भी आजकल ७० से ऊपर एवं १०० से नीचे तो आयु प्रायशः देखी जा रही है, अतः भ्रमित होने की आवश्यकता नहीं है।

स्वकीयभागान्वितकर्काकलग्ने केन्द्रेऽमरेज्ये कुटिले कलते ।
सिंहासनांशे भृगुजे विशेषाद् रसायनेनामितसापुरेति ॥१६७॥

जिसका जन्म वर्गोत्तम कर्क लग्न में हो, बृहस्पति केन्द्र स्थानों में हो, मंगल सप्तम स्थान में और विशेषतः सिंहासनांश में शुक्र स्थित हो तो रसायनादि के सेवन, सदाचार एवं संयम से अमितायु होती है।

उत्तम एवं संयमित भोजन, व्यवस्थित जीवन एवं सत्त्वगुण की प्रधानता से सामान्यतः सभी योगों में आयु की वृद्धि होती है। क्रोधादि न करना तथा मानसिक स्वास्थ्य को बनाए रखने से आयु बढ़ती है-

सर्वलक्षणहीनोऽपि यः सदाचारवान्नरः। श्रद्दधानोऽनसूयश्च शतं वर्षाणि जीवति॥

सभी लक्षणों से रहित होने पर भी यत्रि श्रद्धावान् एवं ईर्ष्यारहित होता है तो वह सौ वर्षों तक का जीवन यापन करता है।

जत्रुविलग्ने प्रमदापरार्द्धे मन्वे सहेम्ने मृदुषष्टिभागे।
बाऽच्चेंऽङ्गनाधम्नि सगोपुरांशे सोऽसंख्यमायुः समुपैति जन्मी॥

जन्म के समय कन्या लग्न का उत्तरार्ध हो, मृदु षष्ट्यश एवं शनि साथ ही स्थित हों और सप्तम स्थान में गोपुरांश में बह हो तो प्राणी अमितायु प्राप्त करता है।

स्वलोकांशगते सितेऽमरनुते केन्द्र ससिंहासने
वक्रे के प्रयुतेऽथ भारविभवे पारावतांशे गुरौ॥

केन्द्रे निर्जरलोकगे भृगुभवे चेदुत्तमांशाश्रिते
केन्द्र सोऽमितमायुरेति विविधैभैषज्य पूर्वैर्भवी ॥

शुक्र देवलोकांश में हो, केन्द्र में सिंहासनांश में स्थित वृहस्पति हो एवं मंगल केन्द्र में स्थित हो। शनि पारावतांश में स्थित हो, केन्द्र में देवलोकांश में वृहस्पति एवं उत्तमांश में स्थित शुक्र भी केन्द्र में ही स्थित हो तो प्राणी औषधि मंत्रादि के सेवन से अमितायु को प्राप्त करता है।

गोनाथभागमधिगम्य विधुर्धानधाने सिंहासनांशकगतो वसुधाकुमारः ।
मूत्तत्ववेः परदले सगुरो सभे वा- ऽसंख्यायुरेति मनुजो बहुतंत्रमंत्रैः ॥

धनस्थान में वृष राशि के नवांश में चन्द्रमा हो, मंगल सिंहास- नांश में स्थित हो और लग्न में मेषराशि का उत्तरार्ध हो और लग्न में बृहस्पति व शुक्र स्थित हों तो आयुरक्षक उपायों (औषधि, तंत्र, मंत्रादि) से अमितायु को प्राप्त करता है।

देवतुल्य आयु के योग

वैशेषिकांशे विमला घनाद्यदले यमाद्या द्युचराः कुजान्ताः ।
कि कण्टके वीतशुभे खलोने कोणे विनाशे सुरतुल्यमायुः ॥

सभी ग्रह शुभ वैशेषिकांश में स्थित हों, लग्न के पर्वार्ध में शनि, सूर्य, चन्द्रमा व मंगल हों अथवा शनि, बुध, केतु, शुक्र, सूर्य, चन्द्रमाच मंगल लग्न के पूर्वार्ध में स्थित हों।
केन्द्र में कोई शुभ ग्रह न हो, त्रिकोण व अष्टम में पापग्रह न हों। उक्त योगों में उत्पन्न मनुष्य की आयु देवताओं के तुल्य अर्थात् बहुत लम्बी आयु होती है।

मुनि तुल्यायु योग :

स्वर्लोकभागे भपतौ भगे सिंहासनांशे हरिजोपयाते ।
पारावतांशे पृथिवीकुमारे समेति जातो मुनितुल्यतां सः ॥

चन्द्रमा देवलोकांश में हो, लग्न में सूर्य सिहासनांशगत हो और मंगल पारावतांश में हो तो इस योग में उत्पन्न मनुष्य मुनियों की तरह अमित आयु भोगने वाला होता है।
गृह, होरा, द्रेष्काण, सप्तमांश, नवांश, दशांश, द्वादशांश षोडशांश, विशांश व षष्ट्यंश इन दस वर्गों की कुण्डलियां बनाकर देखना चाहिए कि इनमें कौन से ग्रह अपने वर्ग, अतिमित्र के वर्ग या उच्च के

वर्ग में स्थित हैं! ऐसे ग्रहों को स्वर्धादिवर्गी नाम दिया गया है। यदि दो वर्गों में स्वर्धादिवर्गी हों तो पारिजातांश, तीन वर्गों से उत्तमांश, चार से गोपुरांश, पांच से सिंहासनांश, छह से पारावतांश, सात से देवलोकांश, आठ से ब्रह्मलोकांश, नौ से ऐरावतांश व दस से श्रीधामांश या वैशेषिकांश होता है। यदि उक्त पारिजातादि योगकारक ग्रह नीच, अस्त, शत्रुराशि, विकस्थानगत, मृत्यु अवस्था या क्रूर षष्ट्यंश में या षड्वल से रहित हो तो फल का नाश हो जाता है-

खेटैर्नीचास्तारिपुस्विनाशावस्थां यातैः क्रूरषष्टयंशगैर्वा।
षड्वीर्योनैः पारिजातादिकानां नाशोऽशानां कीर्त्यते जातकज्ञैः ॥

'पारिजातादि वर्गों में स्थित ग्रह यादि नीचराशि, अस्तंगत, दुःस्थानों में स्थित, मृत्यु अवस्थागत, क्रूषष्ट्यंशगत, षड्वल से रहित होंगे तो इन वर्गों के फल का नाश हो जाता है। ऐसा होराविदों ने कहा है।

साजेऽम्बुजेशेऽम्बरगे गिरीश्वरे स्वोच्चऽशुभे सोदररुङ्मनोरथे।
तथाऽगभे सज्ञ इने वृषेविधा- वाय्यें कुलीरे मिथुने मघाभवे ॥
तुलाधराङ्गे मृदुगामिभाजि वा कर्कादियातैरखिलैः खगैस्त।
नक्षत्रनायेन्द्रपुरोहितादिभिर्महाग्रहान्तैः परमोच्चगैस्ततः ॥
गुरौ कुले कोलगुरू शुभेक्षिता वेकांशगावेकगृहाश्रितौ यदि।
निदाघभानावुदयागसंश्रिते सद्भाजि जातो भुनिसन्निभो भवेत ॥

दशम स्थान में मेष राशिगत सूर्य हो, बृहस्पति उच्चस्थान में हो, तृतीय, षष्ठ व एकादश स्थान में पापग्रह स्थित हों।
स्थिरराशि में बुध व सूर्य हों, वृषराशि में स्वोच्चरथ चन्द्रमा हो, कर्क में गुरु हो और मिथुन में शुक्र हो एवं तुला लग्न में जन्म समय शनि लगनस्थ हो।
कर्क के पूर्वार्ध में समस्त ग्रह हों तो उक्त सभी योगों में मनुष्यों की मुनि तुल्यायु होती है।
चन्द्रमा से शनि पर्यन्त या गुरु से शनि पर्वन्त ग्रह यदि स्वोच्च राशि में परमोच्चांश में स्थिति हों।
नवम या दशम स्थान में शुभग्रहों की दृष्टि से युक्त शनि व बृहस्पति हों तथा ये दोनों एक राशि या एक नवांश में स्थित हों और लग्न में शुभग्रहों से युतिकारक सूर्य स्थित हो।
इन सब योगों में भी मुनितुल्य आयु होती है।

इन्द्र पद प्राप्ति योग

गुरौ सकेन्द्र ससिते वृषाङ्ग शेषैस्त्रिखायारिगतैर्घहैर्वा।

वृषोद्गमे साविभवे विशेषाद्य ते सुरप्रावसुरदेशिकज्ञैः ॥१७६॥
चक्रार्द्धगैः शेषख गैरुतायें सात्मीयभेऽङ्ग विवि मे सयुग्मे।
चतुष्टये शक्रपदं समेति रसायनाचं रुत मंत्रसिद्ध्या ॥१७७॥

केन्द्र में बहस्पति हो वृष लग्न में शुक्र हो तथा शेष ग्रह तृतीय, षष्ठ, एकादश व दशम स्थान में हों। वृष लग्न में चन्द्रमा हो, विशेषतया बुध गुरु व शुक्र से युक्त हो तथा शेष ग्रह लग्न कुण्डली में पूर्वार्ध में हों।

लग्न या दशम में स्वराशिगत बृहस्पति हो और केन्द्र में मिथुन राशिगत शुक्र हो।
उक्त योगों में उत्पन्न मन्त्रसिद्धि व रसायन (औषधि) आदि के सेवन से चिरयुवा होकर समस्त सुखों को भोगकर इन्द्र पद (देवेन्द्र तुल्य गौरव) प्राप्त करता है।

आयु के विषय में विचार करते समय विद्वान दैवज्ञ को गम्भीर मननपूर्वक ही कोई निर्णय करना चाहिए। आचार्यों ने अल्प, मध्य व दीर्घ आयु के जो योग बताए हैं उनका यथोक्त फल सामान्य परि-स्थितियों में ही घटित होता है। यदि दीर्घायु योग वाला पुरुष भी हठात् व्यसनों में पड़कर, कुपथ्य करके, असवृत्त होगा तो निश्चय ही उसकी आयु पर इसका कुप्रभाव पड़ेगा।

पथ्याशिनां शीलवतां नराणां सवृत्तभाजां विजतेन्द्रियाणाम्।
एवम् विधानामिदमायुरत्न चिन्त्यं सदा वृद्धमुनिप्रणीतम्॥

(सारा० अ० ३६, श्लोक० २५)

"समुचित भोजन करने वाले, शीलवान् सदाचारी, जितेन्द्रिय मनुष्यों के सन्दर्भ में ही मुनियों द्वारा कथित दीर्घ या परमायु योग घटित होते हैं।"

युगान्त आयुष्य योग

मन्दांशकस्था रविजीवभौमा धर्मस्थितास्तन्नवभागसंस्थाः।
बलान्विता लग्नगतो हिमांशुर्युगान्तमायुः श्रियमाद्धाति ॥९७॥

लग्न में चन्द्रमा तथा शनि के नवमांश में, नवम भाव में या नवमस्थ राशि के नवमांश में बलवान् सूर्य, मंगल और बृहस्पति हों तो जातक धनवान् और युगान्त आयु का स्वामी होता है॥९७॥

होराप्रकाश-

'मन्दांशकस्था रविभौमजीवा धर्माश्रिता कर्मयुता बलाढ्याः ।
राश्यावसाने हिमगौ विलग्ने युगान्तमायुः श्रियमादधाति' ॥

मुनित्वप्रद योग

एकांशभागौ गुरुसूर्यपुत्रौ धर्मस्थितौ वा यदि कर्मसंस्थौ ।
अर्कोदये सौम्यनिरीक्ष्यमाणौ मुनिर्भवेदत्र भवश्चिरायुः ॥९८॥

एक ही अंश (नवमांश) में स्थित होकर शनि और बृहस्पति यदि नवें या दशवें भाव में स्थित हों और लग्न में सूर्य शुभग्रह से दृष्ट हो तो जातक चिरायु और तपस्वी होता है ॥९८॥

अमितायु योग

गुरुशशिसहिते कुलीरलग्ने शशितनये भृगुजे च केन्द्रयाते ।
भवरिपुसहजोपगैश्च शेषैरमितमिहायुरनुक्रमाद्विना स्यात् ॥९९॥

कर्कराशि के लग्न में बृहस्पति के साथ चन्द्रमा स्थित हो, बुध और शुक्र केन्द्रस्थ हों तथा पापग्रह (सूर्य, भौम, शनि, राहु और केतु, त्रिषाड (३।६।११वें भाव) गत हों तो गणितागत आयु के बिना ही अमित आयु कहना चाहिए ॥९९॥

देवसादृश्य योग-

त्रिकोणे पापनिर्मुक्त केन्द्रे सौम्यविवर्जिते ।
रन्द्रे पापविहीने च जातस्त्वमरसन्निभः ॥१००॥
शन्यादिभौमपर्यन्तं लग्नादौ खेचराः स्थिताः ।
वैशेषिकांशसंयुक्ता जातस्त्वमरसन्निभः ॥१०१॥

केन्द्र शुभग्रहों से और त्रिकोण पापग्रहों से मुक्त हों अर्थात् केन्द्र में पापग्रह और त्रिकोण में शुभग्रह स्थित हों तथा अष्टम भाव भी पापग्रह से हीन हो तो जातक देवता के समान होता है। अर्थात् परम दीर्घायुष्य का भोग करता है ॥१००॥

लग्नादि भावों में सभी ग्रह शनि और मंगल के मध्य स्थित हों और वे सभी वैशेषिकांश में स्थित हों तो जातक देवता के समान होता है ॥१०१॥

अमितायु योग-

मेषान्त्यलग्ने सगुरौ भृगौ वा निशाकरे गोगृहमध्यमांशे ।
सिंहासनांशे यदि वा धराजे जातस्त्वसंख्यातमुपैति मन्त्रैः ॥१०२॥

लग्न में मेष राशि का अन्तिम नवमांश हो (मेष का अन्तिम नवमांश धनुराशि का होगा) और बृहस्पति या शुक्र लग्न में स्थित हो, वृष राशि के मध्य नवांश (वृष राशि के नवांश) में चन्द्रमा स्थित हो तथा यदि भौम सिंहासनांश में स्थित हो तो जातक अनुष्ठानादि से अमितायु का भोग करता है ॥१०२॥

तापसतुल्यत्व योग-

देवलोकांशके मन्दे भौमे पारावतांशके ।
सिंहासने गुरौ लग्ने जातो मुनिसमो भवेत् ॥१०३॥

शनि देवलोकांश में, मंगल पारावतांश में और यदि बृहस्पति सिंहासनांश में स्थित हो तो जातक मुनि के सदृश होता है ॥१०३॥

युगान्तायुष योग-

गोपुरांशे गुरौ केन्द्रे शुक्रे पारावतांशके । त्रिकोणे कर्कटे लग्ने युगान्तं स तु जीवति ॥१०४॥

कर्कराशि का लग्न हो, गोपुरांशस्थ बृहस्पति केन्द्रस्थ हो, पारावतांशस्थ शुक्र त्रिकोण में स्थित हो तो युगान्त आयु होती है ॥१०४॥

ब्रह्मपद-प्राप्ति योग

चापांशे कर्कटे लग्ने तस्मिन् देवेन्द्रपूजिते । त्रिचतुर्भिग्रहैः केन्द्रे जातो ब्रह्मपदं व्रजेत् ॥१०५॥

कर्क राशि के लग्न में यदि धनु का नवमांश हो (अर्थात् लग्न ३।१६०।४०० से ३।२००१०' के मध्य हो) और बृहस्पति लग्न से संयुक्त हो तथा तीन या चार ग्रह केन्द्रस्थ हो तो जातक ब्रह्मपद (मोक्ष) प्राप्त करता है ॥१०५॥

लग्ने सेज्ये भृगौ कामे कन्यायामुडुनायके। चापे मेषांशके लग्ने जातो याति परं पदम् ॥१०६॥

धनुराशि के लग्न में मेष राशि का नवमांश हो (अर्थात् लग्नराश्यादि ८।००१०' से ८।३०।२०' के मध्य हो) तथा लग्न बृहस्पति से संयुक्त हो, सप्तम भाव में शुक्र और चन्द्रमा कन्याराशिगत हो तो ऐसे योग में उत्पन्न जातक परम पद को प्राप्त करता है ॥१०६॥

ब्रह्मसायुज्य योग
निम्नलिखत सभी योगों में मोक्ष की प्राप्ति होती है|

सिंहासने चन्द्रे पारिजाते गुरौ ऐरावते शुक्रे ब्रह्मसायुज्यम्॥ ११७॥

सिंहासनांश में चन्द्रमा, पारिजातांश में बृहस्पति तथा ऐरावतांश में शुक्र स्थित हो (११७);

अन्त्येऽशात्केतौ ब्रह्मसायुज्यम्॥ ११८॥

कारकांश लग्न से द्वादशभाव में यदि केतु हो (११८);

अंशादन्त्ये मेषचापगे शुभे ब्रह्मसायुज्यम्॥ ११९॥

कारकांश लग्न से द्वादशभाव में यदि मेष या धनुराशि के शुभग्रह स्थित हों (११९);

एकस्थानगानां चतुर्णामधिष्ठितराशीशे केन्द्रे कोणे ब्रह्म- सायुज्यम्॥ १२०॥

चार ग्रहों से युक्त राशि के स्वामी केन्द्र अथवा त्रिकोण में स्थित हों (१२०);

माने मीने सौम्ये वा भौमे ब्रह्मसायुज्यम्॥ १२१॥

दशमभाव में यदि मीन राशि का बुध या मंगल स्थित हो (१२१);

रन्धेशे याने निद्रिते वा शुभयुतदृष्टे ब्रह्मसायुज्यम्॥ १२२॥

निद्रितावस्था में अथवा शुभग्रहों से संयुक्त या दृष्ट अष्टमेश चतुर्थभावगत हो (१२२);

लग्नेशोऽङ्गे धर्मेशो धर्म रन्धेशो रन्धं पश्यति चेद्ब्रह्मसायुज्यम् ॥ १२३ ॥

लग्नेश लग्न को, नवमेश नवमभाव को, अष्टमेश अष्टमभाव को देखते हों (१२३);

नवमे केवलशुभद्वये ब्रह्मसायुज्यम् ॥ १२४ ॥

नवमभाव में केवल दो शुभग्रह स्थित हों तो ब्रह्मसायुज्य (मोक्ष) की प्राप्ति होती है ॥ ११७-१२४॥

द्रेष्काण कुण्डली के आधार पर

मेषाद्यत्र्यंशे प्लीहजो वा विषजो वा पित्तजो मध्ये जलजोऽन्त्येकूपादिपाततो मृत्युः ॥

अष्टम भाव में यदि मेष का प्रथम देष्काण हो तो पनीहा (विल्ली), पित्तज रोग अथवा विष से, द्वितीय द्रेष्काण हो तो जल से तथा तृतीय द्रेष्काण हो तो कुएं में गिरने से (१०३);

वृषादित्र्यंशे खराश्वादितो मध्ये पित्ताग्निचौरतोऽन्त्ये उच्चस्थला- श्वादितो मृत्युः ॥

अष्टमभाव में यदि वृष का प्रथम द्रेष्काण हो तो घोड़े, गधे आदि से, द्वितीय वैष्काण हो तो पित्तजरोग, अप्रि, चोर से तथा तृतीय द्रेष्काण हो तो ऊँचे स्थान से अयवा घोडे आदि से गिरने से (१०४);

युग्माद्ये वातश्वासतो मध्ये त्रिदोषादन्त्ये यानपर्वतपाततो वारणे मृत्युः ॥

अष्टमभाव में यदि मिथुन का प्रथम द्रेष्काण हो तो वातज रोग, श्वास (अस्थमा) रोग से, द्वितीय द्रेष्काण हो तो त्रिदोष के कुपित होने से तथा तृतीय द्वेष्काण हो तो यानादि से गिरने से अथवा जंगल में (१०५);

कर्काद्येऽपेयपानात्कण्टकाद्वा मध्ये विषातिसारतोऽन्त्ये महाभ्रमप्लीह- गुल्मादितो मृत्युः ॥

अष्टमभाव में यदि कर्क का प्रथम द्रेष्काण हो तो अपेय पदार्थों के पान से अथवा काँटों से, द्वितीय देष्काण हो तो विष अथवा अतिसार से तथा तृतीय द्रेष्काण हो तो चक्कर, प्लीहा, गुल्मादि के रोग से (१०६);

सिंहाद्ये विषाम्बुरोगेण मध्ये श्वसनाम्बुरोगेणान्त्ये यानपीडाविषशस्त्रेण मृत्युः ॥

अष्टमभाव में यदि सिंह का प्रथम द्रेष्काण हो तो विषाक्त जल के उपयोग से, अथवा द्वितीय द्रेष्काण हो तो जलोदर आदि रोग से तथा तृतीय द्रेष्काण हो तो यानपीडा, विष या शस्त्राघात से (१०७);

कन्याद्ये वातमस्तकरोगेण मध्ये दुर्गाद्रिपातान्नृपकोपतोऽन्त्ये खरोष्ट्र- शस्त्राम्बुपाततो मृत्युः ॥

अष्टमभाव में यदि कन्या का प्रथम द्रेष्काण हो तो वायुप्रकोप, मस्तिष्क-विकारादि से, द्वितीय द्रेष्काण हो तो दुर्ग, पर्वत आदि से गिरकर अथवा राजकोप से तथा तृतीय द्रेष्काण हो तो गदहे अथवा ऊँट से अथवा जल में गिरकर, शस्त्राघात से (१०८);

तुलाद्ये पतनात्स्त्रीतः पशुतो मध्ये जठररोगेणान्त्ये व्यालजला- न्मृत्युः ॥

अष्टमभाव में यदि तुला का प्रथम द्रेष्काण हो तो गिरने से, स्त्री या पशु के कारण, द्वितीय द्रेष्काण हो तो उदरविकार से तथा तृतीय द्रेष्काण हो तो सर्प से अथवा जल में (१०९);

अल्याद्ये विषशस्त्रतो मध्ये भारश्रयामाद्वा कटिवस्तिरोगतोऽन्त्ये लोष्ट- काष्ठपाषाणतो मृत्युः ॥

अष्टमभाव में यदि वृश्चिक का प्रथम द्रेष्काण हो तो विष से अथवा शस्त्राघात से, द्वितीय द्रेष्काण हो तो भारवाहन से, कमर या पेडू में रोग से तथा तृतीय द्रेष्काण हो तो पाषाणखण्ड या लकड़ी के आघात से (११०);

चापाद्ये वातगुदामयान्मध्ये विषबाणाभ्यामन्त्ये जलजलचार्युदराम- यान्मृत्युः ॥

अष्टमभाव में यदि धनु का प्रथम द्रेष्काण हो तो वातरोग अथवा गुदारोग से, द्वितीय द्रेष्काण हो तो विष से अथवा बाण से तथा तृतीय द्रेष्काण हो तो जल से अथवा जलवारी जीवों से एवं उदरविकार से (१११);

मृगाद्ये सिंहवराहवृश्चिकतो मध्ये भुजङ्गतोऽन्त्ये चौराग्निशस्त्रज्वरतः मृत्युः ॥

अष्टमभाव में यदि मकर का प्रथम द्रेष्काण हो तो सिंह, वराह या बिच्छू से, द्वितीय द्रेष्काण हो तो सर्पदंश से तथा तृतीय द्रेष्काण हो तो चोर, अग्नि, शस्त्राघात या ज्वरादि से (११२);

जातकताचे कुम्भा जोरव्याधितो मध्ये गुहारोगादन्ये विषान्मृत्युः ॥

अष्टमभाव में यदि कुम्भ का प्रथम द्रेष्काण हो तो स्त्री, पुत्र या उदरविकार से, द्वितीय द्रेष्काण हो तो गुह्यरोग से तथा तृतीय द्रेष्काण हो तो विष के द्वारा (११३);

भीताये ग्रहणीप्रमेहगुल्मजो मध्ये जलोदरगजग्राहतो नीप्रभेदादो कुरोगान्मृत्युः ॥

अष्टमभाव में यदि मीन का प्रथम द्रेष्काण हो तो संग्रहणी रोग, प्रमेह एवं गुल्मज रोग से, द्वितीय द्रेष्काण हो तो जलोदर, जलचर या जल में गिरने से तथा तृतीय द्रेष्काण हो तो महामारी आदि दुष्टरोगों से मृत्यु होती है ॥ १०३-११४॥

बोध प्रश्न

1. देवतुल्य आयु का योग कैसे बनता है |
2. मुनि तुल्यायु योग कैसे बनता है |
3. इन्द्र पद प्राप्ति योग कैसे बनता है |
4. युगान्तायुष योग कैसे बनता है |
5. देवसादृश्य योग कैसे बनता है |

5.5 सारांश

प्रस्तुत इकाई को पड़ने के पश्चात आप यह जान सके होंगे कि अमितायु किसे कहा जाता है, यह योग किस आधार पर व किन-किन ग्रहों कि युति या दृष्टि से इसका निर्माण होता है | इस इकाई में आपने देवतुल्य आयु के योग , इन्द्र पद, ब्रह्मपद-प्राप्ति योग, ब्रह्मसायुज्य योग, देवसादृश्य योग आदि योगों के बारे में जान पाए होंगे| इसके अलावा भी द्रेष्काण कुण्डली के आधार पर किस प्रकार से अमितायु योग के द्वारा मोक्ष कि प्राप्ति होती है| चतुर्थ या दशम स्थान में कर्क राशि में चन्द्रमा व वृहस्पति की स्थिति हो अर्थात् मेष लग्न या तुला लग्न में जन्म हो और कर्क में चन्द्र- गुरु हों। सूर्य एवं बुध तुला राशि में स्थित हों एवं ३, ६, ११ स्थानों में शेष ग्रह हों। बृहस्पति व मंगल अपनी उच्च राशि में स्थित हो, तुला राशि में शुक्र हो, चन्द्रमा धनु राशि में हो तो उक्त सभी योगों में अमितायु योग होता है एवं साथ ही राज योग भी होता है। इस प्रकार से अमितायु योग को आप समझने में सक्षम हो सके होंगे|

5.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. केन्द्र में कोई शुभ ग्रह न हो, त्रिकोण व अष्टम में पापग्रह न हों।
2. चन्द्रमा देवलोकांश में हो, लग्न में सूर्य सिहासनांशगत हो और मंगल पारावतांश में हो

3. केन्द्र में बहस्पति हो वृष लग्न में शुक्र हो तथा शेष ग्रह तृतीय, षष्ठ, एकादश व दशम स्थान में हों।
4. गोपुरांशे गुरौ केन्द्रे शुक्रे पारावतांशके । त्रिकोणे कर्कटे लग्ने युगान्तं स तु जीवति|

5. केन्द्र में पापग्रह और त्रिकोण में शुभग्रह स्थित हों तथा अष्टम भाव भी पापग्रह से हीन हो तो जातक देवता के समान होता है।

5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

वृहज्जातकम् - चौखम्भा प्रकाशन
वृहत्पराशरहोराशास्त्र - चौखम्भा प्रकाशन

ज्योतिष सर्वस्व – चौखम्भा प्रकाशन
चमत्कार चिंतामणि- चौखम्भा प्रकाशन
भावप्रकाश - चौखम्भा प्रकाशन
सरावली- चौखम्भा प्रकाशन
मानसागरी- चौखम्भा प्रकाशन
जातक पारिजात
फलदीपिका
आयुर्निर्णयः

5.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. अमितायु योग का विस्तृत वर्णन कीजिए|
2. द्रेष्काण कुण्डली के आधार पर योगों का वर्णन कीजिए|
3. ज्योतिष शास्त्र में अमितायु योग का विचार कैसे किया जाता है। स्पष्ट कीजिये।